ज्ञान शांति मैत्री

महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय

(संसद द्वारा पारित अधिनियम 1997, क्रमांक 3 के अंतर्गत स्थापित केंद्रीय विश्वविद्यालय)

Mahatma Gandhi Antarrashtriya Hindi Vishwavidyalaya

(A Center University Established by Parliament by Act No. 3 of 1997)

एम.बी.ए. पाठ्यक्रम

पाठ्यक्रम कोड : MBA - 001

तृतीय सेमेस्टर

पाठ्यचर्या कोड : MS – 420

पाठ्यचर्या का शीर्षक : शोध के मूल आधार

दूर शिक्षा निदेशालय

महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय

पोस्ट- हिंदी विश्वविद्यालय, गांधी हिल्स, वर्धा - 442001 (महाराष्ट्र)

प्रथम सेमेस्टर – एमबीए 420 शोध के मूल आधार

मार्ग निर्देशन समिति

प्रो. गिरीश्वर मिश्र
कुलपति, म.गां.अं.हिं.वि.वि., वर्धा

प्रो. आनंद वर्धन शर्मा
समकुलपति, म.गां.अं.हिं.वि.वि., वर्धा

संपादक

प्रो. अरबिंद कुमार झा
निदेशक, दूर शिक्षा निदेशालय,म.गां.अं.हिं.वि.वि., वर्धा

मनोज कुमार चौधरी
पाठ्यक्रम संयोजक : एमबीए, दूर शिक्षा निदेशालय, म.गां.अं.हिं.वि.वि.,वर्धा
सहायक प्रोफेसर, प्रबंधन विद्यापीठ, म.गां.अं.हिं.वि.वि.,वर्धा

संपादक मंडल

डॉ. रवीन्द्र टी. बोरकर
सह प्रोफेसर एवं क्षेत्रीय निदेशक,
दूर शिक्षा निदेशालय, म.गां.अं.हिं.वि.वि.,वर्धा

डॉ. ए. के. जे. मंसूरी
जी. एस.कॉलेज ऑफ कॉमर्स, वर्धा

डॉ. राम ओ. पंचारिया
बी.डी. कॉलेज ऑफ इंजीनियरिंग, सेवाग्राम

श्री अनुभव नाथ त्रिपाठी
सहायक प्रोफेसर, प्रबंधन विद्यापीठ, म.गां.अं.हिं.वि.वि.,वर्धा

प्रकाशक :
कुलसचिव, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा
पोस्टः हिंदी विश्वविद्यालय, गांधी हिल्स, वर्धा, महाराष्ट्र – 442001

पाठ्यक्रम परिकल्पना, संरचना एवं संयोजन
मनोज कुमार चौधरी
पाठ्यक्रम संयोजक : एमबीए, दूर शिक्षा निदेशालय, म.गां.अं.हिं.वि.वि.,वर्धा
सहायक प्रोफेसर, प्रबंधन विद्यापीठ, म.गां.अं.हिं.वि.वि.,वर्धा

इकाई लेखन
डॉ. भीमराव एकनाथ गोटे
शिक्षा विद्यापीठ,
म.गां.अ.हि.वि.वि., वर्धा

कार्यालयीन एवं मुद्रण सहयोग
श्री विनोद वैद्य
सहायक कुलसचिव, दूर शिक्षा निदेशालय, म.गां.अं.हिं.वि.वि.,वर्धा

श्री. महेंद्र प्रसाद
सहायक संपादक, दूर शिक्षा निदेशालय, म.गां.अं.हिं.वि.वि.,वर्धा

सुश्री राधा ठाकरे
टंकक, दूर शिक्षा निदेशालय, म.गां.अं.हिं.वि.वि.,वर्धा

ज्ञान शांति मैत्री

महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय

(संसद द्वारा पारित अधिनियम 1997, क्रमांक 3 के अंतर्गत स्थापित केंद्रीय विश्वविद्यालय)

Mahatma Gandhi Antarrashtriya Hindi Vishwavidyalaya

(A Central University Established by Parliament by Act No. 3 of1997)

विषय कोड: MS 420 **क्रेडिट्स:** 4 क्रेडिट

विषय का नाम: शोध के मूल आधार (Fundamentals of Research)

पाठ्यक्रम के उद्देश्य:

- विद्यार्थियों को शोध की बुनियादी अवधारणाओं को समझने में सक्षम करना।
- विश्लेषण के लिए डेटा संग्रहण उपकरणों, प्रतिदर्शन और डेटा तैयार करने के लिए विद्यार्थियों को सक्षम करना।
- विद्यार्थियों को शोध तकनीकों के उपयोग को समझने में सक्षम करना: कहां तकनीक का उपयोग करें और क्यों।

मूल्यांकन के मानदंड:

1. सत्रांत परीक्षा : 70 %
2. सत्रीय कार्य : 30 %

पाठ्यक्रम सामग्री:

इकाई – I: विज्ञान और शोध (Science and Research)

- विज्ञान का अर्थ (Meaning of Science)
- अनुसंधान का अर्थ (Meaning of Research)
- अनुसंधान की विशेषताएँ (Characteristics of Research)
- अनुसंधान के क्षेत्र (Scope of Research)
- अनुसंधान प्रक्रिया के पदक्रम (Steps of Research Process)

इकाई – II: अनुसंधान के प्रकार (Types of Research)

- अनुसंधान का वर्गीकरण (Classification of Research)
- अनुसंधान के प्रकार: स्वरूपानुसार शोध प्रकार (Types of Research)
- अनुसंधान के प्रकार: प्रक्रियानुसार शोध प्रकार (Types of Research)
- अनुसंधान के प्रकार: आधार सामग्रीनुसार शोध प्रकार (Types of Research)

इकाई – III: शोध विधियां/पद्धति (Research Methods)

- शोध विधियों का वर्गीकरण (Classification of Research Methods)
- शोध विधियों के प्रकार: ऐतिहासिक शोध विधियां (Types of Research Methods: Historical Research Methods)
- शोध विधियों के प्रकार: वर्णनात्मक शोध विधियां (Types of Research Methods: Descriptive Research Methods)
- शोध विधियों के प्रकार: प्रयोगात्मक शोध विधियां (Types of Research Methods: Experimental Research Methods)

इकाई – IV: जनसंख्या, प्रतिदर्श, शोध प्रस्ताव एवं रूपरेखा (Population, Sample, Research Proposal and Synopsis)

- जनसंख्या का अर्थ एवं प्रकार (Meaning and Types of Population)
- प्रतिदर्श का अर्थ एवं स्वरुप (Meaning and Forms of Sample)
- प्रतिदर्शन विधि के प्रकार (Types of Sampling Method)
- शोध रूपरेखा का अर्थ एवं स्वरूप (Meaning and Forms of Research Proposal)
- शोध रूपरेखा का वर्गीकरण/प्रकार (Types of Research Proposal)

इकाई – V: शोध प्रलेख एवं प्रदत्त सामग्री संकलन के उपकरण (Research Report and Tools for Data Collection)

- शोध कार्य एवं प्रलेखन के पदक्रम (Steps of Research Work and Research Report)
- शोध प्रलेखन का तकनीक एवं स्वरूप (Techniques and Forms of Research Report)
- प्रदत्त सामग्री के उपकरण: स्वनिर्मित उपकरण एवं पूर्वनिर्मित उपकरण (Tools of Data Collection: Self made Tools and Prefabricated Tools)

सम्बन्धित पुस्तकें:

- प्रसाद के. एल. (2009), अनुसंधान पद्धतिशास्त्र, कावेरी बुक्स, नई दिल्ली.
- सिंह के. ए. (2017), मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ, मोतीलाल बनारसीदास, नई दिल्ली.
- आहूजा आर. (2015), सामाजिक अनुसंधान, रावत पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली.
- Best J.W. (1999). Research in Education, New Delhi: Prentice Hall of India Pvt. Ltd.

इकाई 1 विज्ञान और शोध

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य
1.1 प्रस्तावना
1.2 विज्ञान का अर्थ
1.3 अनुसंधान का अर्थ
1.4 अनुसंधान की विशेषताएँ
1.5 अनुसंधान के क्षेत्र
1.6 अनुसंधान प्रक्रिया के पदक्रम
1.7 सारांश
1.8 बोध प्रश्न
1.9 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

1.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप :

- ।
- ।
- ।

1.1 प्रस्तावना

कुछ दशक पहले आधुनिक युग को 'विज्ञान युग' से जाना जाता था; परंतु आज इस युग को 'संगणक युग' (computer age) के नाम से जाना जाता है। संपूर्ण विश्व में ऐसे अनेक परिवर्तन सदियों से होते आ रहे है, हो रहे है और होते रहेंगे। क्योंकि यह संपूर्ण विश्व परिवर्तनशील है। परिवर्तशीलता ही इस विश्व की प्रमुख विशेषता है। परिवर्तन दो प्रकार के होते है; एक अच्छा और दूसरा हानिकारक। दोनो प्रकार के परिवर्तन या तो निसर्ग निर्मित अथवा प्राकृतिक होते है या कुछ परिवर्तन मनुष्य निर्मित भी होते है। कुछ परिवर्तन ज्ञात होते है; तो कुछ अज्ञात भी होते है। इन अज्ञात कारणों को ज्ञात करने का कार्य ही शोध कार्य है; जिसे अनुसंधान भी कहा जाता है। इन्ही बातों को जानने समझने के लिए मनुष्य निरन्तर अनुसंधानरत् रहा है।

यह ब्रहमाण्ड बहुत विशाल है। इतना विशाल की; जिसका कोई अंत नही। इसीलिए उसे 'अनंत' कहते है। इस ब्रहमाण्ड में अवस्थित हम जिस पृथ्वी पर रहते है; वह हमारे सौर मण्डल अन्य ग्रहों की तरह एक ग्रह मात्र है; जिस पर अनेक सजीव, पशु, पंछी; जंतु आदि जीव रहते है। उन सभी जीव–जंतुओं की संख्या भी अनंत है। इस अनंत विश्व मे मनुष्य एक अत्यंत छोटा सा प्राणी मात्र है। मनुष्य भले ही एक छोटा सा प्राणी हो; परंतु वह अपनी जिज्ञासा की पुर्ति करने का हर संभव प्रयास करता हैं। इसीलिए वह अपने जीवन मे विकासोन्मुख रहता है। बिजली चमकती है; क्यों? वर्षा होती है; क्यों? तुफान आता है। क्यों? भूकंप (भूचाल) होता है; क्यों? कोई समस्या उत्पन्न हुई है; क्यों? इस क्यों का उत्तर जानने और समझने के लिए ही शोध करने की आवश्यकता होती है। इस क्यों का उत्तर प्राप्त करने हेतु मनुष्य अध्ययन करता है; विज्ञान का अध्ययन हर कोई कर सकता है; पंरतु शोध या अनुसंधान हर कोई नही कर सकता। इस लिए शोधकर्ताओं की संख्या अत्यंत सीमित होती है। शोधकर्ताओं की संख्या भले ही सीमित हो; लेकिन शोध किए जाने के बाद उसका अध्ययन करने वालों की संख्या बहुत अधिक होती है। इससे हम स्पष्ट रूप से यह कह सकते है; की 'अनुसंधान पर ही विज्ञान निर्भर है।' परंतु शोध कार्य भी तो विज्ञान की सहायता से ही किया जाता है। बिना विज्ञान के अनुसंधान करना भी तो असंभव है। इससे यह प्रतीत होता है; की अनुसंधान भी विज्ञान पर निर्भर होता है। अतः शोध और विज्ञान दोनो ही एक दूसरे पर निर्भर है। अथवा 'दोनो ही एक दूसरे के बिना अपूर्ण है'; व्यावहारिक जीवन में कभी कभी सुनने को मिलता है; की 'जहां विज्ञान समाप्त होता है; वहां अध्यात्म शुरू होता है।' परंतु यह सच नही। हां ऐसा कह सकते है की 'जहां विज्ञान समाप्त होता है; वहां अध्यात्म नही बल्कि शोध शुरू होता है'। इसीलिए विज्ञान और शोध दोनो का अर्थ इसी दृष्टिकोण से समझना अत्यंत आवश्यक है।

विज्ञान का अर्थ

विज्ञान शब्द का प्रयोग सर्वत्र प्रचलित है। हमारे दैनंदिन व्यवहार मे किसी भी बात का क्रमबद्ध, तर्कशुद्ध एवं व्यवस्थित अध्ययन को ही विज्ञान कहा जाता है। विज्ञान किसी भी विषय वस्तु, पदार्थ तथा परंतु ज्ञान को अध्ययन करने का एक सूत्रबद्ध तरीका है। अन्य शब्दों में खोजी गयी बातों को जानने के लिए उसका तर्कशुद्ध एवं व्यवस्थित अध्ययन करने की तथा उसे समझने की प्रक्रिया को विज्ञान कहते है। विज्ञान की परिभाषा एवं अर्थ अनेक विद्वानों ने स्पष्ट किया है। कुछ निम्नलिखित है।

कार्ल पिअरसन 'The Grammer of Science' मे कहते है की; 'संपूर्ण विज्ञान की एकता मात्र उसकी पध्दति मे ही है; न की विषय वस्तु मे'।[1]

स्टुअर्ट चेस (Stuart Chase) 'The Proper Study of Mankind' मे लिखा है की; 'विज्ञान का संबंध पद्धति से है; विषय वस्तु से नही।'[2]

वेनबर्ग और शाबत (Weinberg & Shabat) ने 'Society and Man' मे लिखा है की; 'विज्ञान एक विश्व की ओर देखने की विशिष्ट पद्धति है।'[3]

वुल्फ (Wolf) ने विज्ञान की परिभाषा तीन मुद्दों के आधार पर की है। सामान्य व्यवस्था/स्थिति, आलोचनात्मक विभेदीकरण तथा अनुभवात्मक मूल्यांकन इन तीन मुद्दों के आधार पर वुल्फ ने 'Essentials of Scientific Methods' मे लिखा है की 'विज्ञान एक विशिष्ट प्रकार के सैद्धांतिक ज्ञान का शिक्षण है।'[4]

लीन स्मिथ (Lean Smith) ने कहा है की; 'प्रश्न यह नही है कि; विज्ञान क्या है; और क्या नही; बल्कि विज्ञान का अर्थ, किसी विषय के अध्ययन मे वैज्ञानिक पध्दति का प्रयोग किया अथवा नही? है।'[5]

बर्नाड (L. L. Bernad) द्वारा लिखीत 'Fields and Methods of Sociology' इस पुस्तक मे कहा गया है की, 'परीक्षण, सत्यापन, विवेचन, वर्गीकरण तथा परिस्थितिनुरूप पुर्वानुमान एवं व्यावहारिक उपयोग की विशेषताओं के आधार पर विज्ञान को समझ सकते है।'[6]

विज्ञान की उपर्युक्त अर्थ एवं परिभाषाओं से यह ज्ञात होता है कि; अधिकांश विद्वानों ने विज्ञान की व्याख्या एक पध्दति या प्रक्रिया के रूप में ही की है। जिसे एक दृष्टीकोण की प्रणाली भी कह सकते है। अर्थात 'विज्ञान केवल एक विशिष्ट एवं क्रमबध्द कार्य पद्धति का उपयोग करने की प्रक्रिया एवं विधि मात्र है'; इन बातों के सन्दर्भ में विज्ञान की कुछ विशेषतायें सामने आती है। विज्ञान मे पक्षपात रहित अवलोकन, वर्गीकरण, सामान्यीकरण, कारणमीमांसा, प्रत्यक्ष प्रमाण, सार्वत्रिकता, तार्किक विवेचन, क्रमबध्दता, ज्ञान संचय, निरंतरता आदि मुद्दों का अंतर्भाव किया जाता है।

अनुसंधान का अर्थ (Meaning of Research)

अनुसंधान शब्द के अनेक पर्यायवाची शब्द यथा–अविष्कार, जॉच, शोध, खोज, संशोधन, अन्वेषण, (Search, Research, Investigation, Discovery,....) आदि है। इन सभी शब्दों में परस्पर साम्य होने के कारण उनका अर्थ भी समान है; ऐसा आम तौर पर समझा

जाता है। परंतु इन सभी शब्दों का प्रयोग भिन्न भिन्न संदर्भ मे अलग–अलग किया जाना समीचीन होगा। यहाँ हमे केवल शोध, अनुसंधान या Research इन शब्दोंका अर्थ समझना आवश्यक है। जैसे की पहले ही कहा जा चुका है; शोध ही अनुसंधान है; अंग्रजी में जिसे 'Research' कहते है। इस शब्द को हम व्यावहारिक भाषा में 'खोज' भी कहते है। वैसे 'Research' भी दो शब्द को मिलकर बनता है। 'Re + Search'. Re का अर्थ पुनः तथा Search का अर्थ खोज अथवा शोध होता है। अर्थात बार बार या निरंतर शोध ही अनु संधान है। परंतु यह शब्दार्थ है। अतः इसका परिपूर्ण अर्थ समझने के लिए कुछ विद्वानों द्वारा बतायी गयी परिभाषाएं निम्नलिखित है।

जॉन बेस्ट; (John W. Best-2009) : "Research is considered to be more formal, systematic and intensive process of carrying on the scientific method of analysis. It involves a more systematic structure of investigation usually resulting in some sort of formal record of procedures and a report of results or conclusions". 7

सी. आर. कोठारी (C. R. Kothari-1993) "The search for knowledge through objectives and systematic method of finding solution to a problem in research".8

सी. सी. क्रॉफोर्ड (C. C Crawford-1986) "Research is a systematic and refined technique of thinking, employing specialized looks, instruments and procedures in order to obtain a more adequate solution of problem that would be possible under ordinary means".9

एफ. एन. कर्लिंगर (F. N . Kerlinger - 1978) "Scientific research is a systematic controlled empirical and article in restigation of hypothetical proposition about the pressured relation among natural phenomenon". 10

पी. एम. कूक (P. M Cook-1979) "Research is an honest exhaustive, intelligent searching for facts and their meanings and implication with reference to a given problem".11

जॉर्ज जी. मौले (George G. Mouly - 1977) "Any systematic study designed to promote the development of education as a science can be considered

educational research. Research essentially a state of mind, a friendly, welcoming attitude toward change. Research is a careful inquiry."[12]

'The New Century Dictionary' के अनुसार "किसी वस्तुविशेष के बारे में सावधानी पूर्वक किया गया अन्वेषण अथवा किसी तथ्यों एवं सिध्दांतो के निर्माण हेतु किया गया अन्वेषण अथवा जॉच को अनुसंधान कहा गया है।"[13]

लुन्डबर्ग (Lundberg) ने 'Social Research' में लिखा है कि; "अवलोकित सामग्री का संभावित वर्गीकरण एवं सामान्यीकरण करते हुए सत्यापन के लिए पर्याप्त कर्म विषयक एवं व्यवस्थाबध्द पध्दति अनुसंधान है।"[14]

स्टिफन्सन एवं डोनॉल्ड (Stephenson & Donald) ने 'Encyclopaedia of Social Science' म कहा है की; "वस्तुएं, धारणाएं अथवा प्रतीकों की ज्ञान वृध्दि, प्रामाणिकता एवं सत्यता के सामान्यीकरण के उद्देश्य से किया गया अपक्षपातपूर्ण कार्य अनुसंधान है; जिसके द्वारा प्राप्त किया गया ज्ञान किसी सिध्दांत निर्मिति या कला अध्ययन में उपयुक्त हो।"[15]

स्पार एवं स्वेन्सन (Spahr & Swenson) ने 'Methods and status of Scientific Research' म कहा है की; "कोई भी विद्वत्तापूर्ण खोज सत्य और तथ्य निधारित करने के लिए उपयुक्त हो; अनु संधान है।"[16]

स्मॉल (Small) ने 'Some Researches in to Reseach' में कहा है की; "अनुसंधान केवल वस्तुओं को खोजने का प्रयास है।"[17]

ग्रीन वुड (Greenwood) ने 'Social Work Research' में कहा है की; "ज्ञान की खोज मे प्रमाणीकृत कार्य विधि का प्रयोग करना अनुसंधान है।"[18]

रेडमॅन एवं मोरी (Redman & Mory) ने 'The Romance of Research' में कहा है की; "नये ज्ञान को प्राप्त करने हेतु किया गया व्यवस्थित प्रयत्न अनुसंधान है।"[19]

फ्रेडरीक ऑस्टिन ऑग ने 'Research in Humanistic and social science' मे कहा है की; ",,,, अनुसंधान मे सफलता मिलती है या नही, जो कुछ पहले से ज्ञान है; उसमे कुछ जोडता है या नही; इसका कोई महत्व नही। किंतु इतना पर्याप्त है; की अनुसधांन का उद्देश्य अज्ञात तत्थों की खोज करना है, नवीन प्रवाह निर्माण करना है; या कुछ परिवर्तन करना है।"[20]

उपर्युक्त सभी परिभाषाओं के आधार पर अनुसंधान का पर्याप्त अर्थ इस तरह बताया जा सकता है कि; यह नवीन ज्ञान खोजने की दिशा मे किए जाने वाले पूर्व नियोजित परंतु सुव्यवस्थित प्रक्रिया है।

अर्थात 'नवीन ज्ञान खोजनेकी दिशा मे अथवा मानवीय समस्या का समाधान खोजने की दिशा मे अथवा अज्ञान खोजनेकी दिशा मे, अथवा अज्ञात/अनाकलनीय बातों का रहस्य जानने/समझने के लिए अथवा सत्य की खोज करने के लिए किए जाने वाली वैज्ञानिक प्रक्रिया को अनुसंधान कह सकते है।'

अनुसंधान की विशेषतायें

उपर्युक्त सभी परिभाषाओं के आधार पर अनुसंधान की कुछ विशेषताएं निम्नांकित है।

- अनुसंधान कार्य एक निरंतर चलने वाली वैज्ञानिक प्रक्रिया है ।
- अनुसंधान का मुख्य हेतु अज्ञात सत्य या रहस्य को ज्ञात कराना, नवीन ज्ञान खोजना, विद्यमान ज्ञान में बढ़ोतरी करना, नये तथ्य अथवा सिद्धांत प्रस्थापित करना; या उसमे संशोधन (amendment) करना अथवा मानवीय समस्या के कारणों का पता लगाकर उसके समाधान जानना आदि में से कोई भी एक या अधिक हो सकते है।
- अनुसंधान की निश्चित काल मर्यादा नही होती है; और ना ही होनी चाहिए
- अनुसंधान एक निरंतर चलने वाली व कभी समाप्त न होने वाली प्रक्रिया है।
- अनुसंधान कार्य में कम से कम दो चरों (variables) का होना अनिवार्य है।
- अनुसंधान कार्य में एक ही समस्या का भिन्न भिन्न दृष्टिकोन से या उदेश्यों से अध्ययन किया जाता है। जैसे; दो चरों मे तुलनात्मक अध्ययन करना, या सहसंबंधात्मक अध्ययन करना, कार्य विश्लेषण, विकासात्मक अथवा मूल्यांकनात्मक अध्ययन करना।
- अनुसंधान कार्य में वस्तुनिष्ठता (Objectivity), तार्किकता (Rationality / Logicality), निश्चितता (Definiteness) विश्वसनीयता (Reliability), सत्यापनशीलता (Verifiability), सामान्यता (Generality), सैद्धांतीकरण (Theorization), भविष्यकथन (Prediction) इत्यादि बातों का होना आवश्यक समझा जाता है।
- अनुसंधान के द्वारा प्राप्त ज्ञान को वैज्ञानिक या सैद्धांतिक ज्ञान कहा जाता है।
- अनुसंधान द्वारा प्राप्त ज्ञान सिद्धांतों का पुनर्परीक्षण करना संभव होता है।

अनुसंधान के क्षेत्र (Areas of Research)

वास्तव मे वैश्विक ज्ञान (universal knowledge) की कोई सीमा नही होती। जैसे सागर मे आकर मिलने वाली नदियों का पानी कौन से नदी का है; यह बताना असंभव है; ठीक उसी प्रकार ज्ञान को भी हम अलग अलग नही कर सकते। फिर भी मनुष्य ने वैश्विक ज्ञान को अपनी सुविधानुसार अध्ययन करने के लिए उसे अलग अलग विषयों मे विभाजित कर दिया और अनेक विषयों की सीमाएँ निश्चित की पुनः उसी के आधार पर प्रत्येक विषय के अध्ययन का क्षेत्र निश्चत किया। उन सभी विषयों एवं उप विषयों को ही अनुसंधान के विभिन्न क्षेत्र कहा जा सकता है। अतः अनुसंधान के विभिन्न क्षेत्र जानने से पहले वैश्विक ज्ञान का वर्गीकरण समझना आवश्यक होगा। संपूर्ण वैश्विक ज्ञान का वर्गीकरण तीन भागों मे किया जा सकता है। जो निम्नलिखित है–

वैश्विक ज्ञान

(Universal Knowledge)

1) गणितीय विज्ञान 2) प्राकृतिक विज्ञान 3) मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान

Mathematical Sci. Natural Sciences Humanities and Social Sciences

1) गणितीय विज्ञान (mathematical sciences) :

इसमे अंक गणित (Arithmatics), बीजगणित (Algebra), भूमिती ज्यामीति (Geometray), सख्यांशास्त्र (Statistics) आदि विषयों का समावेश होता है। अर्थात् यही विषय गणितीय विज्ञान के अनु संधान के क्षेत्र बन सकते है। गणितीय विज्ञान के हर एक विषय अथवा उसके उपविषय के अतंर्गत आने वाली समस्याएँ सुलझाने हेतु जो अनुसंधान किया जाता है; उन सबको गणितीय अनुसंधान का अध्ययन क्षेत्र कह सकते है।

2) प्राकृतिक विज्ञान (natural Sciences) :

इसके अन्तर्गत भौतिक शास्त्र (Physics), रसायन शास्त्र (Chemistry), जीव शास्त्र (Biology), प्राणी शास्त्र (Zoology), वनस्पति शास्त्र (Botony) आदि विषय तथा उनके उप विषय; अध्ययन के भिन्न भिन्न क्षेत्र है। अतः इन विषयों तथा उनके उप विषयों को अनुसंधान के अभ्यास विषय अथवा क्षेत्र भी कह सकते है।

3) मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान (Humanities and Social Sciences) :

वैश्विक ज्ञान के इस वर्ग में मानविकी से सम्बन्धित विषयों जैसे–समाजशास्त्र (Sociology), इतिहास (History), अर्थशास्त्र (Economics), दर्शनशास्त्र (Philosophy), राजनीतिशास्त्र (Political Science), भूगोल (Geography), भाषा विज्ञान (Linguistics), वाङमय (Literature), मनोविज्ञान (Psychology), शिक्षणशास्त्र (Educational Science), वाणिज्य (Commerce), आदि विषयों का समावेश होता है। इन सभी सामाजिक विज्ञान के विभिन्न विषयों को सामान्य तौर पर मुख्य विषय कहा जाता है तथा इन सभी मुख्य विषयों को भी उपविषयों मे विभाजित किया जाता है। सामान्यतः उच्च शिक्षा मे किसी भी एक विषय का उप विषयों मे वर्गीकरण करते हुए उनके विभिन्न अंगो का स्वतंत्र अभ्यास एवं अध्ययन किया जाता है।

उदा.1.–वाणिज्य विषय मे व्यापार प्रबंघन (Business Management), लेखाकर्म (Accountomy), लेखा परीक्षण (Auditing) आदि उपविषयों का स्वतंत्र अभ्यास किया जाता है; उन सभी स्वतंत्र विषय एवं उपविषय के क्षेत्र में आने वाली समस्याओं के अध्ययन को तत्संबंधित विषय का अनुसंधान क्षेत्र कहा जाता है। इस प्रकार एक विषय के जितने अधिक उपविषय उतने उस विषय के अनुसंधान क्षेत्र माने जायेंगे।

उदा.2.–शिक्षा विज्ञान मे भी शैक्षिक तत्वज्ञान, शैक्षिक समाजशास्त्र, शैक्षिक प्रशासन, शैक्षिक मनोविज्ञान, अध्यापन पद्धति, शैक्षिक तकनीकी, प्रौढ शिक्षा, शारीरिक शिक्षण, विकलांग शिक्षा, उच्च शिक्षा, माध्यमिक शिक्षा, प्राथमिक शिक्षा, जनसंख्या शिक्षा, पर्यावरण शिक्षा,... आदि विषय, उपविषय शिक्षा विज्ञान के अभ्यास विषय माने जाते है तथा यही उनके अनुसंधान क्षेत्र बनते है। अर्थात अनुसंधान अघ्ययन के लिए चुनी गयी समस्या जिस विषय अथवा उपविषय से संबंधित होगी; वही उसका क्षेत्र होगा।

उक्त सभी प्रकार के वैश्विक ज्ञान का वर्गीकरण घ्यान मे लेते हुए अपने अपने अभ्यास विषय के उपविषय से संबंधित किसी एक विशिष्ट समस्या पर जब अनुसंधान कार्य होता है; तब उसे उस विशिष्ट उपविषय का नाम देकर उसको ही अनुसंधान क्षेत्र कहा जा सकता है। अर्थात जिस विषय के जितने अधिक उपविषय और उप विभाग होंगे;

उतने ही उसके अनुसंधान क्षेत्र हो सकते है। अनुसंधान कर्ता जब किसी एक विशिष्ट समस्या का चयन करता है तब स्वयं उसे ही अपना अभ्यास क्षेत्र निर्धारित करना चाहिए कि, चयनित समस्या किस उपविषय से संबंधित है, और उसका क्षेत्र क्या है ?

अनुसंधान प्रक्रिया के पदक्रम (steps of research process)

प्रत्येक अनुसंधान कर्ता के समक्ष सबसे पहले यह प्रश्न उपस्थित होता है कि अनुसंधान कार्य का प्रारंभ कहां से करें? इस प्रश्न का उत्तर समझने के लिए इससे पूर्व अनेक विद्वानों ने अपने अपने सुझाव दिये है; जो विभिन्न लेखकों द्वारा अपनी अपनी पुस्तकों मे उद्धृत किए है। उनका अवलोकन करने से यह ज्ञात होता है कि; उनमे समानता नही। फिर भी उन सबके योगदान को नजर अंदाज नही किया जा सकता। उन विद्वानों मे अगस्त कॉम्टे, लुण्ड बर्ग, पी. व्ही. यंग, एफ. एन. कर्लिंगर, आलगेला डार्नर, थॉमसन आदि का उल्लेख महत्वपूर्ण है। पी. व्ही. यंग के मतानुसार अनुसंधान प्रक्रिया के कम से कम चार पदक्रम और अधिकतम चाहे जितने; हो सकते है। इस संबंध मे 'Advisory committee on economic and social Research in Agriculture' ने कूल 9 पदक्रम दिये है। उक्त सभी के सुझाव समानता के आधार पर ध्यान मे लेते हुए` यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि, उनमे सामान्यता सात से नौ चरणों का जिक्र किया जा रहा है। जिसका अनुक्रम भिन्न भिन्न लोगोंने अपनी अपनी सोच के अनुसार व्यक्त किया। परंतु उपर्युक्त 'Advisory Committee' के अनुसार जो चरणक्रम अनिवार्य बताये गए वे निम्न लिखित रूप में दिये जा रहे है।

1) समस्या की तर्कसगंत परिभाषा करना।

2) संज्ञायें, इकाईयां एवं साधनों का सुस्पष्ट स्पष्टीकरण करना।

3) सामग्री संकलन का वर्गीकरण करना।

4) सामग्री का वर्गीकरण करना।

5) यथा सभंव कारणों का गणनात्मक रूप प्रस्तुत करना।

6) समग्री का संक्षेपीकरण करने हेतु सांख्यिकीय प्रकिया करना।

7) प्राप्त निष्कर्षों का सामान्यीकरण करते हुए निश्चित एवं स्पष्ट शब्दों मे प्रस्तुत करना।

8) सावधानी पूर्वक संपूर्ण विप्ताप्ति करना

9) संपूर्ण प्रक्रिया में मानवीय हस्तक्षेप या पूर्वग्रह पूर्णतया नष्ट करना

उपर्युक्त सभी विद्वानों के सुझावों का अध्ययन करते हुए ऐसा प्रतीत होता है कि, बहुतांश विद्वानों के विचार सात दशक सें भी अधिक पुराने है। मात्र उपर्युक्त 'Advisory Committee' के सुझाव नये हो सकते है। वर्तमान मे लिखी गयी अधिकांश पुस्तकों मे 70 साल के पूर्व लेखकों के विचारों की ही पुष्टि की जा रही है। कुछ नयी संकल्पनाओं तथा नयी सोच के साथ विकासात्मक परिवर्तन करने हेतु कोई नये सुझाव देखने सुनने को नही मिलते। इस बात को ध्यान मे लेते हुए अनुसंधान कर्ता की सुलभ जानकारी के लिए यहा शोध कार्य के योजना की क्रमबद्ध सूची दी जा रही है। किन्तु इस अनुक्रम सूची के अंतिम होने का दावा नही किया जा सकता है तथा वैसे ही इसका अनुक्रम भी अपनी सुविधानुसार बदला जा सकता है।

1) वांछित विषय, उपविषय के क्षेत्र से अनुसंधान–समस्या का चयन करना।
2) चयनित समस्या का अध्ययन क्षेत्र निर्धारित कर संबंधित पूर्व अनुसंधान तथा वाङमय का अवलोकन करना।
3) चयनित अनुसंधान–समस्या का शीर्षक निर्धारित करना।
4) अनुसंधान के उद्देश्य, परिकल्पना, चर, आदि निश्चित करना।
5) अनुसंधान अध्ययन प्रकियाओं का क्रमबद्ध नियोजन कर अनुसंधान प्रारूप एवं प्रस्ताव तैयार करना व उसे मान्यता के लिए संबंधित संस्था को सादर प्रषित प्रस्तुत करना।
6) पूर्व अनुसंधान का तथा वाङमय का सविस्तार अवलोकन करते हुए द्वितीय अध्याय का लेखन करना।
7) अनुसंधान रिपोर्ट के प्रथम अध्याय का लेखन करना।
8) सामग्री संकलित करने हेतु पूर्व निर्धारित अनुरूप उपकरणों की तैयारी करना।
9) सामग्री संकलन के उपकरणों का अंतिम प्रारूप तैयार होने पर सामग्री संकलन करना।
10) सामग्री संकलित करने के बाद उसका वर्गीकरण, विश्लेषण और अर्थ निर्वचन करते हुए अनुसंधान के उद्देश्यानुसार निष्कर्ष निकालना।
11) सामग्री विश्लेषण के आधार पर निष्कर्ष से संबंधित चतुर्थ अध्याय का लेखन करना।

12) सांराश एवं सुझावों के साथ पांचवा अध्याय लेखन पूरा कर संपूर्ण रिपोर्ट का टंक लेखन, मुद्रण दोष दुरूस्ती, बाईंडिग करना तथा संबंधित संस्था को सादर प्रस्तुत करना।

आम तौर पर उपर्युक्त सभी कार्य प्रकिया पूर्व नियोजित अनुसंधान रूपरेखा या प्रारूप के अनुसार की जानी चाहिए। उन सभी प्रक्रियाओं का एक विशिष्ट अनुक्रम किसी खास उद्देश्य से बनाया गया है। फिर भी अनुसंधान कर्ता अपनी मर्जीनुसार या सुविधानुसार उसमे कुछ बदल कर अपना अनुसंधान कार्य पूरा कर सकते है। इस प्रकिया की संख्या बढ सकती है; या घटायी भी जा सकती है।

1.7 सारांश

1.8 बोध प्रश्न

1.9 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

इकाई 2 अनुसंधान के प्रकार

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य
2.1 प्रस्तावना
2.2 अनुसंधान का वर्गीकरण
2.3 अनुसंधान के प्रकार: स्वरूपानुसार शोध प्रकार
2.4 अनुसंधान के प्रकार: प्रक्रियानुसार शोध प्रकार
2.5 अनुसंधान के प्रकार: आधार सामग्रीनुसार शोध प्रकार
2.6 सारांश
2.7 बोध प्रश्न
2.8 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

2.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप :

- ।
- ।
- ।

2.1 प्रस्तावना

अनुसंधान का वर्गीकरण

जैसे की पहले कहा जा चुका है की; विज्ञान के प्रमुख तीन विभाग कर सकते है।

(1) गणितीय विज्ञान, (2) प्राकृतिक विज्ञान (3) सामाजिक विज्ञान

उपरोल्लेखित तीन वर्गो मे विश्व का संपूर्ण ज्ञान विभाजित किया जा सकता है। इस तरह वैश्विक ज्ञान की कोई भी सीमा रेखा नही होते हुए भी मनुष्य ने अपने अभ्यास सुविधा की दृष्टि से संपूर्ण वैश्विक ज्ञान को विभिन्न विषयों मे वर्गीकृत किया। ठीक उसी प्रकार अनुसंधान को भी विभिन्न विषयों, उप विषयों के अनुसार वर्गीकृत करते हुए अनुसंधान के प्रकार भी बनाये जा सकते है। जैसे; ऐतिहासिक अनुसंधान, गणितीय

अनुसंधान, प्राकृतिक अनुसंधान, सामाजिक अनुसंधान, वैज्ञानिक अनुसंधान, भौगोलिक अनुसंधान, राजकीय अनुसंधान, जैविक अनुसंधान... आदि। इस तरह ज्ञान का वर्गीकरण किया जाए तो हम यह कह सकते है की; वैश्विक ज्ञान के जितने विषय एवं उप विषय होंगे उतने ही अनुसंधान के प्रकार भी बन सकेंगे। परंतु दूसरे शब्दों मे इस तरह के अनुसंधान प्रकार को उसका अभ्यास विषय अथवा अध्ययन क्षेत्र (area of the research study) कह सकते है। उन सभी प्रकारों का भिन्न भिन्न दृष्टिकोण से वर्गीकरण किया जा सकता है। यह वर्गीकरण अनुसंधान के प्रकार जानने समझने के लिए अवश्य सहायक हो सकता है। जो निम्न प्रकार है।

(क) स्वरूपानुसार शोध प्रकार

(ख) प्रक्रियानुसार शोध प्रकार

(ग) आधार सामग्रीनुसार शोध प्रकार

अनुसंधान के प्रकार

(क) अनुसंधान के स्वरूपानुसार प्रकार :

किसी भी प्रकार के अनुसंधान को उसका स्वरूप समझकर विशिष्ट प्रकार मे वर्गीकृत किया जा सकता है. जो निम्नलिखित है।

(क.1) मुलभूत अनुसंधान (Fundamental Research)

(क.2) उपयोजित अनुसंधान (Applied Research)

(क.3) कृतिशील अनुसंधान (Action Reserarch)

(क.4) गतिशील अनुसंधान (Dynamic Reserarch)

(क.1) मुलभूत अनुसंधान **(Fundamental Research)** :

इस प्रकार के अनुसंधान को विभिन नामों से जानते है। मुलभूत (Orgional /Basic /Fundamental), विशुद्ध (Pure), सैद्धान्तिक (Theorotical), तात्त्विक (Philosophical), आदि नाम भिन्न भिन्न लेखकों ने दिये है। यहां इस प्रकार को हम मुलभूत अनुसंधान या Fundamental Research कहेंगे। इस प्रकार के अनुसंधान मे विश्व के सभी ज्ञान प्रकार के विषय क्षेत्र से प्रचलित मूलभूत सिद्धांतो का चिकित्सकीय अध्ययन करना, नवीन

ज्ञान का निर्माण करना, प्रचलित ज्ञान मे वृद्धि करना, प्रचलित सिद्धांतो मे संशोधन करना; अव्यावहारिक सिद्धांतो या नियमों या तत्वों मे सुधार करना, या उसका परिशीलन करना, या उसमे दुरूस्ती करना, आदि उद्देश्य होते है। यह अभ्यास सिद्धांतो से, नियमों से और और तत्वों से संबंधित होने के कारण इसे मूलभूत, सैद्धातिक अथवा तात्विक अनुसंधान कहते है। अतः इस प्रकार के अनुसंधान के जो भी उद्देश्य बतायें जाते है; वो निम्न प्रकार है।

1) प्रचलित ज्ञान मे वृद्धि करना।
2) प्रस्थापित ज्ञान की चिकित्सा एवं संशोधन करना।
3) सिद्धांत, तत्व, नियम निर्धारित करना।
4) विषय की दिशा/स्थान/कक्षा निर्धारण करना।
5) संक्षेपीकरण/सारांशीकरण करना।
6) प्रचलित ज्ञान की त्रुटियां दूर करना।
7) ज्ञान की जिज्ञासा दूर करना।
8) सत्य की खोज करना।
9) इस तरह के शोध मुख्यतः प्रयोग शाला मे किए जाते है।
10) इस तरह के शोध मे अनुभवी विशेषज्ञों की आवश्यकता होती है।
11) इस तरह का शोध दीर्धकालीन योजना को अत्यंत महत्वपूर्ण योगदान देता है।
12) मूलभूत शोध अन्य किसी भी प्रकार के अनुसंधान का मूलाधार होता है।

(क.2) उपयोजित अनुसंधान (Applied Research) :

इस प्रकार के अनुसंधान को व्यावहारिक अनुसंधान या 'applied research' भी कहते है। उपयोजित अनुसंधान से व्यावहारिक समस्याओं का समाधान करने में सहायता मिलती है। मानवीय जीवन की व्यावहारिक समस्याओं का अध्ययन कर उनके कारणों का अध्ययन करना और उपस्थित समस्या का समाधान करने का उपाय ढूंढ़ना; यही मुख्य उद्देश्य उपयोजित अनुसंधान का होता है। इस अनुसंधान का संबंध मानवीय समस्याओं को दूर कराने की प्रकिया से अथवा उसके व्यवहार से है। इसीलिए इसे व्यावहारिक अनुसंधान कहते है। फेस्टिंगर एवं कॅज (Festinger & Cazz) ने भी कुछ ऐसा ही कहा है की; 'उद्योग या प्रशासन के संदर्भ मे जब किसी उपयोगितावादी दृष्टिकोण से तथ्यों का संकलन किया जाता है; और उसका उद्देश्य निर्माताओं की आवश्यकता होती है; तब उसे उपयोजित अथवा व्यावहारिक अनुसंधान कहते है। इससे यही प्रतीत होता है कि;

उपयोजित अनुसंधान का संबंध मनुष्य के दैनंदिन जीवन के व्यावहारिक गतीविधियों से है। इस दृष्टिकोण से जो भी अनुसंधान किया जाता है। वह संबंधित विषय क्षेत्र मे आनेवाली समस्याओं के कारणों का, लक्षणों का अथवा नियमों आदि का अध्ययन होता है। इस प्रकार के अनुसंधान से समाज की अनेक समस्याओं को नियंत्रित रखने मे सहायता मिलती है।'[1] इसलिए उपयोजित अनुसंधान का संबंध सामाजिक जीवन के व्यावहारिक प्रकिया से होने के कारण कार्टर व्ही. गुड (Carter V. Good) ने भी कहा है की, 'उपयोजित या प्रकियात्मक अनुसंधान एक ऐसा शोध कार्य है जिससे प्राप्त वैज्ञानिक ज्ञान को व्यावहारिक क्षेत्र मे लागू किए जाने का मार्गदर्शन मिलता है। इसमे अनुसंधान समस्या के व्यावहारिक पक्ष पर ही ध्यान केन्द्रित किया गया है; तथा उसके परिणामों को व्यावहारिक दृष्टि से सुधारणा करने के लिए ही अपनाया गया है।'[2]

उपर्युक्त बात को ध्यान मे लेते हुए यह कहा जा सकता है की; उपयोजित अनुसंधान का संबंध सामाजिक जीवन के व्यावहारिक पक्ष से है। इसीलिए इस अनुसंधान का महत्व सामाजिक जीवन मे अनन्य/असाधारण है। इसे अधिक स्पष्ट रूप से समझने के लिए स्टॉफर (Stawffer) ने उपयोजित अनुसंधान के तीन प्रकार के योगदान बताये है; जो सामाजिक विज्ञान मे उपयुक्त होते है।

1) सामाजिक तत्थ्यों के संबंध मे विश्वसनीय प्रमाण खोजना तथा उन्हे सामाजिक उपयोगिता की दृष्टि से प्रस्तुत करना।
2) ऐसे तत्थ्य जो मौलिक शोध के लिए भी उपयुक्त एवं सिद्ध होते है।
3) ऐसे तत्थ्यों के आधार पर निष्कर्ष निकाल कर उनका सामान्यीकरण (Generalisation) करने मे सहायक होते है। इसी के आधार पर उपयोजित अनुसंधान के कुछ उद्देश्य बनाये जा सकते है; जो निम्न प्रकार है।

उपयोजित अनुसंधान के उद्देश्य :

1) उपयोजित अनुसंधान द्वारा सामाजिक जीवन के व्यावहारिक पक्ष के संबंध मे नवीन तथ्यों की खोज करना; जिससे सामाजिक गतिविधियां अथवा प्रकिया का अध्ययन किया जाता है।
2) सामाजिक जीवन मे उपयुक्त तथ्यों के बारे मे विश्वसनीय प्रमाणों को प्रस्तुत करना।
3) सामाजिक प्रकियाओं से संबंधित, नवीन ज्ञान का विकास करना।

4) सामाजिक व्यवहार और घटनाओं से संबंधित नये सिद्धांत, तत्व तथा नियमों की खोज करना।

5) प्रमाणित तथ्यों के आधार पर सामाजिक प्रकियाओं का सामान्यीकरण करना।

6) सामाजिक व्यवहार मे आनेवाली समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करना।

7) समाजिक व्यवहार मे सुधार करने हेतु प्रचलित अवधारणाओं का स्पष्टीकरण करते हुए उनकी संशोधित परिभाषा करना।

उपर्युक्त स्पष्टीकरण से यह परिलक्षित होता है कि; मूलभूत अनुसंधान का संबंध सिद्धांतो से है; तथा उपयोजित अनुसंधान का संबंध व्यवहार से है।

(क.3) कृतिशील अनुसंधान (Action Research) :

कृतिशील अनुसंधान भी कृति से या व्यावहारिक पक्ष से संबंधित होता है। उपयोजित अनुसंधान स्वरूप व्यापक, सार्वत्रिक (Universal) एवं सामान्य (General) होता है; परंतु कृतिशील अनुसंधान का स्वरूप मर्यादित अथवा व्यक्तिगत होता है। इसके निष्कर्ष छोटे समूह से संबंधित होते है; परंतु इसका सामान्यीकरण नही किया जा सकता। क्योंकि कृतिशील अनुसंधान की समस्यायें व्यापक या सार्वत्रिक नही होती। कृतिशील अनुसंधान की परिभाषा करते हुए स्टिफन एम्. कोरी (Stephen M. Kori) ने कहा है कि, 'कृतिशील अनुसंधान एक ऐसी प्रकिया है; जिसके द्वारा अनुसंधान कर्ता किसी व्यावहारिक समस्या का वैज्ञानिक तरीके से अध्ययन कर आवश्यकतानुसार अपने निर्णय देकर प्रचलित समस्या का समाधान की सके तथा आवश्यकतानुसार उसमे परिवर्तन एवं सुधारणा हो सके।'[3]

मॅकग्रेथ एवं उनके साथियों ने कृतिशील अनुसंधान की परिभाषा करते हुए कहा है कि; 'क्रियात्मक शोध यह एक ऐसी संगठित एवं खोजपूर्ण प्रक्रिया है; जिसका उद्देश्य किसी व्यक्ति या समूह की गतिविधियों मे रचनात्मक परिवर्तन या उसमे सुधार करने हेतु अध्ययन करना है।'[4]

कृतिशील शोध की विशेषताएँ :

1) कृतिशील शोध मे विशिष्ट या स्थानिक समस्या का ही अध्ययन किया जाता है।

2) कोई भी एक विशिष्ट या लघु समस्या जो व्यक्तिगत या छोटे समूह से संबंधित हो; या स्थानीय एवं अत्यंत मर्यादित हो; समाधान खोजने की प्रकिया पर आधारित होती है।

3) इस शोध कार्य का उद्देश्य अत्यंत मर्यादित स्वरूप का होता है। इससे संपूर्ण रूप मे सैद्धांतिक समस्या का अध्ययन नही किया जाता.

4) इस शोध का कार्य क्षेत्र अत्यंत सीमित होता है।

5) कृतिशील शोध कार्य अत्यंत सीमित समयांवधि मे पूर्ण किया जाता है।

6) इस शोध कार्य मे मर्यादित न्यादर्श (sample) होता है।

7) मनुष्य के जीवन मे आनेवाली व्यक्तिगत या छोटे समूह की समस्या का अध्ययन किया जाता है

8) इसमे छोटी छोटी समस्याओं का समाधान ढूंढ़ने के लिए अध्ययन किया जाता है।

9) इसका स्वरूप अत्यंत सीमित होने के कारण इसका सार्वत्रीकरण (universalization) नही किया जा सकता।

10) इसके निष्कर्ष, परिणाम अथवा उपायों का सामान्यीकरण (Generaliazation) नही किया जा सकता।

11) इससे दूसरे किसी समान समस्या का समाधान होनेकी अपेक्षा नही की जा सकती।

12) इस का स्वरूप सरल होता है; तथा इसकी व्याप्ति सीमित होती है।

13) इसकी परिकल्पना को (Hypothesis) कृतिशील परिकल्पना (Action Hypothesis) के नाम से जाना जाता है।

14) इसमे लक्ष्य की प्राप्ति के लिए व्यापक नियोजन प्रकिया एवं मूल्यांकन प्रकिया का अवलंब नही किया जाता।

15) इस अनुसंधान मे शोधकर्ता स्वयं सम्मिलित हो सकता है; अथवा उसकी अपनी समस्या भी हो सकती है।

16) इस अनुसंधान से प्रत्येक छोटी छोटी समस्याओं का स्वतंत्र अध्ययन कर स्थानिक समस्याओं का अध्ययन किया जाता है।

(क.4) गतिशील अनुसंधान (Operational Research) :

गतिशील शोध प्रकार को संक्रियात्मक अनुसंधान (operational research) भी कहते है। विज्ञान की प्रगति एवं औद्योगिक क्रांति के साथ जैसे जैसे नयी समस्यायें भी बढने लगी; वैसे वैसे मनुष्य तीव्र गति से उन पर नियंत्रण करने का प्रयास करने लगा है। मनुष्य अपनी मर्यादाओं को समझते हुए हर कठिनाई का सामना करता है। अचानक

सामने आई हुयी समस्या का समाधान तत्काल होना जब अनिवार्य बनता है; तब मनुष्य अपनी आत्म प्रेरक क्षमता के अनुसार अत्यंत गतिशील प्रयास करता है; जिसे गतिशील अनुसंधान कहा जा सकता है। अर्थात युद्धजन्य, आपात्कालीन या आकस्मिक निर्माण होने वाली समस्या पर नियत्रंण करने हेतु जिस प्रकार के तात्कालिक उपायों की खोज की जाती है; उसे गतिशील या संक्रियात्मक अनुसंधान कहते है। आज इस गतिशील अनुसंधान शब्द का प्रयोग बडे पैमाने पर औद्योगिक क्षेत्र मे और वाणिज्य विषय में किया जाने लगा है।

दूसरे विश्व युद्ध के दौरान 1940 मे गतिशील अनुसंधान (operational research) शब्द का निर्माण हुआ । युद्ध काल मे उपलब्ध संसाधन एवं स्रोत का लक्ष्यभेदी उपयोग करना आवश्यक हो गया था। तब समस्या का विश्लेषण गणितीय पद्धती से किया जाने लगा। तात्कालिन वैज्ञानिक, गणितज्ञ, मनोवैज्ञानिक, तथा अन्य सभी क्षेत्रों के विशेषज्ञ मिलकर एक समूह भावना से प्रेरित होकर युद्ध की रण कौशल नीति बनाकर तत्काल कृतियोजना बना रहे थे। यह – सामूहिक कृतियोजना ही गतिशील अनुसंधान का एक उदाहरण है। इस प्रक्रिया मे विभिन्न प्रकार के विशेषज्ञों समूह किसी समस्या का विश्लेषण करते हुए उसका तत्काल समाधान करता है; और इस तरह विभिन्न क्षेत्रों के विशेषज्ञ एकत्रित अनुसंधान करते है; तब उसे अन्तरानुशासनिक अनुसंधान **(Inter disciplinay research)** भी कहा जा सकता है। वर्तमान मे इस शब्द का प्रयोग वाणिज्य व्यवस्थापन (bussiness management) मे अधिक होने लगा और अंतर विद्याशाखीय अनुसंधान शब्द का प्रयोग शिक्षाशास्त्र (Education) मे अधिक होने लगा। शिक्षाशास्त्र मे सभी विषयों के अध्यापन, अध्ययन एवं अनुसंधान कार्य होने के कारण इस शब्द का प्रचलन बढने लगा है। सभी संभावित समस्याओं को ध्यान मे रखते हुए सीमित साधनों का सुनियोजित, एवं सर्वोत्तम उपयोग करते हुए समस्याओं पर नियंत्रण करना ही गतिशील अनुसंधान का मुख्य उद्देश्य है। इसमे प्रणाली विश्लेषण (system analysis), घटक विश्लेषण (factors analysis), भूमिका विश्लेषण (role analysis), निर्णय प्रक्रिया (decision making), कृति नियोजन (action plan) एवं कार्य प्रणाली (task system) आदि संक्रियाओं का अंतर्भाव होता है। इन सभी बातों का प्रबंधन करना इस संक्रियाओं का मुख्य उद्देश्य होता है। इस बात को ध्यान मे रखते हुए कुछ विद्वानों ने गतिशील अनुसंधान की परिभाषा बताई; जो अग्रलिखित है।

गतिशील अनुसंधान संस्था (Operation Research Society of India) के अनुसार 'आधुनिक विज्ञान आधारित उद्योग, व्यवसाय, सुरक्षा तथा प्रशासन की बड़ी व्यवस्थाओं मे

मनुष्य बल, यंत्र सामग्री, वित्त आदि संसाधनों का प्रबंधन एवं संचालन की समस्याओं पर नियंत्रण ही गतिशील अनुसंधान है।'

जेम्स लुडी कहते है, 'उच्च प्रबंधन समस्याओं के समाधान हेतु बहु आयामी प्रयासों का आदर्श नाम ही गतिशील अनुसंधान है।

अर्नेस्ट डेल के अनुसार; 'प्रबंधन समस्याओं के समाधान हेतु संख्यात्मक मात्रा मे दर्शायी जाने वाली वैज्ञानिक विधि को गतिशील अनुसंधान कहा जाता है।'

मोर्स एवं किम्बल के अनुसार, 'कार्यकारी विभागों को अपने नियंत्रण मे आनेवाली संक्रियाओं के संबंध मे निर्णय लेने के लिए संख्यात्मक आधार प्रदान करने की वैज्ञानिक विधि गतिशील अनुसंधान है।

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर ऐसा कहा जा सकता है कि; उपलब्ध पर्यायों से सर्वोत्तम पर्याय का चयन करने तथा न्यूनतम लागत एवं समय मे अधिकतम उत्पादन, विक्रय, लाभ प्राप्त करने हेतु उद्योग, व्यवसाय का समाधान करने की वैज्ञानिक विधि ही गतिशील अनुसंधान है।

आम तौर पर गतिशील अनुसंधान को 'प्रबंधन तकनीकी' (managerial technique) कहा जा सकता है; परंतु विद्वानों की दृष्टि से यह एक चुनौती (Philosophy) भी है। वास्तव मे देश की सुरक्षा व्यवस्था, रेलवे प्रशासन जैसे बड़े बड़े सार्वजनिक उपक्रमों मे प्रबंधन की समस्यायें अधिक जटिल होती है। ऐसे उपक्रमों मे आनेवाली समस्याओं का स्वरूप दीर्घ कालीन, अल्पकालीन या आपात् कालीन; या तीनों प्रकार की समस्या होती है। अतः समस्या के स्वरूपानुसार या परिस्थिती नुसार उचित नीति या निर्णय लेना तथा उस पर नियंत्रण रखते हुए कार्य करने की एक प्रकार की चुनौती होती है । यह संपूर्ण कार्य एक निश्चित समय के साथ या तेज गति से भी करना जरूरी होता है। इसलिए इसे 'गतिशील अनुसंधान' कहना सर्वधा उचित है। इन समस्याओं का तथा उससे संबंधित संक्रियाओं को गणितीय भाषा मे स्पष्ट करने की आवश्यकता होती है; तथा उनका समाधान भी गणितीय रूप मे ही किया जाता है; और उसका उत्तर भी गणितीय रूप मे खोजना पडता है।

औद्योगिक विकास के साथ ही प्रबंधकीय समस्याओं की बढती हुयी प्रवृत्ति (Trend) को देखते हुए गतिशील अनुसंधान का इन क्षेत्रों मे उपयोग बढता जा रहा है; तथा इस

अनुसंधान की लोकप्रियता भी बढती जा रही है। अतः इसका सही उपयोग करने हेतु इसे अधिक स्पष्ट रूप से समझने के लिए इसकी कुछ विशेषताएँ भी समझना आवश्यक है।

गतिशील अनुसंधान (Operational Research) की विशेषताएँ :

1) उद्देश्य प्रधान कार्य : विशिष्ट उद्देश्य को दृष्टि में गतिशील अनुसंधान की यही एक विशेषता है की यह एक उद्देश्य प्रधान अनुसंधान कार्य है।

2) गतिशील अध्ययन : प्रबंधन मे आनेवाली समस्यायें बाहरी कारणों से और आतंरिक कारणों से भी निर्मित होती है। उन सबको मूलस्रोत का पता लगाकर उनपर तत्काल नियंत्रण करने की आवश्यकता होती है। इस कार्य को पूरा करते करते मूल समस्या का स्वरूप भी परिवर्तित हो सकता है। 'अधिक विलंब; अधिक हानि'; इस तत्व को ध्यान मे रखते हुए शिघ्रता से निर्णय लिए जाते है। इसलिए संपूर्ण संक्रियाओं की तुरंत कार्यवाही की जाती है।

3) नियोजनबद्ध कार्य : संपूर्ण कार्य प्रणाली को समझते हुए अंतर्भूत सभी घटकों का उनकी भूमिकाओं का नियोजन करना आवश्यक होता है। अतः सुनियोजित तरीकेसे संपूर्ण कार्य प्रणाली का नियोजन किया जाता है

4) व्यापक विचार : जिस संस्थागत प्रणाली के संबंध मे अध्ययन करना हो; उसका संपूर्ण विचार एवं विश्लेषण करने की आवश्यकता होती है। अगर किसी एक विशिष्ट घटक या भाग मे समस्या उत्पन्न होती है; तो संपूर्ण प्रणाली पर विपरीत परिणाम होता है। इसलिए संपूर्ण प्रणाली से संबंधित पहलुओं का सावधानी पूर्वक विचार किया जाता है। तभी समस्या के कारणों का निदान हो सकता है और उसका समाधान मिल सकता है।

5) प्रणालीबद्ध दृष्टीकोण : प्रणाली शब्द संपूर्ण व्यवस्था अथवा यंत्रणा का द्योतक है। किसी विशिष्ट ध्येय पुर्ति के लिए संपूर्ण व्यवस्था की एक विशिष्ट क्रमबद्ध भूमिका होती है। एक विशिष्ट पद्धति का अथवा विधि–नियमों का अवलंब करना पडता है। ऐसे सुनियोजित एवं अनुशासित मार्ग का अवलंब किए बिना कोई भी ध्येय प्राप्त नही किया जा सकता। इस लिए संपूर्ण व्यवस्था मे अंतर्भूत घटकों की एक सूत्रबद्ध व्यवस्था निर्धारित करते हुए सभी घटकों को अपनी सीमित कक्षा मे अपनी भूमिका निभानी पडती है। इसी दृष्टिकोण को प्रणालीबदध दृष्टिकोण कहते है।

6) समूह भावना : आपात् कालीन स्थिति मे किसी एक व्यक्ति या घटक ने कितना भी प्रयास किया; तो समस्या पर नियंत्रण नही किया जा सकता। सभी घटकों द्वारा पूर्ण

क्षमता से और प्रामाणिकता से कोशिश करने पर ही स्थिति को नियंत्रण मे कर सकते है। अतः इसके लिए समूह भावना की अत्यंत आवश्यकता होती है।

7) गणितीय प्रतिमानों पर आधारित कार्य योजना : किसी भी समस्या के समाधान खोजने हेतु अनेकविध घटको की सहायता लेना आवश्यक होने के कारण उन सभी घटकों की आवश्यकतानुसार भूमिका या जिम्मेदारी अनुपात निर्धारित किया जाता है। यह अनुपात गणितीय अनुमानों पर आधारित होता है। उपलब्ध संसाधनों का अनुपात, समया वधिका अनुपात, कय–विकय का अनुपात इन सभी का गणितीय अनुमान लगाते हुए निर्णय लिया जाता है। इसके कुछ प्रतिमान भी बनाकर सर्वोत्तम एवं अनुरूप प्रतिमान के आधार पर कार्य योजना बनाने से गतिशील अनुसंधान को उच्च स्तरीय किया जा सकता है।

8) सर्वोत्तम पर्याय का चयन : किसी भी समस्यां का विश्लेषण करने तथा उसका समाधान खोजने का एक या अधिक मार्ग हो सकता है। उपलब्ध संसाधनों को ध्यान मे रखते हुए उन विभिन्न विकल्पों में से सर्वोत्तम विकल्प का चयन करना पडता है। क्योंकि सभी विकल्पों मे गुण भी होते है; तथा दोष भी। अतः सभी विकल्पों के गुणदोष को समझते हुए सर्वोत्तम विकल्प का चयन किया जाता है।

9) निर्णय क्षमता की आवश्यकता : आपात्कालीन स्थिति मे तत्काल निर्णय लेना आवश्यक होता है। गतिशील अनुसंधान को संक्रियात्मक अनुसंधान तो कहते है; साथ ही कभी कभी इसे तत्काल निर्णय विज्ञान (science of immidiate decision) भी कहते है। उचित समय पर उचित निर्णय लेना अत्यंत आवश्यक होता है। उचित समय पर, उचित स्थल पर एवं उचित साधनों के संबंध मे उचित निर्णय लेना संक्रियात्मक अनुसंधान की प्रमुख विशेषता है।

10) गतिशील अनुसंधान एक चूनौती पूर्ण कार्य है : रण युद्ध मे अथवा खेल के मेदान मे अत्यंत गतिमान तरीके से निर्णय लिए जाते है; या लिए गए निर्णय बदले भी जाते है। यह निर्णय प्रकिया परिस्थितिनुसार बदलती है। यह एक प्रकार का खेल का मेदान है। खेल के नियम होते है; परंतु फिर भी हर खिलाडी को उस नियमों को ध्यान मे रखते हुए अपने स्वयं के निर्णय भी लेने पडते है। उन नियमों के तहत कोई भी; किधर भी कैसे भी कार्य करता है; परंतु उसका अन्य घटकों पर कोई भी विपरीत परिणाम न हो इसका भी ध्यान रखना अनिवार्य होता है।

11) गतिशील अनुसंधान एक कला भी है और तकनीक भी है : जैसे की पहले कहा जा चुका है; 'न्यूनतम समय मे; न्यूनतम संसाधन और न्यूनतम परिश्रम मे अधिकतम उत्पादन, या लाभ प्राप्त करना यह एक सर्कस की कसरत है। यहां बुद्धी एवं निर्णय क्षमता की जितनी आवश्यकता है; उतनी ही आवश्यकता कौशल की भी होती है। और यह कौशल बिना तकनीकी के प्राप्त नही किया जा सकता।

12) कार्य विभाजन की आवश्यकता : संपूर्ण संघटन प्रणाली मे अंतर्भूत घटको की जिम्मेदारी निर्धारित करते हुए सभी प्रकार के कार्यो का विभाजन करना आवश्यक होता है। गतिशील अनुसंधान मे हर एक घटक के कार्य का स्वरूप एवं अनुपात भी निर्धारित करना आवश्यक होता है। इतना ही नही किसी एक घटक को जो कार्य सौंपा गया हो; उसे अन्य घटकों पर कोई भी विपरीत प्रभाव न डालते हुए सावधानी से कार्य करना पडता है। इसीलिए कार्य विभाजन की अत्यंत आवश्यकता होती है।

13) अंतरानुशासनात्मक शोध कार्य : गतिशील अनुसंधान मे सम्मिलित घटको मे विभिन्न क्षेत्र के विशेषज्ञ भी होते है। जब किसी विशिष्ट आपात् कालीन समस्या का समाधान खोजना हो तो विभिन्न क्षेत्र के विशेषज्ञों की आवश्यकता होती है। विभिन्न क्षेत्र के विशेषज्ञ एकत्रित होकर जब किसी विशेष समस्या का अध्ययन करते है; तब उन्हे एक दूसरो को सहकार्य करना आवश्यक होता है। कभी कभी उनका कार्य एक दूसरों पर निर्भर भी रहता है। ऐसी अवस्था मे अंतरानुशासनात्मक शोध कार्य (interdisciplinary research) कहते है। इसमे दो या दो से अधिक अनुसंधान कर्ता आपस मे मिल जुल कर संबंधित क्षेत्र की समस्याका अध्ययन करते है। जैसे की पहले भी कहा जा चुका है की वैश्विक ज्ञान की कोई सिमाएं नही होती; और सागर मे मिलने वाली नदियों का पानी अलग नही किया जा सकता; वैसे ही वैश्विक ज्ञान को भी किसी सीमा के अंतर्गत विभाजित नही किया जा सकता। हर विषय का एक दूसरो से संबंध होता है। किसी एक समस्या का अध्ययन करते समय दूसरे विषय का भी अध्ययन करने की जब आवश्यकता पडती है; तब ऐसी स्थिती मे उसे अंतरविद्याशाखीय अंनुसधान कहते है।

(ख) अनुसंधान प्रकिया के अनुसार प्रकार :

किसी सामाजिक क्षेत्र मे जब कोई शोध किया जाता है तो उसकी प्रक्रिया के अनुसार भी अनुसंधान के प्रकार बतायें जाते है। प्रक्रिया के आधार पर अनुसंधान के जो विभिन्न प्रकार बतायें जाते है; वे निम्न प्रकार से होते है।

(ख.1) वर्णनात्मक शोध (Discriptive Research)

(ख.2) विश्लेषणात्मक शोध (Analytical Research)

(ख.3) तुलनात्मक अध्ययन (Comparative Study)

(ख.4) सहसंबंधात्मक अध्ययन (Correlational Study)

(ख.1) वर्णनात्मक शोध (Discriptive Research)

सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र मे वर्णनात्मक अनुसंधान का सर्वाधिक उपयोग किया जाता है। वास्तव मे वर्णनात्मक अनुसंधान सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र मे यह एक अनुसंधान पद्धति का वर्गीकरण होता है। कुछ लेखक इस प्रकार के वर्गीकरण को सर्वेक्षणात्मक शोध भी कहते है। समाजशास्त्र, राज्यशास्त्र, अर्थशास्त्र, इतिहास, वाड़मय, आदि विषयों के क्षेत्र मे किए गए अधिकांश शोध कार्य के प्रलेखों मे (Thesis) निबंधनात्मक वर्णन किया जाता है। यह प्रतीत होता है की यह शोध प्रलेख नही बल्कि कोई बहुत बडा निबंध लिखा गया हो। परंतु निबंध की पुस्तक और शोध प्रलेख दोनो मे भिन्नता होती है। यह बताने की आवश्यकता नही होनी चाहिए; परंतु अधिकांश शोध प्रलेख (Thesis) मे ऐसा ही वर्णनात्मक निबंध लिखा हुआ पाया जाता है। इसमे ना कोई विश्लेषण होता है, ना कोई आलोचना। बस किसी एक विषय के उप विषयांश पर सरल एवं समतल लेखन किया जाता है। परंतु अगर अनुसंधान शीर्षक से संबंधित ढेर सारी अप्रकाशित अथवा दुर्लभ जानकारी या सूचना का संकलन किया गया; और उसे सुसंगत क्रम से वर्णन करते हुए सूत्रबद्ध पद्धती से प्रस्तुत किया गया; तो इस तरह से किए गए वर्णनरूपी शोध कार्य को वर्णनात्मक शोध कह सकते है।

वर्णनात्मक प्रकार के अनुसंधान मे चरोंका (Variables) या परिकल्पना (Hypothesis) का अध्ययन नही किया जाता। वर्णनात्मक शोध को परिभाषित करते हुए जॉन डब्ल्यू. बेस्ट ने कहा है की, "जो परिस्थिति जैसी है, जिस प्रकार है, जो व्यवहार प्रचलित है, जो संबंध विद्यमान है; उसका वर्णन किया जाता है। जो प्रकिया चल रही है, उसका वर्णन किया जाता है। जो अभिवृत्तियां पायी जाती है; उसका वर्णन किया जाता है। अर्थात वर्णनात्मक शोध केवल यथास्थित परिस्थिति का वर्णन करता है। इसमे क्या है? क्यों है? अथवा कैसे है? इन प्रश्नों का उत्तर नही दिया जाता।"

वर्णनात्मक शोध के उद्देश्य :

1) मानवीय समाज के व्यवहार को ज्ञात कराना : समाज मे विभिन्न मनुष्यों या उनके समूहों के व्यवहार, संबंध, वर्तन, इत्यादि का ज्ञान प्राप्त कर उसका वर्णन करना।

2) भविष्य कालीन घटनाओंका अनुमान लगाना : वर्तमान परिस्थिति ऐसी है; तो भविष्यकालीन घटना या परिस्थिति कैसे होगी? इसका अनुमान या तर्क लगाते हुए भविष्य कालीन नियोजन मे सहायता करना या अपेक्षित परिवर्तन मे योगदान देना।

3) नियोजन मे सहायता करना : वर्तमान परिस्थिति का जायजा लेकर भविष्य मे क्या करना चाहिऐ इसका वर्णन करते हुए भविष्यकालीन खोजों का नियोजन करने मे मदद करना.

4) प्रारंभिक अध्ययन मे सहायता करना : आगामी अनुसंधान के लिए सहायता करने हेतु वर्तमान शोध कार्य को वास्तविकता से परिचित करना। इससे आगामी शोधकर्ता को मार्गदर्शन मिलता है।

5) समग्र को प्रस्तुत करना : किसी एक विषयांश पर विस्तृत रूप मे प्रकाश डालकर उस का संपूर्ण विवेचन करना।

वर्णनात्मक शोध की विशेषतायें :

1) किसी एक विषयांश का अनेक दृष्टिकोण से सविस्तार का वर्णन किया जाता है।

2) अनेक दृष्टिकोण में एक विषयांश का वर्णन किया जाता है।

3) गुणात्मक और सख्यांत्मक दोनो प्रकार का वर्णन किया जाता है।

4) जटिल एवं सरल; दोनो प्रकार के विषयांश का अध्ययन किया जा सकता है।

5) इसमे परिकल्पना (Hypothesis) एवं चरों का (Variables) की आवश्यकता नही रहती।

6) इसमे सामान्य समस्याओं का अध्ययन किया जाता है।

7) किसी घटना या समस्या का विश्लेषण या समीक्ष न करते हुए केवल वास्तविक ज्ञान का वर्णन किया जाता है।

8) भविष्य मे क्या हो सकता है और क्या होना चाहिऐ इसका मार्गदर्शन मिलता है।

(ख.2) विश्लेषणात्मक शोध (Analytical Research) :

गतकालीन अथवा वर्तमानकालीन घटना का विश्लेषण करते हुए अध्ययन करना, उपलब्ध प्रमाण या संदर्भ की चिकित्सा या परीक्षण करना अथवा किसी सिद्धांत, तत्व,

नियम, विचार आदि का मूल्याकंन या समीक्षण करना विश्लेषणात्मक शोध होता है। इसमे तर्क या अनुमान के आधार पर सत्य जानने के लिए अध्ययन किया जाता है। विश्लेषणात्मक अध्ययन मे विभिन्न प्रकार के दृष्टिकोण हो सकते है। उदाहरण के लिए दार्शनिक दृष्टिकोण, राजकीय दृष्टिकोण, ऐतिहासिक दृष्टिकोण, धार्मिक दृष्टिकोण, सामाजिक दृष्टिकोण, पारंपरिक दृष्टिकोण, वैज्ञानिक दृष्टिकोण, सुधारवादी दृष्टिकोण, आदि। जब कोई शोधकर्ता किसी समस्या का या घटना का विश्लेषण करता है; तब वह किसी एक या अनेक दृष्टिकोण से विश्लेषण कर सकता है। इस प्रकार के शोध कार्य को आलोचनात्मक या समीक्षणात्मक अध्ययन भी कह सकते है। इस प्रकार का शोध कार्य वाङ्मय, इतिहास, समाजशास्त्र, जैसे विषय क्षेत्र मे अधिकतम किया जाता है। विश्लेषणात्मक अध्ययन मे शोधकर्ता को संबंधित विषय क्षेत्र को विकल्पों का पर्याप्त ज्ञान तथा अनुभव होना आवश्यक होता है। क्योंकि किसी एक समस्या या घटना को अनेक दृष्टिकोण से तथा अलग अलग ढंग से देखा जा सकता है। उसी के आधार पर उसे समझने की कोशिश की जाती है; और उनका अपने अपने तरीके से अर्थ निर्वचन किया जाता है। अगर शोधकर्ता को पर्याप्त ज्ञान और अनुभव नही रहा तो; विश्लेषणात्मक अध्ययन की दिशा बदल सकती है। परिणामतः वास्तविकता का ज्ञान प्राप्त नही हो सकता।

(ख.3) तुलनात्मक अध्ययन (comparative study) :

तुलनात्मक अध्ययन मे दों चरों की (Variables) तुलनात्मक समीक्षा की जाती है। जिन दों चरों मे तुलना करनी हो उनकी समान गुणधर्मो; जो दोनो मे मौजूद हो; मे ही तुलना की जा सकती है। उदाहरण के लिए दो व्यक्ति या दो समूह की आर्थिक स्थिति मे तुलना, दो संस्थाओं के विकास या प्रगति मे तुलना, दो राज्यों के बजट की तुलना, आदि। इसमे आर्थिक स्थिति, विकास, बजट ये शब्द दो अलग अलग घटकों या चरों मे सामान्य है। तुलनात्मक अध्ययन में दो नो चरों के दो अंगो का विचार किया जाता है। एक है–दोनो मे समानता या साम्य क्या है? और दूसरा है–दोनो मे अंतर या भेद या भिन्नता क्या है? इसलिए तुलनात्मक शोध अध्ययन मे दो चरों का होना आवश्यक होता है; तथा इसमे भाषित परिकल्पना (Hypothesis) का भी निर्धारण किया जा सकता है। दोनो चरों के इन घटकों मे तुलना करते समय उनकी हर इकाई (Unit) को लेकर परिकल्पना (Hypothesis) निर्धारित करते हुए उनका अलग अलग अध्ययन किया जा सकता है। अर्थात तुलनात्मक अध्ययन करने के बाद प्राप्त परिणामों के आधार पर पूर्व

निर्धारित परिकल्पनाओं को या तो स्वीकार किया जाता है; अथवा त्याग किया जाता है। उदाहरण के लिए 'दो व्यक्ति समूहों की आर्थिक स्थिति समान है'; ऐसी अगर परिकल्पना निर्धारित की गयी हो; तब शोध कार्य के निष्कर्षों के आधार पर ऐसा ही प्रतीत हुआ तो यह परिकल्पना स्वीकृत की जायेगी; अन्यथा अस्वीकृत की जायेगी.

(ख.4) सहसंबंधात्मक अध्ययन (correlational study) :

जिस अनुसंधान मे दो चरों का परस्पर संबंध देखा जाता है; उसे सहसंबंधात्मक अध्ययन कहा जाता है। संख्याशास्त्र मे जिस तरह सहसंबंध को महत्वपूर्ण स्थान है; उसी तरह अनुसंधान मे भी सहसंबंध अध्ययन एक महत्वपूर्ण शोध के प्रकार है। इस प्रकार मे भी तुलनात्मक अध्ययन जैसे दो चरों की आवश्यकता होती है। परंतु इसमे तुलना करने के बजाय दोनो चरों मे क्या संबंध है? यह देखा जाता है। सहसंबंध का अर्थ बताते हुए गिलफोर्ड (Guilford-1966) ने कहा है कि; 'दो घटको मे कैसा एवं कहां तक परस्पर संबंध है? तथा एक चर के परिवर्तन से दूसरे चर मे कितना परिवर्तन होता है? इन प्रश्नों का उत्तर सहसंबंध गुणांक से मिलता है।' इस परिभाषा से यह प्रतीत होता है कि, किसी दो चरों मे जब कोई सहसंबंध होता है; तब एक के प्रभावित होने से दूसरा भी प्रभावित हो सकता है। डावनी एवं हेथ (Downie & Heath 1970) ने अत्यंत संक्षेप मे कहा है कि, 'दो चरों के बीच मे जो संबंध होता है; उसका मापन ही सहसंबंध होता है।' ("Correlation is basically a measure of relationship between two variables") (Basic statistical Methods, 1980, p. 85 - Downie & Heath) ("A Coefficient of correlation is a single number that tells to what extant two things are related and to what extent variation in one go with variation in another." (Fundamental Statistics in Psychology and Education, 1965, p. 91)

उपर्युक्त दोनो परिभाषाओं से यह स्पष्ट होता है कि; दोनो चरों मे जो संबंध होता है; उसका संख्यात्मक मापन ही उनमे सहसंबंध दर्शाता है। उदाहरण के लिए सुंदरता एवं बुद्धीमत्ता; इन दो बातों मे आपस मे क्या कोई संबंध हो सकता है? नही होता; परंतु उंचाई और वजन मे संबंध होता है। जब किसी व्यक्ति की उंचाई ज़्यादा होती है; तो उसका वजन भी ज़्यादा होता है; और उंचाई कम हो; तो वजन भी कम होता है। अर्थात उंचाई और वजन का संबंध होता है। इससे यह ज्ञात किया जा सकता है कि; दोनो चरों मे सहसंबंध कितना और कैसा है? तथा एक के परिवर्तन से दूसरे मे कितना परिवर्तन होता है?

(ख.5) कारण एवं परिणाम विश्लेषण (Cause & Effect Relation) :

जब किसी शोध मे दो चर होते हुए भी उनमे ना तुलना की जाती और ना ही सहसंबंध देखा जाता; परंतु उन दो चरों मे एक चर कारण होता है; तो दूसरा चर परिणाम होता है। कारणों मे परिवर्तन होने से परिणाम भी बदल जाते है। इन बातों के अध्ययन को कारण एवं परिणाम संबंध विश्लेषण शोध अध्ययन कहते है। इसमे परिणाम ज्ञात हो तो कारणों का शोध किया जाता है; अथवा कारण ज्ञात हो तो परिणामों का शोध किया जाता है। उदाहरण के लिए भ्रष्टाचार एक ज्ञात परिणाम है; तो उसके कारणों की खोज करनी चाहिए बेरोजगारी की समस्या एक ज्ञात परिणाम है; तो उसके कारण क्या है? इसकी खोज करनी पडेगी। अध्ययनरत बच्चों को पाठ्यपुस्तकी बजाय टॅबलेट दिया जाय तो उनके अध्ययन पर क्या परिणाम होंगे? इसमे पाठ्यपुस्तक के बजाय टॅबलेट देना एक कारण है; तो बच्चों का अध्ययन उसका परिणाम है। पाठ्यपुस्तक के बजाय टॅबलेट देना; यह कारण मे परिवर्तन किया गया तो उसका बच्चों के अध्ययन पर कैसा परिणाम होगा? यह जानने के लिए परिणामों का शोध करना पडेगा। इस तरह के अध्ययन को कारण एवं परिणाम संबंध विश्लेषण अनुसंधान कह सकते है।

(ख.6) ऐतिहासिक शोध (historical research styudy) :

कभी कभी कुछ समस्यायें विगत कालीन घटनाओं से संबंधित होती है; तो कभी कभी वर्तमान समस्याओं का अध्ययन भूतकालीन घटनाओं से संबंधित होता है। दोनों ही स्थिति मे इतिहास का अध्ययन करना पडता है। जब इतिहासकालीन घटनाओं का वैज्ञानिक विधि से कालानुक्रम निश्चित करते हुए सम्पूर्ण सखोल एवं व्यापक अध्ययन किया जाता है; तब उसे ऐतिहासिक शोध अध्ययन कहा जाता है। यह प्रकार ऐतिहासिक घटनाओंसे संबंधित है; इसलिए यह शोध कार्य केवल इतिहास विषय मे ही उपयुक्त होता है; ऐसा नही; बल्कि वाङ्मय, भाषा, समाज शास्त्र, दर्शनशास्त्र, मानव वंश शास्त्र आदि विषयों मे भी इस शोध प्रकार का उतना ही महत्व है। इतना ही नही; इतिहास तो प्रत्येक विषय का होता है। वास्तविक रूप मे इतिहास नाम का कोई स्वतंत्र विषय नही होना चाहिए सभी विषयों का अपना अपना इतिहास उसी संबंधित विषय मे किया गया तो इतिहास नाम का कोई विषय बाकी नही रहेगा। हर विषय का अपना अपना इतिहास होता है। समाजशास्त्र का इतिहास, शिक्षा का इतिहास, अर्थशास्त्र का इतिहास, भाषाशास्त्र का इतिहास, भौतिकशास्त्र का इतिहास, जीवशास्त्र का इतिहास, आदि।

तात्पर्य हर किसी विषय क्षेत्र मे इतिहासकालीन घटना या प्रसंग होता है। उन घटनाओं का प्रचलित मान्यताओं के संदर्भ मे अध्ययन किया जा सकता है। ऐसी घटनाओं का अध्ययन करते समय प्रचलित धार्मिक या सामाजिक रूढ़ि, परंपरा या मान्यताओं का पक्षपातपूर्ण सोच के आधार पर अगर विचार किया गया तो उसके विपरीत निष्कर्ष प्राप्त होते है। अतः इस तरह के शोध अध्ययन मे शोधकर्ता को स्वयं अपनी सोच एवं मान्यता को दूर रखते हुए शोध अध्ययन करना आवश्यक होता है। ऐसे विचारों से जब कोई शोध अध्ययन किया जाता है; तब उसे ऐतिहासिक शोध कहना चाहिए इससे यह प्रतीत होता है कि; ऐतिहासिक शोध अध्ययन मे अत्यंत सावधानी पूर्वक एवं निष्पक्ष दृष्टि से विचार कर निष्कर्ष निकालना अत्यंत आवश्यक होता है; अन्यथा उसे निबंध की केवल एक ऐतिहासिक पुस्तक कह सकते है।

(ख.7) प्रयोगात्मक शोध (Experimental Research) :

किसी समस्या का समाधान खोजने हेतु अगर कोई प्रयोग किया जाता है; और प्रयोग द्वारा अध्ययन किया जाता है; तब उसे प्रयोगात्मक शोध कहते है। प्रयोगात्मक शोध को सभी विद्या शाखाओं मे एवं सभी विषय क्षेत्रों मे विशेष महत्वपूर्ण स्थान है। यह एक सबसे अधिक विश्वसनीय एवं निर्दोष शोध प्रकार माना जाता है। प्रयोगात्मक शोध की अवधारणा निम्न परिभाषाओं से स्पष्ट हो सकती है।

John W. Best (2002) : " Experimental research is the description and analysis of what will be; or what will occur; under carefully controlled situation"

Walter R. Borg (1996) : "The experiment is the ultimate form of research design, providing the most rigorous test of hypothesis that is available to the scientist."

जैसा की पहले कहा जा चुका है कि; तुलनात्मक अध्ययन एवं सहसंबंधात्मक अध्ययन मे कम से कम दो चरों का (variables) होना अनिवार्य है; ठीक उसी तरह प्रयोगात्मक शोध कार्य मे भी कम से कम दो चरों का होना अनिवार्य होता है। परंतु इसमे दोनो चर स्वतंत्र न होते हुए एक स्वतंत्र या स्वाश्रयी चर (independent variable) होता है; तथा दूसरा चर आश्रयी (dependent variable) होता है। प्रयोगात्मक शोध कार्य मे एक चर का दूसरे चर पर कैसे प्रभाव पडता है? उसका परिणाम क्या होता है? यह देखा जाता है। इस प्रक्रिया से किए जाने वाले प्रयोग को

प्रायोगिक अभ्यास कहते है। भौतिकशास्त्र, रसायनशास्त्र, जीवशास्त्र आदि प्राकृतिक विज्ञान के विषयों मे प्रयोगात्मक अनुसंधान का अत्यधिक प्रचलन है। सामाजिक शास्त्रों मे भी प्रयोगात्मक अनुसंधान होता है। परंतु सामाजिक शास्त्रों के प्रयोग मे स्वाश्रयी चरों का परिणाम शुद्ध रूप मे जानना कठीन या अशक्य प्राय होता है। क्योंकि सामाजिक शास्त्रों मे प्रयोगशाला प्रत्यक्ष समाज होने के कारण इसके प्रयोग जब किसी जीवित व्यक्ति पर किए जाते है तो उसमे मर्यादा पडती है। अतः प्रयोगशाला के आधार पर प्रयोगात्मक अनुसंधान अथवा उसके प्रयोग के दो प्रकार बतायें जा सकते है।

(अ) वैज्ञानिक प्रयोग एवं (ब) सामाजिक प्रयोग

वैज्ञानिक प्रयोग तो प्रयोगशाला मे किए जाते है; परंतु सामाजिक प्रयोग प्रत्यक्ष समाज मे किए जाते है। वैज्ञानिक प्रयोगशाला मे स्वाश्रयी चर का आश्रयी चर पर होने वाले प्रभाव का प्रत्यक्ष निरीक्षण और अध्ययन किया जाता है।

सामाजिक प्रयोग मे दो प्रकार की परिस्थितियों मे अध्ययन किया जाता है। एक; जब घटना घट रही हो तब उसके परिणामोंका अध्ययन किया जाता है; और दूसरा जब घटना घट चुकी हो और परिणाम सामने हो तब। पहली स्थिति मे जब घटना घट रही होती है; तब वह कृत्रिम रूप में निर्माण करते हुए और स्वाश्रयी चर को नियंत्रण मे रखते हुए उसके परिणामों का शोध किया जाता है। स्वाश्रयी चर बदल दिया तो उसका आश्रयी चर पर होने वाले परिणाम का अध्ययन किया जाता है। ऐसे नियंत्रित स्थिति मे जब अध्ययन किया जाता है तब उसे नियंत्रित प्रयोग कहते है।

सामाजिक प्रयोग की दूसरी स्थिति अनियंत्रित होती है। यह अनियंत्रित स्थिति तब होती है; जब घटना घट चुकी हो। उदा अतिवृष्टि, आग लगना, दुर्घटना आदि घटनाओं मे केवल परिणामों का अध्ययन किया जाता है। इसमे स्वाश्रयी चर अपने नियंत्रण मे नही होता। ऐसी स्थिति मे अतिवृष्टि क्यों हुयी? आग क्यों लगी? दुर्घटना क्यों हुयी? आदि प्रश्नों के उत्तर खोजने का जब प्रयास किया जाता है तो; कारणों का अर्थात स्वाश्रयी चर का शोध करना पडता है। इस प्रकार के कोई भी शोध कार्य मे स्वाश्रयी चर कारण (Cause) होता है; तो आश्रयी चर परिणाम (effect) होता है। दूसरी अनियंत्रित स्थिति का उदाहरण स्वाईन फ्ल्यू जैसी बिमारी का फैलना और दवा का उपलब्ध ना होना। ऐसी स्थिति मे डॉक्टर जब इलाज करता है; तो जो दवायें उपलब्ध है उसी का प्रयोग किया जाता हैं। ऐसी स्थिति मे अगर कोई दवा का अच्छा परिणाम होता है; तब वह प्रयोग सार्थक या यशस्वी माना जाता है। ऐसे उपलब्ध स्थिति मे अगर कोई प्रयोग किया जाता

है तब उसे भी अनियंत्रित प्रयोग माना जाता है। इस प्रकार नियंत्रित स्थिति मे स्वाश्रयी चर एवं संबंधित बाह्य प्रभावकारी चर (external variables) को प्रयोग कर्ता या शोध कर्ता अपने नियंत्रण मे रख कर जब प्रयोग करता है; तब उसे विशुद्ध प्रयोग (pure experiment) कहते है। इस प्रकार के प्रयोग प्रयोगशाला मे ही किए जाते है। परंतु सामाजिक विज्ञान के सभी विषय क्षेत्र मे बाह्य चरों का नियंत्रित करना संभव नही होता तब उपलब्ध परिस्थिति मे या यथास्थित अवस्था मे जब प्रयोग किया जाता है तब उसे अर्ध प्रायोगिक शोध (semi / quasi experimental research) प्रकार कहते है।

(ग) आधार सामग्रीनुसार शोध प्रकार :

विश्व के किसी भी विद्या शाखा मे किए जाने वाले शोध कार्य मे जो भी आधार सामग्री (data) संकलित की जाती है; उसके दो प्रकार बताये जाते है। (अ) गुणात्मक आधार सामग्री (qualitative data) और (ब) संख्यात्मक आधार सामग्री (quantitative data) जब आधार सामग्री के प्रकार होते है; तब उसकी विश्लेषण पद्धति (method of data analysis) भी अलग अलग होती है। इस तरह आधार सामग्री के अनुसार भी शोध कार्य के दो प्रकार किए जा सकते है।

(ग.1) गुणात्मक शोध (qualitative research)

(ग.2) संख्यात्मक शोध (Quantitative research)

(ग.1) गुणात्मक शोध : किसी भी शोध कार्य मे अनुसंधान के उद्देश्य पुर्ति के लिए जो आधार सामग्री संकलित की जाती है; उसमे विभिन्न संदर्भ ग्रंथ, ग्रंथालय, संग्रहालय, पांडु लिपियां, ऐतिहासिक पत्र, गोपनीय सूचना, शोध पत्रिकायें अथवा नियतकालिक शोध सामग्री आदि का उल्लेख किया जा सकता है। इनके द्वारा शाब्दिक या वर्णनात्मक रूप मे कोई संदर्भ, प्रमाण या उदाहरण अथवा तत्सम कोई सूचना प्राप्त होती है; जो संख्या के रूप मे ना होकर केवल शाब्दिक वर्णन के रूप मे होती है; उसे गुणात्मक अथवा वर्णनात्मक आधार सामग्री कहते है। इस गुणात्मक आधार सामग्री का तर्कों के आधार पर सुसंगत एवं क्रमानुसार स्पष्टीकरण किया जाता है; तब उस शोध कार्य को गुणात्मक शोध कहते है। इस प्रकार का शोध कार्य दर्शन शास्त्र, इतिहास, समाजशास्त्र, भाषाशास्त्र, वाड्मय, राज्यशास्त्र, आदि विषयों मे अधिकांश मात्रा मे होता है। शिक्षाशास्त्र, मनोविज्ञान, वाणिज्य, अर्थशास्त्र, भूगोल, व्यवस्थापन, आदि सामाजिक विज्ञान के विषय

क्षेत्र मे भी यह शोध प्रकार होता है; परंतु इन विषय क्षेत्रों मे संख्यात्मक शोध का उपयोग अधिक मात्रा मे होता है।

(ग.2) संख्यात्मक शोध : जब किसी शोध कार्य के उद्देश्य पुर्ति के लिए सकंलित की गयी आधार सामग्री संख्यात्मक होती है; तब उसे संख्यात्मक शोध कहना चाहिए इस प्रकार के संख्यात्मक प्रदत्त सामग्री का संकलन प्रश्नावली, पडताल सूची, पदनिर्धारण श्रेणी, मनोवैज्ञानिक परीक्षण आदि विभिन्न प्रकार के शोध उपकरणों द्वारा किया जाता है तथा उसका विश्लेषण सांख्यिकीय सूत्रों द्वारा किया जाता है। इस प्रकार के संख्यात्मक शोध अर्थशास्त्र, भूगोल वाणिज्य, शिक्षाशास्त्र, मनोविज्ञान अथवा गणितीय विज्ञान जैसे विभिन्न विषय–क्षेत्रों मे होता है। विषय कोई भी हो; किसी भी प्रकार के शोध कार्य के लिए विषय की कोई मर्यादा नही होती। शोध समस्या का स्वरूप, उसके उद्देश्य और उसके अनुरूप संकलित किए जाने वाली प्रदत्त सामग्री के आधार पर ही शोध का प्रकार क्या है? यह समझ सकते है। अतः शोध कर्ता इसी के आधार पर अपने शोध कार्य का प्रकार निर्धारित कर सकता है।

अनुसंधान के उपर्युक्त सभी प्रकार को समझने के बाद ये भी समझना आवश्यक होगा की; शोध के अन्य और कई प्रकार बताये जा सकते है। परंतु यह सब केवल भाषा एवं विषय भिन्नता के कारण; तथा भिन्न भिन्न सोच एवं दृष्टिकोण के आधार पर बताये जा सकते है। उनकी सोच एवं दृष्टिकोण मे भिन्नता होनी एक स्वाभाविक बात है। शोध विज्ञान यह एक ऐसा विषय है की; यह सभी विद्या शाखाओं मे एवं विषयों मे लागू पडता है। अतः सभी विषय क्षेत्र के भिन्न भिन्न लेखकों ने इस विषय पर पुस्तके लिखी है। हर एक विषय का लेखक अपने विषय क्षेत्र के उदाहरण देते हुए पुस्तकों का लेखन करते है। इसी के कारण अन्य किसी भी विषय की तुलना मे अनुसंधान विधि शास्त्र पर सबसे अधिक पुस्तकें प्रकाशित हुयी होगी। अनुसंधान विधि शास्त्र पर सबसे अधिक पुस्तकें प्रकाशित होनेका दूसरा एक उतना ही महत्व पूर्ण कारण यह भी है की; यह विषय प्रत्येक विद्या शाखा के प्रत्येक विषय के अध्ययनकर्ता को उपयोगी है। सभी क्षेत्र के अभ्यासक इस विषय से संबंधित होते है। प्रत्येक क्षेत्र के अभ्यासकों का विभिन्न दृष्टिकोण, मतभिन्नता, शब्दभिन्नता, अर्थभिन्नता होने के कारण अनुसंधान के भिन्न भिन्न प्रकार बतायें जाते है। इतनी ज़्यादा भिन्नता होने के कारण हर एक अभ्यासक अपनी सोच के अनुसार इसके प्रकार बना सकते है। अतः इस बारे मे स्वयं शोधकर्ता को अपने शोध कार्य का प्रकार निर्धारित करना चाहिए; और उसका स्वयं ही स्पष्टीकरण करना चाहिए ।

इकाई 3 शोध विधियां

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य
3.1 प्रस्तावना
3.2 शोध विधियों का वर्गीकरण
3.3 शोध विधियों के प्रकार: ऐतिहासिक शोध विधियां
3.4 शोध विधियों के प्रकार: वर्णनात्मक शोध विधियां
3.5 शोध विधियों के प्रकार: प्रयोगात्मक शोध विधियां
3.6 सारांश
3.7 बोध प्रश्न
3.8 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

3.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप :

- ।
- ।
- ।

3.1 प्रस्तावना

शोध विधियों का वर्गीकरण

जिस तरह शोध के अनेक प्रकार बताए जाते है; ठीक उसी तरह उसकी विधियाँ भी अनेक प्रकार की होती है। अधिकतम लेखकों ने शोध प्रकार एवं शोध विधियों का मिश्रण कर दिया है; जिससे अध्ययनकर्ता के दिमाग में संभ्रामकता निर्मित हो जाती है। यह इसलिए होता है कि; अनुसंधान के प्रकार एवं अनुसंधान की विधियां दोनो के शीर्षक काफी मिलते जुलते होते है। अनुसंधान के प्रकार एवं अनुसंधान की विधियों के नाम और शीर्षको में साम्यता होना भी एक स्वाभाविक बात है। क्योंकि शोध का प्रकार अथवा शोध समस्या का स्वरूप देखकर ही तो शोध पद्धति निर्धारित होती है। इस दृष्टि से देखा जाये तो शोध प्रकार और शोध विधियों में बहुत ज़्यादा भिन्नता नही होती है। जैसा

पहले बताया जा चुका है कि; शोध के प्रकार अनेक होते है; और शोध विधियाँ भी अनेक प्रकार की होती है। प्रत्येक लेखक के अपने व्यक्तिगत मतानुसार नए नए प्रकार एवं नयी नयी विधियाँ बताई जाती है। वास्तव में अनेक शोध प्रकार एवं शोध विधियों मे केवल शाब्दिक भिन्नता से अधिक अन्य कोई भिन्नता दिखायी नही देती। फिर भी भिन्नता तो होती है। इसलिए यह बात ध्यान में रखना जरूरी है कि; अनुसंधान के प्रकार एवं शोध विधियां दोनो भिन्न भिन्न होते है। दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि; उन सभी शोध प्रकार या शोध विधियों को अगर वर्गीकृत किया जाए; तो उन सबको मात्र तीन प्रकार में ही विभाजित किया जा सकता है; जो निम्नलिखित है।

शोध विधियों का वर्गीकरण	शोध प्रकार का वर्गीकरण
(1) ऐतिहासिक शोध विधियाँ	(1) ऐतिहासिक शोध
(2) वर्णनात्मक शोध विधियाँ	(2) वर्णनात्मक शोध
(3) प्रयोगात्मक शोध विधियाँ	(3) प्रयोगात्मक शोध

शोध विधियों के प्रकार

अनुसंधान की विभिन्न विधियों को निम्नलिखित तीन प्रकारों मे वर्गीकृत किया जा सकता है। जिससे अनुसंधान की विभिन्न विधियों का स्पष्टीकरण एवं आकलन सुगम एवं सरल हो सकता है; तथा अनुसंधान के प्रकार एवं विधियों मे संभ्रामकता दूर होकर दोनो का स्वरूप अधिक स्पष्ट हो सकता है।

(क) ऐतिहासिक शोध विधियाँ (Historical Research Methods)

(ख) वर्णनात्मक शोध विधियाँ (Discriptive Research Methods)

(ग) प्रयोगात्मक शोध विधियाँ (Experimental Research Methods)

(क) ऐतिहासिक शोध विधियां (historical research methods)

(क.1) पुरातत्वीय शोध विधि

(क.2) प्रलेख विश्लेषण विधि

(क.3) विकासात्मक शोध विधि

(क.4) अनुवंशीय शोध विधि

(क.1) पुरातत्वीय शोध विधि (archiological research method) :

इतिहास विषय का अध्ययन करने के लिए संपूर्ण इतिहास के साधारणतया कुछ काल खंड बनाए जाते है। जिस म प्रागैतिहासिक काल (prehistoric period), प्राचीन काल (ancient period), मध्य युगीन काल (medieval period) एवं अर्वाचीन काल (modern period) के रुप वर्गीकृत करते हुए उसका वर्णन किया जाता है। इतिहास के अलिखित वर्णन को ही प्रागैतिहासिक काल माना जाता है। जिस कालावधि का इतिहास लिखित रूप में नही मिलता उसका अध्ययन उत्खनन से प्राप्त प्रमाणों से किया जाता है। इतिहास का अध्ययन करने के लिए अधिकांश विश्वविद्यालयों में इतिहास विभाग की स्थापना की गई है। साथ मे पुरातत्व विभाग द्वारा भी शोध कार्य किया जाता है। परंतु इसके अलावा शासकीय स्तर पर अध्ययन करने के लिए पुरातत्व विभाग की स्थापना की गई है। जो प्रमाण हमें संदर्भ पुस्तकों से प्राप्त होते है; जब उसका अध्ययन उत्खनन से प्राप्त प्रमाणों के आधार पर निष्कर्ष निकालकर किया जाता है; तब उसे पुरातत्वीय शोध विधि कहा जा सकता है। इस तरह इस विधि से अज्ञात इतिहास का शोध अध्ययन किया जाता है। पुरातत्व शोध विधि एक ऐतिहासिक शोध विधि का प्रकार है।

(क.2) प्रलेख विश्लेषण पद्धति (doumentary analysis method) :

प्रागैतिहासिक कालखंड के बाद प्राचीन इतिहास का काल प्रारंभ होता है। प्राचीन इतिहास का वर्णन लिखित रूप में पाया जाता है। घटना, प्रसंग, चरित्र, जीवनवृत्त, वाङ्.मय आदि के लेखन कार्य का प्रारंभ इ.स. पूर्व 400 के आसपास होने का अनुमान है। भारत में लिखित रूप मे जो इतिहास का वर्णन उपलब्ध है; वह महान सम्राट अशोक के कार्यकाल में शुरू हुआ था। सम्राट अशोक के बाद जो भी लेखन हुआ वो इतिहास के स्तर पर नही; बल्कि वाङ्.मय के रूप में उपलब्ध है। वाङ्.मय में लेखक अपनी कल्पनाओं के आधार पर कोई रचना करता है; परंतु इतिहास सत्य घटनाओं पर आधारित होता है। भारतीय इतिहासकारों ने प्राचीन इतिहास का लेखन करते हुए इसवी सन का जिक्र नही किया। इसलिए भारत के प्राचीन इतिहास के बारे विभिन्न प्रकार की मत भिन्नता पायी जाती है। कालानुक्रम से सही इतिहास का अनुमान लगान हेतु प्राचीन वाङ्.मय का ही सहारा लेना पडता है। इसी लिए वाङ्.मय के रूप में भरपूर लेखन होने के बावजूद भी भारत के प्राचीन इतिहास का अध्ययन करने में कठिनाईयाँ आती है। अतः साहित्यकारों ने जो वाङ्.मय निर्माण किया; उसका विश्लेषण करते हुए इतिहास का शोध अध्ययन करना पडता है। ऐसे वाङ्.मय का विश्लेषण करना ही प्रलेख या दस्तावेज विश्लेषण पद्धति है। वाङ्.मय में लिखित सभी बाते सत्य नही हो सकती; तथा सभी बाते झूठ भी

नही हो सकती। इसलिए शोध कर्ता को इन बातों को ध्यान में रखते हुए अत्यंत सतर्कता से प्राचीन वाड्.मय के लिखित प्रलेखों का विश्लेषण करना पडता है; और शोध अध्ययन करना पडता है। प्रलेख विश्लेषण में केवल वाड्.मय का ही अध्ययन नही किया जाता; बल्कि संरक्षित किए गए प्रलेख, संचित रेकॉर्ड, कार्यालयीन लेख, पत्र आदि का भी विश्लेषण किया जाता है; जिसमें पुस्तक, अहवाल, हस्तलिखित या पांडु लिपियों का भी समावेश होता है। उन सब लिखित प्रलेखों का विश्लेषणात्मक अध्ययन करते हुए इतिहासकालीन घटनाओं का अनुमान लगाया जाता है; और सत्य की खोज की जाती है। इस पद्धति को प्रलेख या दस्तावेज विश्लेषण पद्धति कहते है।

(क.3) विकासात्मक शोध पद्धति (Developmental Research Method)

'विकासात्मक अध्ययन' इस शब्द का संबंध जैविक विज्ञान से जोडा जाता है। इस शब्द का सर्व प्रथम प्रयोग शायद जीव विज्ञान मे ही किया गया हो। डार्विन का विकासवाद का सिद्धांत (Theory of Eevolution) इस पद्धति का एक उत्तम उदाहरण हो सकता है। परंतु आजकल इस विधि का प्रयोग इतिहास, समाजशास्त्र, मनोविज्ञान आदि विषय क्षेत्रों कें अध्ययन में भी किया जाने लगा है। शिक्षाशास्त्र मे भी इस पद्धति का उपयोग होने लगा है। पियाजे का बोधात्मक विकास (Cognitive Development) और कोलबर्ग का नैतिक विकास सिद्धांत (Theory of Moral Delvelopment) विकासात्मक शोध अध्ययन के उदाहरण है। इस पद्धति द्वारा किसी व्यक्ति, व्यक्तिसमूह, समाजजीवन, सांस्कृतिक परिवर्तन, नगरीकरण, संस्थागत विकास आदि का अध्ययन किया जा सकता है। किसी संस्था के निर्माण या स्थापना वर्ष से वर्तमान तक या किसी विशिष्ट कालखंड में पाये गए परिवर्तन, उतार–चढाव, सुधारणा अथवा प्रगति का आलेख स्पष्ट करते हुए और उसका विश्लेषण करते हुए इस विधि से शोध अध्ययन किया जाता है। इसमें किसी व्यक्ति, संस्था या व्यक्ति–समूह के विकास की प्रवृत्ति (Trend) का अध्ययन किया जाता है। अतः इसे विकासात्मक प्रवृत्ति (Developmental Trend) के रूप में भी प्रस्तुत किया जाता है। इस पद्धति में भिन्न भिन्न दृष्टिकोण से लेकर कुछ प्रकार भी बताए जाते है। उदाहरण के लिए

(a) मध्यरेखीय विकासात्मक अध्ययन पद्धति (Longitudinal Developmental Study)

(b) प्रतिविभागीय विकासात्मक अध्ययन पद्धति (Cross Sectional Developmental Study)

(c) प्रवृत्ति विषयक विकासात्मक अध्ययन पद्धति (Trend Related Developmental Study)

विकासात्मक अध्ययन पद्धति का महत्व :

- किसी व्यक्ति, समूह या संस्था के विकास की प्रगती व प्रवृत्ति कैसी है? यह जानने के लिए विकासात्मक अध्ययन पद्धति उपयुक्त है।
- भविष्य के बारे में अनुमान लगाने के लिए इस प्रकार के अध्ययन का अच्छा उपयोग हो सकता है।
- विकासात्मक अध्ययन पद्धति से विकास की दिशा का ज्ञान होता है।
- विकास प्रक्रिया के संदर्भ में व्यक्तिगत विशेषताओं का अध्ययन करना एक अच्छी पद्धति मानी जाती है।
- विकासात्मक अध्ययन पद्धति से विकास प्रक्रिया में आनेवाली कठिनाईयों का मापन किया जा सकता है।
- इस पद्धति से व्यक्तिगत, समूह, जाति, जन जाति अथवा किसी संस्था का भी अध्ययन कर सकते है।
- एक विशिष्ट दिशा में व्यापकता से तथा गहराई से भी अध्ययन कर सकते है।
- इस पद्धति से विकास प्रक्रिया का अध्ययन करने से संसाधन, वित्त तथा समय अधिक लग सकता है; फिर भी यह एक उत्कृष्ट पद्धति समझी जाती है।

विकासात्मक अध्ययन पद्धति के दोष :

- यह एक बहुखर्चिक अथवा व्ययपरक पद्धति है।
- इस अध्ययन पद्धति में श्रम एवं समय ज्यादा लगता है।
- यह एक दीर्घ प्रतिक्षित अध्ययन पद्धति है।
- यह एक दीर्घकालीन अध्ययन प्रक्रिया होने के कारण प्रतिदर्श (Sample) और उनसे प्राप्त प्रतिसाद (Response) प्रभावित हो सकते है; जिसका प्रभाव सीधा निष्कर्ष पर होता है।
- इस पद्धति से अध्ययन करने वाले शोधकर्ता को अत्यधिक बुद्धिमान एवं अनुभवी होना आवश्यक होता है।
- विकासात्मक अध्ययन पद्धति से विकास की दिशा का ज्ञान होता है।

(क.4) आनुवंशीय शोधपद्धति (Ethnographic Method)

यह विकासात्मक अध्ययन पद्धति से मेलजोल रखने वाली अध्ययन विधि है। इस पद्धति को 'Genetic Study' भी कहा जा सकता है। किसी व्यक्ति या समूह के उत्पत्ति संबंधी या वंश, परंपरा, संस्कृति संबंधी यथार्थ परिस्थिति का अध्ययन करने के लिए इस पद्धति का उपयोग किया जाता है। विकासात्मक अध्ययन का संबंध उत्पत्ति के बाद से शुरू होता है। परंतु अनुवंशीय शोध पद्धति में उत्पति से लेकर अध्ययन शुरू होता है। इसलिए यह एक उद्‌गम विषयक तथा सांस्कृतिक विकासात्मक अध्ययन दोनो से संबंध रखने वाली पद्धति है। व्यक्ति का जन्म, जाति, वंश, परंपरा, संस्कृति, समाजीकरण आदि सब का व्यापक अध्ययन इस पद्धति से किया जाता है। इसलिए यह पद्धति विकासात्मक पद्धति से मिलती जुलती होने के बावजुद भी इसकी अलग विशेषताएँ है।

आनुवंशीय शोध पद्धति की विशेषताएँ :

- इसी पद्धति द्वारा व्यक्ति या व्यक्ति समूह का मूल तथा उनके सामाजिक एवं सांस्कृतिक परंपराओं का अध्ययन किया जाता है।
- इस में गुणात्मक (quantitative) और मात्रात्मक (quartitative) दोनो प्रकार का अध्ययन किया जा सकता है।
- इस पद्धति से व्यापक एवं सर्वसमावेशक अध्ययन कर सकते है।
- इस पद्धति मे यथास्थित परिस्थिति का वर्णन किया जाता है। इस म किसी चर (variable) को या कारकों (factors) को नियंत्रित करने की आवश्यकता नही रहती।
- इसमें किसी भी प्रकार के पूर्व निर्धारित निकष या शर्तों का आधार लेने की आवश्यकता नही रहती। सामान्य स्थिति में ही अध्ययन कर सकते है।
- इस पद्धति से किए गए शोध कार्य की गुणवत्ता व प्रामाणिकता शोधकर्ता को अपना अनुभव एवं सोच पर निर्भर करती है।
- यह एक प्रकार की निगरानी व चौकसी प्रक्रिया से युक्त (Inquiry Proverst) अध्ययन विधि है।
- उद्‌गामी या अवगामी (imductive / deductive) तकनीकी का उपयोग किए बिना भी आधार सामग्री का विश्लेषण इस पद्धति से अध्ययन किया जा सकता है।
- इसमें अवलोकन (observation) तकनीकी का उपयोग अधिक प्रभावशाली होता है।
- इस पद्धति में शोधकर्ता की जिज्ञासा एवं अवधारणाओं का उपयोग अत्यंत महत्वपूर्ण है।

आनुवंशीय शोधपद्धति की मर्यादा अथवा सीमा :

- इस पद्धति में के किए जानेवाले शोध कार्य में जब अवलोकन तकनीकी का उपयोग किया जाता है तब प्रत्यक्ष शोधकर्ता का स्वयं सहभागी होकर अवलोकन करना अत्यंत कठीन कार्य होता है।
- ऐसा अवलोकन वैज्ञानिक दृष्टि से तर्कशुद्ध एवं निर्दोष या अचूक होने का दावा नही कर सकता।
- स्वयं अवलोकन करनेवाला शोधकर्ता भी अपने आपको निष्पक्षपाती होने का दावा नही कर सकता।
- न्यादर्श निर्धारण और चयन में बाधा आती है।
- इस पद्धति से शोध उद्देश्य प्राप्त करने के लिए अनुरूप आधार सामग्री एवं संबंधित संपूर्ण जानकारी पूरी तरह से मिलना कठीन होता है।
- इस पद्धति के शोध कार्य में परिकल्पना (Hypothesis) निश्चित कर सकते है; परंतु उसका परीक्षण नही कर सकते।
- निर्धारित की गई परिकल्पनाओं में परिवर्तन होने के कारण शोध कार्य की दिशा बदलने की संभावना होती है और शोध अध्ययन दिशाहीन बनने की संभावना होती है।
- पूर्व निर्धारित गहन परिस्थिति का शोध कार्य पर विपरीत प्रभाव पड़ सकता है।
- शोधकर्ता का अनुभव और सोच उचित एवं पर्याप्त न होने पर इस पद्धति का शोध कार्य वांछित उद्देश्य पूर्ण नही हो सकता।

(ख) वर्णनात्मक शोध विधियां (Descriptive Research Methods) :

वर्णनात्मक पद्धति द्वारा सामाजिक क्षेत्र में शोध कार्य अत्यधिक प्रचलित है। इस पद्धति से वर्तमान स्थिति का अध्ययन किया जाता है। इससे विभिन्न परिस्थिति में घटनाओं की तुलनात्मक समीक्षा कर सकते है; तथा घट चुकी घटनाओं का भी विश्लेषण किया जाता है। शोध समस्या का स्वरूप और उद्देश्य ध्यान में रखते हुए वर्णनात्मक शोध विधि में अंतर्भूत किसी एक विशिष्ट पद्धति का अनुसरण करते हुए शोध कार्य किया जाता है। वर्णनात्मक अनुसंधान विधियों मे सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र मे एक बहुप्रचलित अनुसंधान पद्धति का वर्गीकरण होता है। समाजशास्त्र, राज्यशास्त्र, अर्थशास्त्र, इतिहास, वाड़मय, आदि विषयों के क्षेत्र मे किए गए अधिकांश शोध कार्य के प्रलेखोंमे (Thesis)

निबंधनात्मक वर्णन किया जाता है। इसमे किसी एक विषय क्षेत्र या उप विषयांश पर सरल एवं समतल लेखन किया जाता है। किसी विशिष्ट शोध समस्या से संबंधित अप्रकाशित अथवा दुर्लभ जानकारी या सूचना का संकलन करते हुए और उसे सुसंगत क्रम से वर्णित करते हुए उसे सूत्रबद्ध पद्धति से प्रस्तुत किया जाता है। इस तरह से किए गए वर्णनरूपी शोध कार्य को वर्णनात्मक शोध कह सकते है। वर्णनात्मक प्रकार के अनुसंधान मे चरों (Variables) या परिकल्पना (Hypothesis) की आवश्यकता नही होती। वर्णनात्मक शोध विधि को परिभाषित करते हुए जॉन डब्ल्यू. बेस्ट ने कहा है की, "जो परिस्थिती जैसी है, जिस प्रकार है, जो व्यवहार प्रचलित है, जो संबंध विद्यमान है; उसका वर्णन किया जाता है। जो प्रकिया चल रही है, उसका वर्णन किया जाता है। जो अभिवृत्तियां पायी जाती है; उसका वर्णन किया जाता है। अर्थात वर्णनात्मक शोध केवल यथास्थित परिस्थिति का वर्णन करता है। वर्णनात्मक शोध विधियों के प्रकार में निम्न लिखित शोध विधियों का उल्लेख एवं वर्णन किया जा सकता है।

(ख.1) व्यष्टि अध्ययन पद्धति (Case Study method) :

व्यष्टि अध्ययन पद्धति को वृत्तेतिहास अध्ययन पद्धति भी कहा जाता है। ऐतिहासिक अध्ययन पद्धति की तरह यह भी एक महत्वपूर्ण अध्ययन पद्धति मानी जाती है। व्यष्टि अध्ययन पद्धति को भी ऐतिहासिक अध्ययन पद्धति की तरह माना जा सकता है। परंतु इसमे किसी एक व्यक्ति, एक समूह, एक घटना, एक वस्तु, संस्था, नगर, राज्य, राष्ट्र अथवा किसी भी तरह का, एक संपूर्ण युनिट के सभी प्रासंगिक आयामों का (aspects) सर्वांग दृष्टि से अध्ययन करना हो, तो वह व्यष्टि अध्ययन पद्धति से किया जाता है। इसमे किसी विशिष्ट परिस्थिति का अध्ययन अपेक्षित होता है। इस विधि को अनेक लेखकों ने अपने अपने शब्दों में परिभाषित किया है; जो निम्नलिखित है।

- पी. व्ही. यंग के मतानुसार "case study is a method of explaining and analyzing the life of a social unit, be that a person, family,. institution, cultural group or even on entire community".
- थॉमस (Thomas : 2011) के मतानुसार "case Studies are analys of person, events, delicious, periods, projects, policies institutions or other systems that are studied holistically by one or more methods. case study is a form of qualitative analysis in which one individual, one situation, an event,

institution or some idea or ideology or any social group or working of an institution is completely & deeply examined."

- **सी. व्ही. गुड** (C. V. Good - 1959) **के मतानुसार** " The basic approach of the case study is to deal with all pertinent aspects of one thing or situation with the unit for study an individual a social, institution or agency such as a school or a community or cultured group such as town."

उपर्युक्त परिभाषाओं का अवलोकन करते हुए व्यष्टि अध्ययन पद्धति की एक व्यापक एवं परिपूर्ण व्याख्या बनाई जा सकती है कि; 'किसी व्यक्ति, समूह, समाज, संस्था, संस्कृति, वंश या अन्य किसी भी युनिट का व्यापक एवं सम्पूर्ण विश्लेषणात्मक अध्ययन करने की तर्कशुद्ध अध्ययन पद्धति ही व्यष्टि अध्ययन पद्धति है'।

उक्त परिभाषाओं के आधारपर व्यष्टि अध्ययन पद्धति की विशेषतायें अग्रलिखीत रूपमे बतायी जा सकती है।

व्यष्टि अध्ययन पद्धति की विशेषतायें :

1) व्यष्टि अध्ययन पद्धति मे न केवल किसी व्यक्ति के पूर्व इतिहास का अध्ययन है; बल्कि इसमे संपूर्ण युनिट के प्रणाली का (System) अध्ययन किया जाता है।
2) इसमें आवश्यक सामग्री (data) का संकलन किसी व्यक्ति, व्यक्ति समूह, संस्था अथवा वर्ग से किया जाता है।
3) यह एक प्रकार का गुणात्मक एवं संख्यात्मक अनुसंधान का पर्यायी उपयोग है।
4) इसमें प्रदत्त सामग्री का स्वरूप संख्यात्मक भी हो सकता है; परंतु उसका स्पष्टीकरण वर्णनात्मक रूप से किया जाता है।
5) इस पद्धति से किसी संस्कृति, रीति–रिवाज, परंपरा; अथवा जीवन पद्धति की प्रवृत्ति (Trend) की दिशा का अध्ययन किया जाता है। इससे आचरण प्रवृत्ति का भी अध्ययन किया जाता है।
6) यह एक वैज्ञानिक अवलोकन की कृत्रिम रचना है।
7) इस पद्धति से कारक घटकों (cousing parts); जो स्वतंत्र चर (independent variables) होते है; मे परस्पर एवं आंतरिक संबंध का अध्ययन किया जाता है।

व्यष्टि अध्ययन पद्धति का महत्व (inipartance of case study) :

- इस पद्धति से किसी एक युनिट के सभी आयामों का परिपूर्ण एवं समग्र अध्ययन करना संभव होता है। संपूर्ण युनिट का विकास अथवा बाधाओं के अंतर बाह्य अध्ययन में यह विधि सहायक सिद्ध हो सकती है।
- शोघ अध्ययन के उद्देश्यों के अनुसार अध्ययन मे उपयुक्त परिकल्पना का निर्धारण करने में सहायक होती है।
- प्रश्नावली, साक्षात्कार, पडताल सूची, अवलोकन, पदनिर्धारण श्रेणी (rating scate) आदि उपकरणों का निर्माण करना आसान होता है। इससे आधार साम्रगी का संकलन करने में सुलभता रहती है।
- एक ही समूह के अंतर्गत सभी इकाई को विभाजित कर उनके समस्त पहलुओं का अवलोकन करने में सहायता मिलती है।
- शोधकर्ता को अपने शोध कार्य का व्यक्तिगत एवं शोध परिक्षेत्र का अनुभव प्राप्त होता है; जो संबंधित घटकों के संदर्भ में निष्कर्ष निकालने म उपयुक्त होता है।
- इस पद्धति का उपयोग सबसे अधिक निदानात्मक एवं उपचारात्मक मनोविज्ञान में बहुत अच्छा होता है।
- इस पद्धति में मानवीय व्यवहार या आचरण के मूलभूत आयामों का काफी निकटता से परिचय होता है, जिससे शोधकर्ता सरलता से अनुभव कर निर्णय ले सकता है।
- जीवनोपयोगी विकास मार्ग का चयन करने में परामर्श करने हेतु इस पद्धति का उपयोग अत्यधिक होता है।
- निदानात्मक एवं उपचारात्मक मनोविज्ञान में यह पद्धति अत्यधिक उपयुक्त सिद्ध हो सकती है।
- किसी के व्यक्तिगत जीवन में सुधार लाने हेतु यह पद्धति अत्यंत उपयुक्त है।
- सामाजिक विकास कार्य की दिशा निर्धारित करने में अत्यंत उपयुक्त है।
- सामाजिक, सांस्कृतिक एवं मानसिक परिवर्तन में अत्यंत उपयुक्त है।
- सामाजिक जीवन के संपूर्ण पर्यावरण का आकलन करने में उपयुक्त है
- किसी भी व्यक्तिगत, सामाजिक, संस्थागत समस्या का अध्ययन करने में शोधकर्ता को मानसिक अनुभूति द्वारा एक दृष्टि या सोच विकसित होती है; जिससे शोध अध्ययन वास्तविकता के अधिक निकट पहुचता है।

व्यष्टि अध्ययन पद्धति की सीमायें :

- अन्य विधि की तुलना मे यह बहुत खर्चीली, और अधिक समयावधि लाने वाली पद्धति है।
- जिज्ञासा की गहराई तक ले जाने वाली पद्धति है; परंतु विस्तार व व्यापकता से परे है।
- प्रारंभ में जिन इकाईयों का चयन किया जाता है; अंत में उनका प्रतिनिधिक साबित करना या निर्धारित करना कठिन होता है।
- जब सुविधा जनक पद्धति से प्रतिदर्श (Sample) का चयन किया जाता है तब उसकी स्वीकार्यता और विश्वसनीयता घट जाती है।
- इसके द्वारा प्राप्त होने वाले निष्कर्ष अत्यंत मर्यादित इकाईयों के आधार पर होते है। इससे किसी दिशा में झुकाव बढने की संभावना होती है।
- इस अध्ययन मे व्यक्तिनिष्ठता (subjectivity) की ओर झुकाव की संभावना होती है। इसमे वस्तुनिष्ठता (objectivity) लाना कठीन होता है।
- प्राप्त निष्कर्षो की विश्वसनीयता बहुत कम होती है।
- इसमे अंतर्भूत सभी घटकों पर नियंत्रण नही रख सकते; तथा उनकी तुलना भी नही कर सकते।

(ख.2) सर्वेक्षण शोध पद्धति (Survey Method) :

सामाजिक शोध प्रक्रिया में बहु प्रचलित एवं सर्वाधिक उपयोग सर्वेक्षण पद्धति का होता है। सामाजिक क्षेत्र के शोध कार्य में सर्वेक्षण पद्धति की एक अहम भूमिका होती है। यह एक अत्यंत लोकप्रिय अध्ययन पद्धति मानी जाती है। वर्तमान घटनाएँ तथा सामाजिक व्यवहारों का या उसमे आनेवाली समस्याओं का अध्ययन करने में सर्वेक्षण का अत्यधिक उपयोग होना ही, इस पद्धति की लोकप्रियता का कारण है। इस पद्धति से अर्थशास्त्र, राज्यशास्त्र, समाजशास्त्र, शिक्षाशास्त्र, मनोविज्ञान, वाणिज्य, व्यवस्थापन आदि सभी प्रकार के विषय–क्षेत्र में शोध कार्य कर सकते है। इतना ही नही बल्कि विज्ञान में भी इस पद्धति का उपयोग किया जाता है। सर्वेक्षण विधि का अर्थ निम्नलिखित परिभाषाओं से स्पष्ट हो सकता है।

कर्लिंगर के मतानुसार 'समाजशास्त्रीय एवं मनोवैज्ञानिक चरों में अंतरनिहित संबंध, सापेक्ष घटना एवं वितरण की खोज करने हेतु बहुत बडी जनसंख्या से कुछ सीमित मात्रा मे

छोटे समूह का प्रतिदर्श के रूप में चयन करते हुए शोध अध्ययन करना ही सर्वेक्षण है।' ("Survey research studies are undertaken in large population by selecting and studying samples chosen from the population to discover the relative insolence, distribution and inter relation of sociological and psychological variables".) -(Kerlinger-1996)

सी. ए. मोसर के मतानुसार; 'सामाजिक संबंध, व्यवहार एवं परिस्थिति का अध्ययन करने की, सर्वेक्षण एक विशुद्ध वर्णनात्मक पद्धति है। ("... a sarvey may equally have a purely descriptive purpose as a may of studying social conditional, relationship and behaviour") - (C.A.Moser)

मार्क अब्राहम्स के मतानुसार 'समाज के किसी एक समुदाय की संरचना एवं गतिविधियों के सामाजिक पहलुओं से संबंधित संख्यात्मक तथ्यों का संकलन करने की सामाजिक सर्वेक्षण एक प्रक्रिया है'। ("A social survey is the process by which quantitative facts are collected about the social aspects of a community's composition and activities".) - (Mark Abrahams)

पी. व्ही. यंग के मतानुसार, 'सामाजिक सर्वेक्षण का संबंध –

(1) सामाजिक सुधार एवं विकास के रचनात्मक कार्यक्रम का प्रतिपादन,

(2) विशिष्ट भौगोलिक क्षेत्र में याप्त विशिष्ट सामाजिक परिणामों एवं किसी महत्वपूर्ण प्रचलित सामाजिक समस्या का समाधान; और

(3) सामाजिक परिस्थिति का मापन एवं तुलना करने के लिए प्रतिदर्श के रूप में स्वीकृत किए गए उन सामाजिक घटकों से है'। (P. V. Young)

बर्गस के मतानुसार, 'किसी विशिष्ट समुदाय के विकास का रचनात्मक कार्यक्रम प्रस्तुत करने हेतु उनकी परिस्थिति एवं आवश्यकताओं का वैज्ञानिक अध्ययन ही सर्वेक्षण है'। - (Burges)

डिक्शनरी ऑफ सोशियॉलॉजी के अनुसार 'किसी एक समुदाय के संपूर्ण जीवन का अथवा उनके किसी अंग का जैसे स्वास्थ्य, शिक्षा, मनोरंजन आदि के बारे में सर्व समावेशक तथ्यों का विश्वस्त एवं व्यवस्थित संकलन और विश्लेषण करना अर्थात सर्वेक्षण है। ("A term .... used rather loosely to indicate a more or less orderly and compra hens gathering and analysis of facts around the total life of a community

or some phase of if; e.g. health, education, recreation....") (Dictionary of Socialogy)

वेबस्टर डिक्शनरी के अनुसार 'वास्तविक जानकारी प्राप्त करने के लिए किए जाने वाले आलोचनात्मक अवलोकन को सर्वेक्षण कहा जाता है'। ("A critical inspection, often official, to provide exact information : often a study of an area with respect to a certain condition or its pressure lance : as a survey of...") (Webstar Dictionary)

उपर्युक्त सभी परिभाषाओं से यह स्पष्ट होता है की; सर्वेक्षण विधि से किसी एक विशिष्ट समुदाय या सामाजिक घटक के विकास के लिए उसकी समस्याओं का अध्ययन करने तथा उसका समाधान खोजने हेतु उस समुदाय से कुछ स्वीकृत किए गए प्रतिदर्श जनसंख्या से वर्तमान परिस्थिति से संबंधित वास्तविकता को ज्ञात करने की सर्वेक्षण एक वैज्ञानिक प्रक्रिया है। इस प्रकार सभी परिभाषाओं का अर्थ समझने के उपरांत सर्वेक्षण विधि की कुछ विशेषतायें बतायी जा सकती है; जो निम्नलिखित है।

सर्वेक्षण की विशेषतायें (Characteristics of Survey Method) :

- सर्वेक्षणात्मक अध्ययन में शोध समस्या का स्वरूप एवं शोध अध्ययन के उद्देश्य विल्कुल स्पष्ट एवं सरल होते है।
- सर्वेक्षणात्मक अध्ययन का एक विशिष्ट एवं निश्चित भौगोलिक क्षेत्र होता है। उसी मर्यादित अथवा सीमित क्षेत्र का अध्ययन किया जाता है।
- इस अध्ययन में किसी एक समुदाय से प्राप्त सूचना या आकड़ा (data) विस्तृत एवं व्यापक होता है; तथा इसमें संख्यात्मक आकड़े को प्राथमिकता दी जाती है।
- विभिन्न सामाजिक एवं मानवी व्यवहारों की समस्या का समाधान करने हेतु रचनात्मक कार्यक्रम बनाया जाता है; तथा रचनात्मक विकास कार्यक्रम का निर्धारण करने में सहायक होता है।
- सर्वेक्षण में व्यक्तिगत रूप से प्राप्त किया गया प्रदत्त या आकड़े को कोई स्थान नही होता। इस म प्रतीदर्श (sample) का होना आवश्यक है।
- इसमें शोधकर्ता सामाजिक घटकों से सामुहिक रूप में आकड़ा संकलित करता है; जिसमें सामाजिक घटकों को सहयोग का होना अत्यंत आवश्यक होता है। अतः इसमें सहयोगात्मक प्रक्रिया अंतर्भूत होती है।

- यह अध्ययन गुणात्मक और संख्यात्मक दोनो प्रकार का हो सकता है।
- सर्वेक्षण में सामाजिक व्यवहारों की एक केंन्द्रीय प्रवृत्ति (Central Tendary) का अध्ययन किया जाता है।
- इस म अत्यंत विचार पूर्वक नियोजित ढंग से प्राप्त एवं संकलित प्रदत्तों अथवा आकड़ो का सांख्यिकीय विश्लेषण किया जाता है तथा उससे अत्यंत सावधानी से अर्थ निर्वचन करना पडता, है जिससे कि विश्वसनीय निष्कर्ष निकाले जा सकें।

सर्वेक्षण पद्धति के उद्देश्य (Objectives of Survey Method) :

1) प्रचलित वर्तमान सामाजिक परिस्थिति या मानवीय व्यवहारों का अध्ययन करना।
2) स्थानीय अथवा विशिष्ट भौगोलिक क्षेत्र की समस्याओं का अध्ययन करना।
3) समस्या का समाधान करने हेतु विकास कार्यक्रम सुझाना।
4) समाज के विभिन्न अंगो का वर्तमान स्तर पर अध्ययन करना; जिसमें सामाजिक, राजकीय, आर्थिक, शैक्षिक आदि स्तर का अनुमान लगाना अपेक्षित है।
5) वर्तमान स्थिति को नियंत्रित करना एवं समाजोपयोगी बातों को विकास प्रक्रिया में योगदान या मार्गदर्शन करना।
6) सामाजिक घटनाओं का वर्णन एवं स्पष्टीकरण करना।
7) मानवीय व्यवहारों की समस्याओं के कारणों अथवा कारक घटकों का परीक्षण करना
8) प्रचलित विचारधाराओं का, नियमों, तत्वों या सिद्धांतो का पुनरावलोकन एवं पुनर्परीक्षण करना तथा उन्हे सुधारात्मक रूप में प्रस्तुत करना।
9) किसी विशिष्ट परिस्थिति का आकलन कर उसके बारे में एक निश्चित भविष्यकालीन नीति (policy) का निर्धारण करना।
10) प्रदत्त या आकड़ा संकलन के लिए विभिन्न उपकरण (Tools) एवं प्रमाणित कसौटी (Standardized test) तैयार करने में मदद करना।
11) अन्य प्रकार के अध्ययन के लिए पृष्ठभूमि (background) तैयार करना।

सर्वेक्षण के प्रकार (Types of Survey) :

सर्वेक्षण के अनेक प्रकार बनाए जाते है। उन सबका वर्गीकरण दो भागों में किया जा सकता है। (1) जनसंरुया सर्वेक्षण (Ceusus Survey) (2) प्रतिदर्श सर्वेक्षण (Sample Survey)

जनसंख्या सर्वेक्षण को Large Scale Sarvey तथा प्रतिदर्श सर्वेक्षण को Small Scale Survey कहते है। इसके अलावा हर एक स्वतंत्र विषय–क्षेत्र के प्रकार के अनुसार सर्वेक्षण के भिन्न–भिन्न प्रकार बताए जाते है। शोध अध्ययन के उद्देश्यों के अनुसार भी सर्वेक्षण के प्रकार बनाए जाते है। इसलिए सर्वेक्षण के प्रकार की कोई निश्चित संख्या बताई नही जा सकती। परंतु उन सभी प्रकारों का वर्गीकरण किया जा सकता है; जो अग्रलिखित है।

a) उद्देश्यों के आधार पर सर्वेक्षण के प्रकार।

b) भौगोलिक क्षेत्र के आधार पर सर्वेक्षण के प्रकार।

c) विषय–क्षेत्र या अभ्यास विषय के आधार पर सर्वेक्षण के प्रकार।

d) समयावधि के आधार पर सर्वेक्षण के प्रकार।

e) सर्वेक्षण पद्धति के आधार पर सर्वेक्षण के प्रकार।

विभिन्न लेखकों ने अपने अपने मतानुसार अपने अपने विषय क्षेत्र के सर्वेक्षण के प्रकार बताए है। जैसे–

- जुलियन एल. साईमन ने सर्वेक्षण के दो प्रकार बतायें है।
  (1) कारणात्मक सर्वेक्षण तथा (2) वर्णनात्मक सर्वेक्षण
- ओपेनहाईम (Openheim) ने सर्वेक्षण के दो प्रकार बताये है।
  (1) विवरणात्मक, संख्यात्मक अथवा जनगणना मूलक सर्वेक्षण;
  (2) संबंधात्मक या विश्लेषणात्मक सर्वेक्षण
- सिन पाओ यांग (Hsin Pao Yang) ने भी सर्वेक्षण के दो प्रकार बताए है।
  (1) विषयमूलक सर्वेक्षण एवं (2) सामान्य सर्वेक्षण
- नाईल्स कारपेन्टर (Niles Carpenter) के मतानुसार सर्वेक्षण के दो प्रकार है।
  (1) तथ्य मूलक सर्वेक्षण और (2) समस्या मूलक सर्वेक्षण
- अे. एफ. वेल्स (A. F. Wells) के मतानुसार सर्वेक्षण के दो प्रकार है।
  (1) अनुभूतिमूलक सर्वेक्षण और (2) तथ्य मूलक सर्वेक्षण
- हबर्ट हायमन (Herbert Hyman) के मतानुसार सर्वेक्षण के दो प्रकार है।
  (1) विवरणात्मक सर्वेक्षण और (2) सैद्धांतिक या प्रयोगात्मक सर्वेक्षण
- सायमन (Syman) ने उद्देश्यों के आधार पर सर्वेक्षण के दो प्रकार बतायें है।

(1) विवरणात्मक सर्वेक्षण और (2) कारणात्मक सर्वेक्षण

हायमन और सायमन ने उद्देश्यों के आधार पर सर्वेक्षण के जो दो प्रकार बताए है; उन्हें उप प्रकारों में विभाजित किया है; जिसमें सैद्धांतिक या प्रयोगात्मक सर्वेक्षण के उप प्रकार अंतर्भूत है। जैसे; परियोजनात्मक अथवा मूल्यांकनात्मक सर्वेक्षण, निदानात्मक सर्वेक्षण, भविष्य मूलक सर्वेक्षण, द्वैतीयक विश्लेषण सर्वेक्षण आदि।

उपरोक्त प्रकारों के अलावा सर्वेक्षण के विषयानुसार और भी अनेक प्रकार बतायें जाते है। उदाहरण के लिए शैक्षिक सर्वेक्षण, सामाजिक सर्वेक्षण, आर्थिक सर्वेक्षण, राजकीय, सर्वेक्षण, मनोवैज्ञानिक सर्वेक्षण, इत्यादि। 'सर्वेक्षण' यह एक ऐसी अध्ययन पद्धति है जो प्रक्रिया से संबंधित होती है। कोई भी कृति या प्रक्रिया का निश्चित रूप से एक या अनेक उद्देश्य होते है। इसीलिए सर्वेक्षण के जो अनेक भिन्न–भिन्न प्रकार बताये जाते है; वे उद्देश्यों से ही संबंधित होते है। जितने अधिक उद्देश्य उतने अधिक सर्वेक्षण के प्रकार। यह एक प्रकार का पूर्ण धनात्मक सहसंबंध है। अतः उद्देश्यों के आधार पर सर्वेक्षण के जितने भी प्रकार बनाए जाते है; उनमे वर्णनात्मक या विवरणात्मक सर्वेक्षण की एक अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका होती है। जो सर्वेक्षण किसी सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक, आदि विषयों से सम्बन्धित होता है। इस प्रकारे को सर्वेक्षण घटना, व्यवस्था, व्यवहार अथवा गतिविधियों संबंधी विवरणात्मक विश्लेषण करता है। ऐसे सर्वेक्षण को वर्णनात्मक सर्वेक्षण कहते है। वर्णनात्मक सर्वेक्षण में विद्यमान प्रचलित परिस्थिति का अध्ययन किया जाता है। इसीलिए इस सर्वेक्षण में 'कैसा है? अथवा क्या है? इस प्रश्नों का उत्तर खोजा जाता है। ऐसा ही क्यों है? इस प्रश्न का विचार इस सर्वेक्षण में नही किया जाता। अर्थात यह सर्वेक्षण वास्तविक एवं यथास्थित परिस्थिति का केवल अवलोकन एवं आकलन करता है।

भौगोलिक क्षेत्र के आधार पर किया जाने वाला सर्वेक्षण भी अनेक प्रकार का होता है परंतु इसमें संपूर्ण जनसंख्या का सर्वेक्षण एवं प्रतिदर्श का सर्वेक्षण ये दो प्रकार के सर्वेक्षण बहुप्रचलित है। संपूर्ण जनसंख्या के सर्वेक्षण का एक अच्छा उदाहरण जनगनणा (Census Survey) का है। प्रतिदर्श सर्वेक्षण मे संपूर्ण जनसंख्या के अनुपात में कुछ सीमित प्रतिनिधिक रूप में प्रतिदर्श का (Sample) चयन करते हुए उनसे ही जानकारी प्राप्त की जाती है; तब उसे प्रतिदर्श सर्वेक्षण कहते है। अतः संपूर्ण जनसंख्या के सर्वेक्षण को Large Scale Survey और प्रतिदर्श सर्वेक्षण को Small Scale Survey कह सकते है। जब संपूर्ण जनसंख्या का सर्वेक्षण कराना हो तो बहुत ज़्यादा समय लगता है। प्रतिदर्श के

सर्वेक्षण में जनसंख्या सीमित होने के कारण कम समय मे ही पूरा किया जाता है। इसीलिए समयावधि के अनुसार सर्वेक्षण के दीर्घकालीन सर्वेक्षण एवं अल्पकालिन सर्वेक्षण यह दो प्रकार बनाए जा सकते है। वे भी एक प्रकार के Census Survey / Large Scale Survey एवं Sample Survey / Small Scale Survey के नाम से ही जुडे हुए है।

सर्वेक्षण करने वाली एजेन्सी या संस्था कौन है? इसके आधार पर भी सर्वेक्षण के प्रकार बताए जा सकते है। उदा शासकीय सर्वेक्षण, तथा संस्थागत सर्वेक्षण या व्यक्तिगत सर्वेक्षण। सर्वेक्षण के उपर्युक्त प्रकारों के अलावा और भी अनेक प्रकार बनाए जा सकते है। उदा प्रत्यक्ष सर्वेक्षण, अप्रत्यक्ष सर्वेक्षण, जनमत सर्वेक्षण, चुनाव पूर्व सर्वेक्षण, नागरी सर्वेक्षण, ग्रामीण या आदिवासी सर्वेक्षण, निकषात्मक सर्वेक्षण, उपभोक्ता सर्वेक्षण, विपणन सर्वेक्षण, कृषक सर्वेक्षण, पॅनेल (Panel) सर्वेक्षण, इत्यादि।

सर्वेक्षण के उक्त सभी प्रकारों में निकषात्मक सर्वेक्षण (Normative Sarvey) का एक विशेष स्थान है। उदा मनोविज्ञान में प्रमाणित कसौटियाँ (Standared Test) तैयार करने में इस प्रकार के सर्वेक्षण का उपयोग बहुप्रचलीत है। उदाहरण के लिए बुद्धीमत्ता कसौटी (I.Q. Test), अभियोग्यता कसौटी (Aptitude Test), व्यक्तित्व कसौटी (Personality Test), दृष्टिकोण मापनी (Atitude Scale), अभिरूचि मापनी (Interest Scale) इत्यादि। ऐसी प्रमाणित कसौटियों (Standaredized Tests) को तैयार करने के लिए कुछ मापदंड या निकष (Norms) निर्धारित करने हेतु जो सर्वेक्षण किया जाता है; उसे निकषात्मक सर्वेक्षण अथवा Normative Survey कहते है।

सर्वेक्षण पद्धति के गुण :

1) वस्तुनिष्ठता (objectivity) : सर्वेक्षण का कार्य अन्य अनेक लोग; जैसे प्रगणनक अथवा कार्यकर्ताओं से भी करवाया जाता है। कई बार सर्वेक्षणकर्ता वेतन भोगी कर्मचारी भी होते है। अतः उन्हें सर्वेक्षण के प्रदत्त सामग्री (data) अथवा निष्कर्षों से कोई लेना–देना नही रहता। इसलिए उनके व्यक्तिगत विचार या अवधारणाओं का उस पर प्रभाव पडने की संभावना नही होती।

2) मात्रात्मक प्रदत्त (quantitative data) : सर्वेक्षण पद्धति में संकलित जानेवाले प्रदत्त सामग्री मुख्यतः विस्तृत एवं संख्यात्मक होते है।

3) गुणात्मक प्रदत्त (qualitative data) : सर्वेक्षण में गुणात्मक एवं वर्णनात्मक दोनो प्रकार के प्रदत्त सामग्री का संकलन कर सकते है। अर्थात इसमे जिस प्रकार के

प्रदत्त सामग्री की आवश्यकता होती है; उस प्रकार के प्रदत्त प्राप्त करने की सुविधा है।

4) परिकल्पना परीक्षण (Hypothesis Testing) : सर्वेक्षण पद्धति द्वारा किए गए शोध अध्ययन में परिकल्पना का निर्धारण किया जा सकता है; तथा उसके अनुरूप प्राप्त किए गए प्रदत्त के विश्लेषण के आधार पर परिकल्पना का परीक्षण भी कर सकते है।

5) वैज्ञानिक प्रकिया : सर्वेक्षण में शोध अध्ययन की सूत्रबद्घ वैज्ञानिक प्रकिया का उपयोग किया जाता है।

6) निष्कर्षो का सामान्यीकरण (generalization of conclusions) : सर्वेक्षण पद्धति द्वारा किए गए शोध अध्ययन से प्राप्त निष्कर्षों को सार्वत्रिक रूप में लागू किया जा सकता है। अर्थात् उनका सामान्यीकरण किया जा सकता है।

सर्वेक्षण पद्धति की मर्यादा :

1) व्यय और विलंब : सर्वेक्षण पद्धति से किए जाने वाले अध्ययन में अधिक समय लगने से अध्ययन पूर्ण करने में काफी विलंब होता है तथा आर्थिक व्यय भी अधिक होता है।

2) सहभागी कर्मी की योग्यता : सर्वेक्षण में सहभाग लेने वाले कर्मी या कार्यकर्त्ता का शिक्षण, प्रशिक्षण, योग्यता एवं अनुभव पर्याप्त नही रहा तो प्रदत्त सामग्री के संकलन में तथा शोध कार्य में समस्या उत्पन्न होती है।

3) प्रतिदर्श चयन में दोष (Error in Sample Seletion) : प्रतिदर्श चयन में प्रायः दोष होने की संभावना अधिक होती है। उचित प्रतिदर्श का चयन व उपयोग न करने से यह दोष रह जाता है और तब इसकी विश्वसनीयता कम होती है।

4) प्रतिदर्श की मानसिकता (Mentatily of Sample) : अधिकतम अध्ययन में प्राप्त सूचना या प्रदत्त की वास्तविकता प्रतिदर्श की मानसिकता के आधार पर होती है। परंतु उनकी भिन्न–भिन्न मानसिकता के कारण प्राप्त प्रदत्त सूचना की विश्वसनीयता पर प्रभाव पडता है। कभी–कभी सूचना छुपाने की भी मानसिकता होती है।

5) तात्कालिक निष्कर्ष : इस पद्धति द्वारा प्राप्त निष्कर्ष सीमित कालावधि में लागू हो सकते है। दिर्घावधि में जनमत या सामाजिक प्रवृत्ति बदलने की संभावना होती है। इसलिए इसमे प्राप्त निष्कर्ष दीर्घावधि के लिए लागू नहीं होते बल्कि; वे तात्कालिक हो जाते है।

6) पक्षपातपूर्ण सूचना की संभावना : पक्षपाती प्रतिदर्श अपनी वास्तविक स्थिति सें हटकर केवल सामाजिक मान्यताओं को ध्यान में रखते हुए जानकारी देने की कोशिश करते है।

7) व्यक्ति भिन्नता का प्रभाव : प्रतिदर्श में व्यक्ति भिन्नता होने के कारण एक ही बात को भिन्न–भिन्न दृष्टि से देखा जाता है; जिससे वास्तविक सूचना प्राप्त करने में बाधा निर्माण आती है।

8) गोपनीय सूचना का अभाव : कुछ गोपनीय जानकारी कुछ लोग देना नही चाहते और वे छुपाने की कोशिश करते है। कुछ व्यक्तिगत जानकारी भी छुपाने की कोशिश में वास्तविक तथ्य सामने नही आता है।

9) उचित उपकरणों का उपयोग : प्रदत्त संकलन का उचित उपकरण (Tool of data collection) का चयन करना अत्यंत आवश्यक होता है। उचित उपकरण का उपयोग न करने से प्राप्त सूचना में वास्तविक तत्थ्यों मे अंतर पड सकता है।

सर्वेक्षण की कार्य पद्धति (Procedure of Survey) :

सर्वेक्षणात्मक अध्ययन की कार्य पद्धति एवं प्रक्रिया संबंधी अनेकता द्वारा भिन्न–भिन्न दृष्टिकोण से थोडी बहुत भिन्नता से बताई जाती है। उन सबका अवलोकन करने से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि; मतभिन्नता एवं व्यक्ति भिन्नता के कारण थोडा बहुत अंतर होना स्वाभाविक है। यहां सर्वेक्षण कार्य पद्धती की सविस्तार, सर्वसमावेशक एवं क्रम बद्ध प्रक्रिया का वर्णन दिया जा रहा है; जिसमे निम्नलिखित न्यूनतम पदक्रम या सोपान (Steps) अनिवार्य है।

1) शोध समस्या का चयन एवं निर्धारण (selection & determination of reseach problem)।

2) पूर्व शोध वाड्.मय का अवलोकन (Review of Pre-researchaliteralive) करना।

3) शोध कार्य के उद्देश्य, परिकल्पना (Hypotheses), चर (variables), तथा महत्वपूर्ण संज्ञाओं की परिभाषा करना।

4) शोध कार्य का नियोजन (Planning) एवं प्रारूप (design) तैयार करना।

5) प्रदत्त संकलन के उपकरण (Tools) तैयार करना।

6) प्रदत्त का वर्गीकरण, विश्लेषण, अर्थ निवर्चन एवं निष्कर्ष निकालना।

7) आख्या लेखन (Report writting) करना; संबंधित संस्था को प्रस्तुत करना।

(ख.3) कारण–परिणाम विश्लेषण पद्धति (Cause & effects Analysis Method)

अधिकांश प्रकार के शोध अध्ययन में दो चर (variables) होते है; परंतु उनका स्वरूप भिन्न भिन्न होता है। जिस प्रकार के चर होते है; उनका स्वरूप एक जैसा या समान नही होता। जब किसी शोध प्रकार में दोनो चर स्वतंत्र होते है। जब दोनो चरों का महत्व समान होता है; और दोनो चर स्वतंत्र होते है; तथा जो एक दूसरे को प्रभावित नही करते तब उनका या तो सह संबंधात्मक अध्ययन किया जाता है; अथवा उनका तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है। परंतु कुछ घटना या परिस्थिति में एक चर कारण होता है; तथा दूसरा चर परिणाम होता है। जो चर कारण होता है; उसे स्वतंत्र चर (indipendent variable) कहते है; तथा जो चर परिणाम होता है; उसे आश्रित चर (dependent variable) कहते है। इस अनुसंधान विधि में एक चर का परिणाम दूसरे चर पर कैसा होता है? अथवा जिस चर पर परिणाम हुआ है; उसका कारण क्या है? यह जानने के लिए विश्लेषणात्मक अध्ययन किया जाता है; तब उसे कारण एवं परिणाम विश्लेषण पद्धति कहते है। यह विधि कारण एवं परिणाम सिद्धांत के आधार पर विकसित हुई है।

दुनियां मे कोई भी घटना बिना कारण नही होती। प्रत्येक घटना का कोई न कोई तो कारण अवश्य होता है। इस सिद्धांत के स्वीकार करते हुए जिस पद्धति से कोई अध्ययन किया जाता है; उस पद्धति को कारण एवं परिणाम विश्लेषण पद्धति कहते है। इसमे दोनों चरों का परस्पर संबंध जानने के लिए अगर प्रयोग किया जाता है; तो उसे प्रयोगात्मक शोध पद्धति कहते है। परंतु सामाजिक वातावरण में जो घटनायें घटित होती है; वो सामाजिक व्यवहार से होती है। उसे प्रयोग नही कहा जा सकता। उदा नशीले पदार्थों का सेवन करने से व्यक्ति के स्वास्थ्य पर होने वाले परिणामों का अध्ययन करने के लिए किसी प्रतिपर्श को नशीले पदार्थों का सेवन कराने का प्रयोग नही किया जा सकता। ऐसी अवस्था मे अध्ययन करने के लिए कारण एवं परिणाम संबंध विश्लेषण पद्धति का उपयोग करना पडता है। ऐसी सामाजिक घटनाओं के परिणाम की व्याख्या मिमांसा करने के लिए, जो घटना घटित हुई अथवा हो रही हो; उसके कारणों या

परिणामों की खोज की जाती है। यह कारण या परिणाम जानने के लिए जिस पद्धति से अध्ययन किया जाता है; उसे कारण एवं परिणाम विश्लेषण पद्धति कहते है।

सामाजिक परिस्थिति में जब कोई घटना घट जाती है; जिसका केवल एक कारण नही रहता बल्कि अनेक कारणों का उसमें प्रभाव होता है। जैसे–अयोध्या के विवादित ढांचा का गिराया जाना; यह एक घटना है। शोधकर्ता जब इस घटना का अध्ययन करता है; तब उसके कारण क्या है? यह जानने के लिए उपलब्ध स्थिति में अध्ययन करना पडता है। उस घटना का कोई एक कारण नही होता। उसका राजकीय, सामाजिक, धार्मिक, या अन्य कोई भी एक या अधिक कारण हो सकता है।

इस तरह कोई घटना घट चुकी होती है उसके कारणों का अध्ययन करना, यह एक दृष्टिकोण है। इसके विपरीत अगर कारण ज्ञात हो तो उसके परिणाम क्या होंगे? इसका शोध करना, यह दूसरा दृष्टिकोण है। उदाहरण अगर संपूर्ण देश में दारूबंदी लागू की तो उसके परिणाम लोगों के पारिवारिक जीवन, सामाजिक जीवन, राष्ट्रीयता, धार्मिकता या आर्थिक स्थिति पर क्या प्रभाव होगा? यह जानने के लिए भी कारण एवं परिणाम विश्लेषण पद्धति का अनुसरण किया जा सकता है। इसमें कारण एवं परिणाम इन दो चरों के अलावा अन्य प्रकार के चर भी हो सकते है। जिसे बहिर्गत प्रभावकारी चर (external intervening variables) कहते है। इस पद्धति के स्पष्टीकरण के साथ अन्य कुछ महत्वपूर्ण परिभाषायें भी अग्रलिखित रूप में दी जा रही है–

डॉ. आर. एस. पटेल Research Methodology के अनुसार 'प्रयोगात्मक पद्धति के जैसे बहिर्गत चरों को नियंत्रित न करते हुए जब दो चरों के संबंध में कारणों का शोध किया जाता है; तब उसे तुलनात्मक कार्य कारण संबंध विश्लेषण पद्धति कहते है।' ("Causal Comparative method is a method used to find the causal relation between variables which could not be experimentally manipulated" - Dr. R. S. Patel, Research Methodology)

बोर्ग एवं गाल के मतानुसार, "Causal Comparative designs, although less than experimental designs are an accepted research technique for exploring causal relationship among variables that can not be manipulated experimentally. It involves comparing samples that are different on a critical variable but other wise comparable" (Borg and Gall - 1996)

जॉन स्टुअर्ट मिल के मतानुसार, "If two or more instances in which the phenomenon oceans have only one circumstances in common; which two or more instances in which it does not occur have nothing in common save the absence of that circumstance The Circumstance in which alone that two sets of instances differ, is the effect or cause: or a necessary part of the cause of the phenomenon" (John Stuart Mill)

(ख.4) घटनोत्तर विश्लेषण पद्धति (Ex-post Facto Analysis method)

कुछ लेखक कारण एवं परिणाम संबंध विश्लेषण पद्धति को ही घटना पश्चात विश्लेषण पद्धति कहते है। उनके मतानुसार यह दोनों पद्धति एक ही है। केवल नाम की भिन्नता है। परंतु इस संबंध में यह स्पष्ट होना आवश्यक है कि; दोनों पद्धति में कुछ तो भिन्नता अवश्य है। कभी कभी कोई घटना घट जाने के पश्चात उसके करणों का पता लगाया जाता है। उदाहरण के लिए अयोध्या का विवाहित ढांचा गिर रहा था तब कुछ लोगों ने उस घटना का अवलोकन किया होगा। उन्होंने तब उसके कोई कारण बताए होंगे। यह अवलोकन प्रक्रिया घटना घटते समय हो रही थी। परंतु दूसरी अवलोकन प्रक्रिया ढांचा गिराने के पश्चात किसीने फिर उसका अवलोकन किया होगा। यह दोनों प्रकार की अवलोकन प्रक्रिया में कुछ समयावधि का अंतर है। दूसरा उदाहरण मुंबई के गिरगाव में 'मेक इन इंडिया' का सांस्कृतिक कार्यक्रम चल रहा था। तब उसके दौरान सभा मंडप मे अचानक आग लग गई। दिनांक 14 फरवरी 2016 को उस कार्यक्रम के दौरान वहां आग लगने वाली है; यह बात किसी को ज्ञात नही थी; इसलिए कोई शोध अध्ययन की तैयारी नही की गई। उस घटना के दौरान कोई भी शोधकर्ता अध्ययन नही कर रहा था। परंतु यह घटना घट जाने के पश्चात उसकी जाँच करने के आदेश दे दिए गये। अर्थात इस घटना की जांच करने वाले शोधकर्ता नही है। परंतु फिर भी इस पद्धति को समझने के लिए यह उदाहरण पर्याप्त होना चाहिए यह एक प्रकार का घटना पश्चात विश्लेषण पद्धति का ही उदाहरण है।

इस पद्धति को समझने के लिए यहां तिसरी प्रक्रिया भी बताई जा सकती है। फिर वही बाबरी मसजिद का उदाहरण ले सकते है। जैसे ढांचा गिराये जाने की घटना अनेक वर्षो पुरानी है। आज उस घटना को दो दशकों भी अधिक समयावधि चुिका है। अगर आज उसका अध्ययन किया तो वह ऐतिहासिक शोध बन जाता है। आज उसका अध्ययन करने के लिए ऐतिहासिक अध्ययन पद्धति का उपयोग करना होगा। परंतु उन दिनो या

उसी समय घटना के तुरंत बाद अगर किया जाता तो यही अध्ययन पद्धति घटना पश्चात विश्लेषण विधि का उदाहरण हो सकता था। अर्थात इस घटना को तीन अलग अलग दृष्टि से देखा जा सकता है। (1) ढांचा गिराए जाते समय कारण एवं परिणाम विश्लेषण पद्धति (2) ढांचा गिराए तुरंत बाद किए गए अध्ययन की घटना पश्चात विश्लेषण विधि और (3) वर्तमानमे अगर यही अध्ययन किया जाता तो ऐतिहासिक विश्लेषण पद्धति का उपयोग करना चाहिए इन सभी बातों को ध्यान में रखते हुए यहा एक बात स्पष्ट है कि; अनुसंधान प्रक्रिया में प्रत्येक अवधारणा स्पष्ट होनी चाहिए। इसीलिए घटना पश्चात विश्लेषण विधि का भी अर्थ समझना आवश्यक है। यह स्पष्ट होने के लिए एफ. एम. कर्लिगर की परिभाषा दी जा रही है।

"Ex-post facto research is systematic empirical inquiry in which the scientist does not have direct control of independent variables because their manifestations leave already occurred or because they are inherently not manipulable. Inferences about relations among variables are made. without direct intervention, form concomitant vacation of independent and dependent variables." (F. M. Kerlinger - 1973)

उपर्युक्त उदाहरणों मे शोधकर्ता कारक घटकों पर अर्थात स्वतंत्र चरों पर तथा बाह्य चरों पर किसी भी प्रकार का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से नियंत्रण नही रख सकता। जो यथा स्थित उसके सामने उपलब्ध होता है; उसका अवलोकन कर शोध अध्ययन किया जाता है। यहां पर तिसरा एक और थोडा सा भिन्न उदाहरण देना उचित होगा। जैसे; विदर्भ प्रदेश में किसानों की आत्महत्या के कारणों का अध्ययन करना। इस समस्या में कुछ किसानों की आत्महत्या कुछ वर्षों पहले हो चुकी, कुछ वर्तमान में हुई और यह प्रक्रिया सतत शुरू रहने की प्रवृत्ति (Trend) है। होने के कारण आगे भी होने की संभावना है। इस घटनाओं का अध्ययन करने हेतु कारण एवं परिणाम संबंध विश्लेषण पद्धति (Comparative Analysis Method) तथा घटना पश्चात विश्लेषण पद्धति (Ex post Facto Analysis Method) का भी उपयोग किया जा सकता है। अर्थात इन पद्धतियों से अध्ययन करते समय कुछ महत्वपूर्ण मुद्दों को ध्यान में रखना आवश्यक है; जो निम्नलिखित है।

- इन पद्धतियों में शोध कार्य की उद्देश्य पूर्ती हो सकती है; परंतु परिकल्पना (hypothesis) का परीक्षण नही किया जा सकता।

- इसमें परिकल्पनाओं का स्वरूप कुछ लचीला (Flexible) होता है। इस बात को ध्यान में रखना है।
- जब स्वाश्रयी चरों (indipendent varibles) को शोधकर्ता नियंत्रित नही कर सकता तब इस पद्धति का उपयोग करना चाहिए।
- जब दो स्वतंत्र चरों में तुलना करनी हो तब इस पद्धति का उपयोग कर सकते है।
- प्रयोग सादृश्य स्थिति का विश्लेषण करते समय इस पद्धति का उपयोग किया जा सकता है।
- स्वाश्रयी चर नियंत्रित किए जा सकते या नही; इसका निर्णय पहले ही लेना आवश्यक होता है; तभी इस पद्धति का उपयोग करने के बारे में सोचना चाहिए।
- किसी भी घटना का एक या अनेक कारण हो सकते है। इसलिए कोई भी निष्कर्ष निकालने से पहले इस बात को ध्यान में रखना अनिवार्य है।
- इस पद्धति से किए जाने वाले अध्ययन में किसी एक समूह का अध्ययन करने से प्राप्त निष्कर्ष की विश्वसनीयता (Reliability) नही समझी जा सकती। इसलिए दो समूहों में तुलनात्मक अध्ययन करने से ही शोध कार्य की यथार्थ एवं विश्वसनीयता का अनुमान लगा सकते है।
- इस पद्धति से अध्ययन करते समय प्रतिदर्श का चयन यादृच्छिक या दैव पद्धति (Random Method) से नही किया जा सकता।
- इस पद्धति से वर्तमान घटना के परिणामों के कारणों का अध्ययन किया जाता है।
- इस पद्धति से परिणामों का या आश्रित चरों का (dependent variables) अध्ययन किया जाता है।
- जब किसी कारणवश स्वतंत्र चरों पर नियंत्रण नही रखा जा सकता या प्रयोगात्मक विधि का उपयोग नही किया जा सकता तब इस पद्धति से अध्ययन किया जाता है।

कारण एवं परिणाम संबंध तथा घटना पश्चात विश्लेषण पद्धति की विशेषतायें

(Characterisies of cause & effects / Ex Post Facto Analysis method) :

- इस पद्धति मे परिकल्पनाओं का (hypothesses) स्परूप काफी लचीला होता है।

- इस पद्धति मे परिकल्पनाओं का स्पष्ट रूप से निर्धारण किया जा सकता है; परंतु वे लचीला होने के कारण उनका विस्तार हो सकता है; अथवा घटने की भी संभावना होती है।
- इस पद्धति के अध्ययन मे पूर्व निर्धारित आश्रयी चर (dependent variable) के कारण (स्वाश्रयी चर) अनेक हो सकते है; या एक हो सकता है; परंतु एकमेव नही नही हो सकता।
- इस पद्धति के परिकल्पनाओं का स्परूप लचीला होने के कारण उनका परीक्षण नही किया जा सकता तथा बाह्य प्रभावकारी चरों को नियंत्रित नही किया जा सकता है।
- प्रायोगिक पद्धति मे कारणों के परिणामों का अध्ययन किया जाता है; परंतु इस पद्धति से परिणामों के कारणों का भी अध्ययन किया जा सकता है।
- इस पद्धति से दो चरो मे सहसंबंधात्मक अध्ययन किया जा सकता है; तथा तुलनात्मक अध्ययन भी किया जा सकता है।
- कभी कभी इस पद्धति को अद्‌र्ध प्रायोगिक पद्धति के रुपमे भी देखा जा सकता है।
- यह पद्धति सामाजिक क्षेत्र की समस्याओं का अध्ययन करने मे अत्यंत उपयुक्त एवं महत्वपूर्ण मानी जाती हैं।

कारण एवं परिणाम संबंध तथा घटना पश्चात विश्लेषण पद्धति के दोष (Demerits of cause & effects / Ex Post Facto Analysis method) :

- इस पद्धति के परिकल्पनाओं का स्वरूप लचीला होने के कारण उनका परीक्षण नही किया जा सकता।
- प्रायोगिक शोध विधि की तरह यह पद्धति अधिक विश्वसनीय नही होती।

(ख.5) विषयवस्तु विश्लेषण पद्धति (Content Analysis Method) :

ऐतिहासिक प्रलेख या वाङ्मय का विश्लेषण करना एक ऐतिहासिक अनुसंधान होता है। लेकिन प्रचलित प्रलेख, आख्या, पत्र, पुस्तक या किसी भी तरह का वर्तमान कालीन वाङ्मय आदि का अवलोकन करना, समीक्ष करना, विश्लेषण करना या उनका सत्यापन करना हो तो विषयवस्तु विश्लेषण विधि द्वारा अध्ययन करना पडता है। सामाजिक क्षेत्र की वर्तमान समस्याओं का अध्ययन करने हेतु आशय विश्लेषण पद्धति भी एक महत्त्वपूर्ण पद्धति मानी गयी है। प्रचलित पाठ्यपुस्तक, पाठ्यक्रम, अथवा अन्य कोई भी पुस्तक; या वर्तमान प्रलेखों का अध्ययन करने हेतु इस पद्धति का उपयोग किया जाना चाहिए इस

पद्धति में जो प्रदत्त होता है वह प्रत्यक्ष रुप मे उपलब्ध नही होता। शोध कर्ता को स्वयं विश्लेषण करना पडता है और किसी प्रलेख, पुस्तक या कोई साहित्य की सत्यता, उपयुक्तता, प्रासंगिकता आदि के संदर्भ मे अध्ययन करना हो तब, इस पद्धतिका उपयोग होता है।

विषयवस्तु विश्लेषण पद्धति वर्णनात्मक शोध पद्धतिका एक महत्वपुर्ण प्रकार है। इसमे न केवल लिखित साहित्य का विश्लेषण किया जाता; बल्कि समाचार पत्रिकायें, इलेक्ट्रॉनिक माध्यम अथवा मौखिक रुप में दिये गए भाषण का भी विश्लेषण किया जाता है। इस तरह किए गए शोध अध्ययन को विषयवस्तु विश्लेषण पद्धति कहा जाता है। आशय विश्लेषण पद्धति द्वारा किए जानेवाले शोध अध्ययन मे आवश्यक प्रदत्त सामान्यतया वर्णनात्मक होता है। इसमे सांख्यिकीय प्रदत्त नही होता या बहुत ही कम होता है। इसलिए इसे वर्णनात्मक शोध (quantitative Research) या गुणात्मक शोध (qualitative Research) भी कह सकते है। आशय विश्लेषण पद्धति का अर्थ समझने के लिए इसकी परिभाषाओंका अवलोकन करना जरूरी है। कुछ महत्त्वपूर्ण परिभाषायें अग्रलिखित है।

बेरेल्सन के मतानुसार; 'विषय वस्तु विश्लेषण एक ऐसा तकनीक है; जो संप्रेषणात्मक प्रदत्त का उद्देश्यानुसार, पद्धतिनुसार एवं संख्यानुसार विश्लेषण करता हैं।' "Content analysis is a technique which communicative data is analysed objectively, methodocally and namerically". (Berelson-1952)

क्लास क्रिपेनडॉर्ट के मतानुसार; 'विषय वस्तु विश्लेषण शोध कार्य का एक ऐसा तकनीक है; जिसमे उपलब्ध प्रदत्त का प्रमाणीकृत अर्थनिर्वचन किया जा सकता और उसे पुनः प्रस्तुत किया जा सकता है'. "Content analysis is such research technique in which standardised interpretation from given data can be done and it could be repeted. (Klahs Krippendort - 1980)

विषय वस्तु विश्लेषण पद्धति की विशेषताएँ

- आशय विश्लेषण यह केवल विश्लेषण ही नही बल्कि यह एक प्रकार का अवलोकन (observation) भी है। इससे आगे यह कह सकते है कि; अवलोकन के आधार पर ही विश्लेषण किया जाता हैं।
- इसमे प्रदत्त या आकड़ा संख्यात्मक नही बल्कि वर्णनात्मक या गुणात्मक होता हैं।

- इसमे वर्तमान प्रलेख अथवा ऐतिहासिक प्रलेख दोनो के आशय का विश्लेषण कर सकते है। अतः इसे वर्णनात्मक तथा ऐतिहासिक अध्ययन दोनो प्रकार अंतर्भूत किया जा सकता है। यह शोध समस्या के स्वरूप पर निर्भर करता हैं।
- इस पद्धति मे परिकल्पना एवं चरों का निर्धारण करना कठीन होता है।
- विषयवस्तु का विश्लेषण करने के लिए निकष या मापदंड का निर्धारण स्वयं शोधकर्ता को ही करना पडता है।
- इसमे अवलोकन एवं सर्वेक्षण पद्धति की सहायता ली जा सकती है। उदा अवलोकन के आधार पर किए गए विश्लेषण के संदर्भ मे उसकी योग्यता या सत्यता का परीक्षण करने हेतू संबंधित क्षेत्र के विशेषज्ञों का क्या मत हो सकता है? यह जानने के लिए सर्वेक्षण का भी उपयोग किया जा सकता है।
- आशय विश्लेषण के आधार पर दो चरों की तुलना भी की जा सकती है। अतः यह तुलना त्मक शोध अध्ययन भी हो सकता है।

उपरोक्त शोध विधियों के अलावा अन्य और भी कुछ पद्धति का उल्लेख इस प्रकार मे किया जा सकता है। परंतु कुछ शोध अध्ययन पद्धतियां शोध के प्रकार से भी निर्धारित की जाती हैं। अतः कई पद्धतियों एवं प्रकार एक दूसरे से इतनी धनिष्ट होती है की; प्रकार एवं पद्धति मे भिन्नता स्पष्ट करना कठीन होता है। यह तो केवल शोध कार्य के अनुभव से ही महसूस किया जा सकता है। कुछ अन्य अनुसंधान की विधियों का निम्नलिखित रूपमे उल्लेख करना उचित होगा।

(1) समाजमितिय विधि, (2) सहसंबंधात्मक अध्ययन विधि, (3) तुलनात्मक अध्ययन विधि, (4) व्युत्पन्न शोध अध्ययन, (5) विश्लेषणात्मक अध्ययन, आदि।

(ख.6) समाजमितिय शोध विधि (Sociometric Research Methods) :

किसी विशिष्ट समूह का प्रत्येक व्यक्ति अपने समूह के अन्य व्यक्ति के बारे मे क्या सोचता है, किस विशिष्ट श्रेणी मे रहता है; अथवा मनोनीत होता है, स्वीकृति मिलती है या अस्वीकृति मिलती है; यह जानने के लिए समाजमितिय विधि का उपयोग होता है। यह एक ऐसी विधि है; जिसमे समूह के सदस्यों का एक दूसरे के प्रति स्वीकार या अस्वीकार करने की मानसिकता के आधार पर समूह के सदस्यों के परस्पर संबंध, समूह की संरचना, सामाजिक प्रतिष्ठा एवं व्यक्तित्व के गुणों का अध्ययन किया जाता है। समाजमितिय विधि को कुछ विद्वानों ने निम्न शब्दों मे परिभाषित किया है।

कर्लिंगर ने इस तरह परिभाषित किया है की; 'समाजमिति एक ऐसी व्यापक संज्ञा है, जिसमे समूह के सदस्यों की पसंद, संप्रेषण एवं अंतःक्रिया से संबंधित प्रदत्त को संकलित कर उनका विश्लेषण किया जाता है।' ("sociometry is a brosd term indicating a number of methods of gathering and analyzing data on the choice' communication and interaction patterns of individuals in group." - Kerlinger : Foundations of Behavioural Research, 1986, p.439)

स्टॅनले एवं हाफकिन्स ने इस तरह परिभाषित किया है कि; 'किसी समूह के सदस्यों के प्रत्येक व्यक्ति द्वारा उनकी सामाजिक संरचना के अंतर्गत किए जाने वाले व्यवहारिक अंतरसंबंधो का अध्ययन ही समाजमिति है। ("sociometry is the study of interrelationship among members of agroup, that is its social structure; how each individual is perceived by the group." - Stanley & Hopkins : Educational and Psychological Measurement and Evaluation, 1972, p.403)

किसी समूह के सदस्यों का किसी विशिष्ट कार्यपुर्ति के लिए चयन करना हो; तब सभी सदस्यों को एक या अधिक व्यक्ति के बारे मे राय लेने के लिए भी यह विधि उपयुक्त होती है। किस व्यक्ति को कितने अंश तक स्वीकार किया जाता है; और कितने अंश तक नकार दिया जाता है? समूह के सदस्यों की आपसी संबंधो की स्थिति कैसी है? समूह को अंतर्गत संरचना कैसी है? समूह मे कितने लोकप्रिय है? और कितने अप्रिय है? और समूह मे कितने उपसमूह है? इसका निर्णय लेने के लिए इस विधि का उपयोग होता है। इसे समूह के व्यक्तियों के परस्पर आकर्षण एवं विकर्षण का अध्ययन करने का एक साधन भी कहा जा सकता है। समाजमिति एक समूह की संरचना, उनकी पसंद एवं उनके व्यवहारों का मापन करने के लिए एक अत्यंत उपयुक्त साधन है। उदाहरण के लिए किसी कार्यालय के कर्मचारी के व्यक्तित्व का अध्ययन करने के लिए सभी कर्मचारियों को एक कागज के टुकडे पर सबसे अच्छे एवं प्रतिष्ठित कर्मचारियों के नाम प्राधान्य क्रमसे लिखने को कहा। इसमे समूह के सभी सदस्य जितने कर्मचारीयों के नाम लिखेंगे और जिस अनुक्रम से लिखेंगे; उससे यह ज्ञात हो जायेगा की; उनके समूह मे उनके परस्पर संबंध कैसे है? छात्रों के एक समूह से को भी ऐसा पूछा गया कि; तुम किस किससे खेलना चाहोंगे? अथवा तुम किस किससे नही खेलना चाहोंगे? इस प्रकार के चयन के लिए निम्न लिखित बातों का विचार करना चहिए।

(1) चयन का मापदंड (selection criteria) निर्धारित करना।

(2) चयन संख्या (number of choice) निर्धारित करना।

(3) प्राधान्य क्रम (preference number) निर्धारित करना।

(4) चयन के प्रश्न संख्या एवं स्वरूप निर्धारित करना।

इस विधि से सांख्यिकीय आंकडो मे भी जानकारी प्राप्त की जा सकती है; तथा पदक्रम निर्धारण विधि की तरह 0 से 4 बिंदु वाली मापनी से भी जानकारी प्राप्त की जा सकती है। इस प्रकार से संकलित किए गए प्रदत्त का विश्लेषण करने की तीन प्रकार की विधियां है।

(क) समाजमितिय मॅट्रिक्स (sociomatric matrix)

(ख) समाज – आलेख (sociogram)

(ग) समाजमितिय सूचकांक (sociomatric index)

(क) समाजमितिय मॅट्रिक्स (sociomatric matrix) :

समाजमितिय मॅट्रिक्स विधि से एक समूह की 9 सदस्यों को आपस मे प्राधान्य क्रमानुसार (preference number) चयन करने के लिए बताया गया। प्राप्त आंकडों का वितरण निम्न सारणी मे उनके प्राधान्य क्रम के अनुसार तैयार किया गया।

उपर्युक्त तालिका क्र.1 मे समूह के सभी 9 सदस्यों के प्राधान्य क्रम 1 को 9, 2 को 8, 3..... 1 को 9 भारांक (weightage) देकर उससे कुल बारंबारता (frequency) को गुणा कर दिया। अंत मे जो आंकडे मिले उससे E को सबसे अधिक नंबर 75 मिले तो उसका प्रथम नंबर पर चयन किया जायेगा तथा सबसे आखरी 11 नंबर I को मिले तो उसका आखरी नंबर पर चयन किया जायेगा।

(ख) समाज आलेख (sociogram) :

इस पद्धति मे समूह के सभी सदस्यों द्वारा एक दूसरें के प्रति किए गए पसंद का एक आलेख बनाया जाता है। यह आलेख मे प्रत्येक सदस्य अपनी पसंद को एक तीर द्वारा दर्शाता है। जो सदस्य जिसे पसंद करता है; वह उसके तरफ दिये गए रेखा पर तीर का निशान लगाता है। इस आलेख को निम्न आकृति द्वारा अधिक सरलता से स्पष्ट किया जा सकता है।

उपर्युक्त आ. क्र. 1 मे A ने I को और I ने A को पसंद किया, F ने C को पसंद किया परंतु C ने F को पसंद नही किया; ऐसा चित्र दिखायी देता है। इस तरह से समाज आलेख द्वारा किसी निष्कर्ष तक पहुच सकते है। उपर्युक्त आकृति से किसने किस–किस को पसंद किया तथा किसने किस–किस को नापसंद या अस्वीकृत किया इसका विवरण बारंबारता वितरण से सांख्यिकीय आंकडों मे परिवर्तित किया जाता है। बाद में उनका सांख्यिकीय सूत्रों से विश्लेषण किया जाता है। इससे समूह के सभी सदस्यों के अंतर्वैयक्तिक संबंध (interpersonal relationship) को ज्ञात किया जा सकता है। परंतु इससे सदस्यों की अत्यंत सीमित संख्या का ही अध्ययन कर सकते है। अर्थात जिस समूह मे अधिकतम 20 सदस्यों का अध्ययन किया जा सकता है। अधिक संख्या के लिए इसका उपयोग नही किया जा सकता। तथापि यह विधि समाजमितिय मॅट्रिक्स की तुलना मे अधिक लाभ दायक होती है; ऐसा माना जाता है।

(ग) समाजमितिय सूचकांक (sociomatric index) :

समाजमिति की इस पद्धति मे भी समूह के सभी सदस्यों के अंतर्वैयक्तिक संबंध (inter- personal relationship) को ज्ञात किया जा सकता है। इसके लिए इसमे कुछ सूचकांक ज्ञात किए जाते है। ऐसे सूचकांक अनेक प्रकार के होते है; परंतु उसमे सबसे अधिक प्रचलित, सरल एवं लाभदायक जो सूचकांक माना जाता है; वह निम्न सूत्र द्वारा निकाला जाता है।

$Cs = \Sigma C / n - 1$ जिसमे; Cs = व्यक्ति का पसंदी स्तर (level of choice)

ΣC = व्यक्ति के पसंदी स्तर का योग

n = समूह की व्यक्ति संख्या

समाजमितिय मॅट्रिक्स सारणी से किसी एक व्यक्ति का पसंदी स्तर का मूल्य लेकर उसे उपर्युक्त सूत्र मे डालकर समाजमितिय सूचकांक प्राप्त किया जा सकता है। उदाहरण के लिए यदी D व्यक्ति का Cs मूल्य 5 होगा; तो $5 / 9 - 1 =$ **0.63** यह उसका समाजमितिय सूचकांक होगा। यह अंक जितना अधिक उतना उन सदस्यों मे आपसी संबंध अथवा पसंद क्रम अधिक होता है; और यह अंक अगर कम होगा तो सदस्यों मे आपसी संबंध अथवा पसंद क्रम भी कम होता है। इस तरह समाजमितिय विधि से शोध अध्ययन किया जाता है।

अन्य अनेक विभिन्न प्रकार की शोध पद्धतियां अलग–अलग नामों से बतायी जाती है; परंतु कई पद्धतियों मे केवल नाम के अलावा अन्य कोई भिन्नता नही होती। अतः शोध विधियों का पाठ्यक्रम ध्यान मे रखते हुए यहां जिन पद्धतियों का वर्णन किया गया है; वह सामाजिक क्षेत्र के शोधकार्य के लिए पर्याप्त है। सामाजिक क्षेत्र के शोधकार्य के लिए प्रायोगिक विधि का भी उपयोग किया जाता है; जिसका वर्णन अग्रलिखि्त है।

(ग) प्रयोगात्मक शोध विधियां (Experimental Research Methods) :

प्रयोगात्मक शोध विधि द्वारा किए गए शोध से प्राप्त निष्कर्ष जितने अधिक विश्वसनीय होते है; उतने अन्य किसी भी शोध विधि के नही होते। सबसे बडी महत्त्पूर्ण विशेषता इस पद्धति की यही है। परंतु यह शोधकर्ता की योग्यता, अनुभव एवं क्षमता पर निर्भर करता है। इस पद्धति को जानने समझने से पूर्व इससे संबंधित कुछ अवधारणाओं को समझना अत्यंत आवश्यक है।

चर (variables) :

किसी भी प्रकार के प्रायोगिक शोध मे दो घटकों का परस्पर संबंध देखा जाता है; विशेषतः कारण एवं परिणामात्मक संबंध अथवा एक घटक का दूसरे घटक पर होने वाला परिणाम देखा जाता हैं। अतः परिणाम करने वाला घटक स्वाश्रयी चर होता है। तथा जिस घटक पर उसका प्रभाव पडता है; उसे आश्रयी चर (dependent variable) कहते है। इस आश्रयी चर पर परिणाम करने वाला जो कारण होता है; उसे स्वाश्रयी या स्वंतत्र चर (independent variable) कहते है। अर्थात यह प्रभाव डालने वाला घटक प्रभावकारी घटक एवं दूसरा घटक प्रभावित घटक होता है। दूसरे शब्दों मे प्रभाव करने वाला जो कारक घटक होता है; वह स्वाश्रयी चर; और उसका होने वाला जो परिणाम या प्रभावित घटक होता है; उसे आश्रयी चर कहते है।

प्रयोगिक एवं नियंत्रित समूह :

सामाजिक विज्ञान के अनुसंधान मे प्रयोग करने वाला शोधकर्ता प्रयोग के निष्कर्ष अधिक विश्वसनीय अथवा प्रमाणित करने के लिए प्रयोग मे दो समूहों का तुलनात्मक अध्ययन करता हैं; जिसमे एक समूह प्रायोगिक समूह (experimental group) होता है; तथा दूसरा समूह नियंत्रित (controlled group)होता है। स्वाश्रयी चर का आश्रयी चर पर पडने वाला परिणाम जानने के लिए शोध कर्ता जिस समूह पर स्वाश्रयी चर का

प्रायोगिक उपचार करता है; उसे प्रायोगिक समूह कहते है; तथा दूसरे समूह को सामान्य स्थिति मे रखता है; उसे नियंत्रित समूह कहते है। दोनो समूहों मे स्वाश्रयी चर के सिवाय अन्य बाहरी सभी घटकों मे समानता रखने का अत्यंत दक्षतापूर्वक प्रयास करता है। स्वाश्रयी चर का परिणाम जानने के लिए उसका प्रयोग जिस समूह पर किया जाता है उसे प्रायोगिक समूह कहते है। तथा जिस समूह पर स्वाश्रयी चर का प्रयोग नही किया जाता; उस समूह को नियंत्रित समूह कहते हैं। दूसरे समूह को नियंत्रित समूह इसलिए कहा जाता है कि; भले ही उस समूह पर स्वाश्रयी चर का प्रयोग न किया हो; परंतु अन्य बाह्य प्रभावकारी घटकों से भी मुक्त रखा जाता है। इसलिए उन्हे बाह्यकारी चर कहा जाता है। उनसे बचाने के लिए उन बाह्यकारी प्रभाव करनेवाले चरोंको नियंत्रित किया जाता है; या प्रभावहीन किया जाता है। अतः ऐसे बाह्य प्रभावकारी चरों (external or intervening variable) को नियंत्रित चर कहते है; तथा उस समूह को नियंत्रित समूह कहते है। उदाहरण के लिए : किसी नयी कंपनी ने एक ऐसा पौष्टिक आहार का निर्माण किया; जिसके सेवन से कंपनी वजन बढाने का दावा करती है। यह विज्ञापन देखकर किसी शोध कर्ता ने उसकी सत्यता जानने के लिए प्रयोग करने का निश्चय किया। इस प्रकार के शोध कार्य मे दो अलग अलग प्रकार की विधियों का अनुसरण कर सकते हैं। एक; प्रयोशाला विश्लेषण पद्धति; जिसमे प्रयोगशाला मे रासायनिक विघटन के द्वारा उस पौष्टिक आहार मे क्या क्या अन्न घटक मौजूद है; इसका परीक्षण करना; और दूसरी विधि सामाजिक विज्ञान के अनुसंधान की है। दूसरी विधि मे कुछ व्यक्ति का चयन कर उनके समूहों को उस पौष्टिक आहार को देकर उन पर उसका प्रायोगिक उपचार करना। उन दोनो समूहों मे अंतर्भूत व्यक्ति की उम्र, उनका वजन, उनका खान–पान; आदि वजन से संबंधित एवं कारक घटकों की दृष्टि से समानता रखने की दक्षता रखते हुए दोनो समूह सर्व दृष्टि से समान बनाये जाते हैं। यहां पर प्रयोग शाला के रासायनिक प्रयोग नही; बल्कि व्यक्तियों के प्रायोगिक समूह पर प्रयोग किया जाता है। उस पौष्टिक आहार का उन पर प्रत्यक्ष प्रयोग किया जाता है। उन्हे कुछ विशिष्ट एवं निश्चित कालावधि के लिए नियमित रुपसे पौष्टिक आहार की अतिरिक्त मात्रा (नियमित भोजन के अलावा) दी जाती हैं। निर्धारित समयावधि के बाद प्रायोगिक एवं नियंत्रित समूहों की वजन मे तुलना की जाती हैं। दोनो समूहों के वजन मे सार्थक अंतर मिल गया तो संबंधित कंपनी का दावा सत्य है; ऐसा निष्कर्ष निकाला जाता है। अन्यथा कंपनी का दावा सरासर झूठ है; ऐसा निष्कर्ष निकाला जाता है।

उपरोक्त उदाहरण में पौष्टिक आहार स्वाश्रयी चर तथा उनका वजन पर होने वाला परिणाम आश्रयी चर है। इस प्रयोग मे जो प्रायोगिक समूह है; उसी समूह को पौष्टिक आहार दिया जाता है; लेकिन नियंत्रित समूह को सामान्य स्थिति मे रखा जाता है। दोनो समूहों के व्यक्ति के वजन मे पाया गया अंतर सार्थक है अथवा नही यह अन्य सभी प्रभावकारी घटक कैसे और कहां तक नियंत्रित किए सकते है? इसपर निर्भर करता है।

(ग.1) प्रायोगिक शोध विधि का स्वरूप

आर. एस. पटेल के मतानुसार; 'स्वाश्रयी तथा आश्रयी चरों के बीच होने वाले संबंध के बारे में वैध निष्कर्षो तक पहुँचने के लिए परिकल्पनाओं का परीक्षण करने मे शोध कर्ता को सहायक सिद्ध करने की संपूर्ण प्रक्रियाओं की शोध अभिकल्प एक परिपूर्ण रूपरेखा है। "Experimental design is the blue print of the procedure s that enable the researcher to test hypotheses by reaching valid conclusions about relationship between independent and dependent variables". (R. S. Patel - 2015)

जॉन बेस्ट कहते है; 'अनुसंधान रूपरेखा का प्रयोग एक अंतिम प्रारूप है; जो शोधकर्ता के समय परिकल्पना का अत्यंत कठोर परीक्षण प्रस्तुत करता है।' "The experiment is the ultimate form of research design, providing the most rigorous test of hypothesis that is available to the scientist". (John W. Best - 2002)

वॉल्टर बोर्ग के मतानुसार; 'प्रयोगात्मक शोध मे ज्ञात परिस्थिति क्या हो रहा है? यह जानने का एक प्रयास किया जाता है। नियंत्रित स्थिति मे क्या हो रहा है? उसका अवलोकन किया जाता है। दो घटकों मे या घटनाओं के संबंधित चरो मे क्रियात्मक संबंध को ज्ञात किया जाता है; तथा अन्य सभी घटकों को प्रयत्नपूर्वक नियंत्रित रखते हुए संपूर्ण प्रक्रिया का अवलोकन, मापन और उनके परिणामों का सामान्यीकरण किया जाता है।

- Experimental research is,-
- an effort to see what happens in a known situation.
- an observation carried out in a controlled situation
- a discovery of controlling all other factors save one and then manipulate that factor to observe, measure and generalise, its effect on any phenomenon".

(ग.2) प्रायोगिक शोध पद्धति का महत्त्व :

प्रयोगात्मक शोध पद्धति का उपयोग विज्ञान के विषयों मे अत्यंत महत्त्वपूर्ण है; तथा सामाजिक क्षेत्र की समस्याओं का अध्ययन करने मे भी होता है। इस प्रक्रिया मे प्रभावकारी घटकों को नियंत्रित रखकर एक विशिष्ट घटक का दूसरे घटक पर क्या प्रभाव होता है; यह प्रमाणित किया जाता है।

इस शोध पद्धति मे बाह्य प्रभावकारी घटकों/चरोंका भौतिक नियंत्रण सहजता से किया जा सकता है।

चरों को संपूर्णतः नियंत्रित करने से शोध कर्ता अपना शोध कार्य एक निश्चित दिशा मे प्रयोग कर सकता है।

इस शोध पद्धति से प्राप्त निष्कर्षोंका सामान्यीकरण किया जाता है; तथा वे दीर्घकालीन एवं स्थायी स्वरूप मे लागू किए जा सकते है।

प्रयोग करते समय संपूर्ण परिस्थिति पर और प्रक्रियाओं पर नियंत्रण रखते हुए अत्यंत दक्षता पूर्वक अवलोकन किया जा सकता है।

यह एक सबसे अधिक वैज्ञानिक सैद्धांतिक तथा विश्वसनीय पद्धति मानी जाती है।

इससे प्राप्त निष्कर्ष अधिक विश्वसनीय तथा प्रमाणिक होते है।

नियंत्रित परिस्थिति के अलावा सामान्य एव स्वाभाविक परिस्थिति में भी इस पद्धति द्वारा शोध कार्य कर सकते है।

यह एक वैज्ञानिक, शास्त्र शुद्ध एवं पद्धति शील प्रक्रिया है।

इस पद्धति द्वारा परिकल्पनाओं का परीक्षण करने की सुविधा होने के कारण इससे प्राप्त निष्कर्ष विशुद्ध रुप में पाये जाते है।

(ग.3) प्रायोगिक शोध विधि के प्रकार :

किसी प्रयोग मे यदि बाह्य प्रभावकारी चरों को पूर्ण रूप से नियंत्रित किया जाता है; तो ऐसे प्रायोगिक विधि को विशुद्ध प्रायोगिक शोध विधि कहते है। परंतु सामाजिक क्षेत्र के अनुसंधान मे कुछ प्रयोग ऐसे होते है जिसमे बाह्य प्रभावकारी चरों को नियंत्रित करना कठीन या असंभव होता है। ऐसे अनियंत्रित स्थिति मे किए गए प्रयोग को प्रायः प्रायोगिक अथवा अर्ध प्रायोगिक शोध विधि कहते है। इससे यह प्रतीत होता है; की प्रयोग भी दो प्रकार के होते है। प्रयोगशाला में किए जाने वाले वैज्ञानिक प्रयोग और

समाज मे किए जानेवाले सामाजिक प्रयोग। प्रयोगशाला में वैज्ञानिक प्रयोग द्वारा किए जानेवाले शोध कार्य की विशुद्ध प्रायोगिक शोध विधि होती है; और सामाजिक क्षेत्र मे किए जानेवाले प्रयोग को प्रायः प्रायोगिक शोध विधि कहते है। इससे प्रयोग के दो प्रकार; वैज्ञानिक प्रयोग और सामाजिक प्रयोग तथा प्रायोगिक शोध विधि के भी दो प्रकार होते है; जो निम्न लिखित है।

(1) विशुद्ध प्रायोगिक शोध विधि (pure experimental research design)

(2) प्रायः प्रायोगिक शोध विधि (quasi / semi experimental research design)

(ग.4) विशुद्ध प्रायोगिक शोध विधि के अभिकल्प :

विशुद्ध प्रायोगिक शोध विधि के अभिकल्प अनेक प्रकार के होते है। उन सब प्रायोगिक शोध विधि के अभिकल्पों का सविस्तार वर्णन अग्रलिखित दिया जा रहा है।

(1) प्रायोगिक शोध अभिकल्प (experimental research design) :

प्रायोगिक अभिकल्प यह एक ऐसी कार्य योजना है; जिसमे स्वाश्रयी एवं आश्रयी चरों के संबंध का विश्लेषण करने की संपूर्ण प्रक्रिया का वर्णन होता है? प्रयोग पूर्ण होने के पश्चात उसके परिणाम जानने के लिए पूर्वनिर्धारित परिकल्पनाओं का परीक्षण करने संबंधी संपूर्ण प्रक्रिया एवं गतिविधियों का एक क्रमबद्ध एवं सुस्पष्ट वर्णन करता है। 'प्रयोगात्मक शोध प्रक्रिया मे जो गतिविधियां करनी पडती है; उनका क्रमबद्ध नियोजन करना आवश्यक होता है। उन सभी गतिविधियों की एक आव्युहात्मक रचना को प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प कहते है।' जिस प्रकार कोई वस्तू का निर्माण करने हेतू सर्व प्रथम उसका रेखाचित्र तैयार करना आवश्यक होता है; ठीक उसी प्रकार कोई भी शोध कार्य का प्रारंभ करने से पूर्व उन सभी संभावित गतिविधियों की रूपरेखा बनाकर उसके अनुरूप ही शोध कार्य किया जाता है। अर्थात इस प्रायोगिक शोध कार्य के रेखाचित्र या रूपरेखा को ही प्रायोगिक शोध अभिकल्प कहा जाता है। सामाजिक क्षेत्र की समस्याओं का अध्ययन करने हेतु तैयार किए जानेवाले विभिन्न प्रकार के प्रायोगिक अभिकल्पोंका वर्णन अग्रलिखित है।

(1.1) एक समूह प्रयोग पश्चात परीक्षण अभिकल्प (single group post test design)

इस अभिकल्प मे एकमात्र समूह पर प्रयोग किया जाता है; तथा प्रयोग समाप्त होने के पश्चात उसके परिणामों का परीक्षण किया जाता है। इसलिए इसे एक समूह प्रयोग पश्चात परीक्षण अभिकल्प कहते है। इस अभिकल्प को अग्ररेखीत आकृति द्वारा अधिक सुलभ कियाजा जासकता है।

आ.क्र.2 : एक समूह प्रयोग अभिकल्प (1)

उपरोक्त आकृती क्र. 2 मे **S** = न्यादर्श समूह (sample), **X** = प्रायोगिक उपचार (experiment) और **T** = प्रयोग पश्चात परीक्षण (post test) है।

इस एक समूह प्रयोग पश्चात परीक्षण अभिकल्प मे प्रयोग करने से पूर्व न्यादर्श/प्रतिदर्श का चयन यादृच्छिक पद्धति से किया जाता है। उस यादृच्छिक प्रतिदर्श के समूह पर पूर्व नियोजित प्रयोग का उपचार किया जाता है; और बाद मे किए गए प्रयोग के परिणामों का परीक्षण किया जाता है। यादृच्छिक प्रतिदर्श के समूह मे सहभागी प्रतिदर्श के परिणामों का (responses) परीक्षण किया जाता है। यह परिणाम दो प्रकार के होते है। एक अच्छा परिणाम या सकारामक परिणाम या धनात्मक परिणाम (possitive effect) और दूसरा परिणाम विपरीत या नकारात्मक या ऋणात्मक (negitive effect) होता है। इन दो परिणामों के अलावा तीसरा विकल्प भी सिद्ध हो सकता है; जिसे शून्य परिणाम (null effect) कह सकते है; अर्थात कुछ भी परिणाम न होना। किसी प्रयोग के उपचार का अनुकूल या प्रतिकूल या कुछ भी परिणाम न होना; यही निष्कर्ष किसी भी प्रायोगिक परीक्षण से प्राप्त हो सकता है। यह अभिकल्प अत्यंत सामान्य स्थिति में किया जाता है। जब नियंत्रित समूह उपलब्ध ना हो; अथवा दो समूहों मे समानता ना हो; अथवा जब अधिक विश्वसनीय निष्कर्ष की आवश्यकता ना हो; तब इस प्रायोगिक अभिकल्प का उपयोग किया जाता है।

उदाहरण के लिए किसी कंपनी ने मधुमेह की बिमारी के उपचार हेतु किसी दवा का निर्माण किया और उसका समाचार पत्र मे विज्ञापन दिया। उस दवा का मधुमेह की बिमारी पर कैसा परिणाम होता है? इस परिकल्पना को लेकर समाचार पत्र मे छपा विज्ञापन सही है या गलत; ये जानने के लिए शोधकर्ता ने उस दवाई का प्रयोग किया। उस उपचार का परिणाम क्या हो सकता है?

(1) उस कंपनी की दवा का मधुमेह पर उपचार करने से मधुमेह से मुक्ति मिलती है।

(2) उस दवा का मधुमेह पर कोई भी असर नही होता। अथवा

(3) उस दवा का उपचार करने से विपरीत परिणाम होता है।

इन तीन संभावित परिणामों को ध्यान मे लेते हुए निर्धारित परिकल्पना का परीक्षण किया जाता है। इस परीक्षण को लेकर कुछ व्यक्ति समूह पर दवा का उपचार किया जाता है। उपचार कोर्स पूर्ण होने के बाद उनके मधुमेह की जांच की जाती है। इसमे अगर पूर्व परीक्षण नही किया गया तो पश्चात परीक्षण मे जो परिणाम या निष्कर्ष पाया जाता है; वह उस दवा से ही हुआ है; यह माना जाता है। परंतु क्या यह दावा सत्य है? नहीं यह दावा सत्य नही माना जा सकता। क्योंकि पूर्व परीक्षण नही करने से प्रयोग मे सहभागी प्रतिदर्श को मधुमेह की बिमारी या समस्या थी अथवा नही यह ज्ञात ही नही था। इसलिए पूर्व परीक्षण करना अनिवार्य होता है। इस अभिकल्प का यह दोष दूर करने के लिए इसी एक समूह अभिकल्प का दूसरा प्रकार समझना होगा; जो अग्र लिखीत है।

(1.2) एक समूह प्रयोगपूर्व एवं पश्चात परीक्षण अभिकल्प (single group pre & post test design)

उपर्युक्त अभिकल्प मे जो त्रुटी है; वह त्रुटी प्रयोगपूर्व एवं प्रयोगपश्चात परीक्षण के द्वारा दूर की जा सकती है। अतः प्रयोग करने से पहले भी उनका पूर्व परीक्षण किया जाना आवश्यक है। प्रायोगिक उपचार के पश्चात प्राप्त परिणाम केवल उस प्रयोग के कारण ही प्राप्त होता है; ऐसा शत प्रतिशत दावा करने के लिए प्रयोग पूर्व परीक्षण आवश्यक है। प्रयोग पूर्व परीक्षण से प्रतिदर्श समूह मे जिनको मधुमेह की समस्या है उनका ही चयन किया जाता है। ऐसे ही मरीजों पर दवा का उपचार प्रयोग किया जाता है। कुछ दिनो के बाद निर्धारित उपचार कोर्स पूरा होते ही फिर उनका परीक्षण किया तो उससे यह ज्ञात होता है कि; दवा के उपचार का मधुमेह पर क्या असर हुआ? इस परीक्षण के आधार पर उस कंपनी का दावा सही है; अथवा गलत है; इसका निर्णय लिया

जाता है। इस प्रकार एक समूह अभिकल्प द्वारा प्रायोगिक शोध पद्धति द्वारा शोध कार्य पूर्ण किया जाता हैं इस अभिकल्प को निम्न आकृति द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है।

[S] ----> [T_1] ----> [X] ----> [T_2]

आ.क्र. 3 : एक समूह प्रयोग अभिकल्प (2)

उपरोक्त आकृती मे;

S = प्रायोगिक न्यादर्श समूह (sample group),

X = प्रायोगिक उपचार (experiment),

T_1 = प्रयोग पूर्व परीक्षण (pre test) और

T_2 = प्रयोग पश्चात परीक्षण (post test) है।

D = प्रयोगपूर्व एवं प्रयोगपश्चात परीक्षण के परिणामों मे अंतर (Difference)

प्रयोग पूर्व परीक्षण प्रयोग पश्चात परीक्षण मे जो अंतर (D = T2 - T1) प्राप्त होगा; वही प्रयोग का निष्कर्ष होगा। वही प्रायोगिक उपचार का परिणाम होगा।

(1.3) दो समूह प्रयोग पश्चात परीक्षण अभिकल्प (double group post test design) :

दो समूह प्रयोग पश्चात परीक्षण अभिकल्प मे दो समतुल्य समूहों का चयन किया जाता है। इसमे सम्मिलित प्रतिदर्श (sample) का चयन यादृच्छिक पद्धति द्वारा अथवा पूर्व परीक्षण के आधार पर किया जाता है। इसमे दोनो समूहों में समानता होना आवश्यक होता है। इसीलिए प्रतिदर्श का चयन यादृच्छिक/दैव पद्धति (Ramdom method) से किया जाता है। दोनो समूहों का चयन करने के बाद एक समूह पर प्रयोग उपचार किया जाता है; इसलिए उसे प्रायोगिक समूह (experimental group) कहते है। तथा दूसरे समूह को नियंत्रित समूह (controlled group) कहते है। दूसरे समूह पर प्रयोग का उपचार नही; बल्कि सामान्य अथवा पारंपरिक उपचार किया जाता। दोनो समूह के संबंधित बाह्य चरों (external variables) को नियंत्रित रखा जाता है। अतः प्रायोगिक समूह पर नियोजित प्रयोग का उपचार पूर्ण होने के बाद दोनो समूहोंका प्रयोग पश्चात परीक्षण किया जाता है। अंत मे दोनो समूहों के परीक्षण के परिणामों का तुलनात्मक विश्लेषण किया जाता है। अगर दोनो समूहोंके परीक्षण मे अंतर मे सार्थकता पायी जाती है तो प्रायोगिक उपचार परिणामकारक या प्रभावशाली है; ऐसा निष्कर्ष निकाला जाता है।

यह परिणाम उस प्रायोगिक उपचार का ही है ऐसा माना जाता है। इस अभिकल्प को अग्रलिखित आकृति द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है।

[Sx] ----> [X] ----> [Tx]

[Sc] ----> [--] ----> [Tc]

आ.क्र. 4 : दो समूह प्रयोग अभिकल्प (1)

उपरोक्त आकृति मे;

Sx = प्रायोगिक न्यादर्श समूह (sample group No.1),

Sc = नियंत्रित न्यादर्श समूह (sample group No.2),

X = प्रायोगिक उपचार (experiment),

Tx = प्रयोग पश्चात परीक्षण (post test) और

Tc = प्रयोग पश्चात परीक्षण (pre test) है।

प्रयोग पूर्व परीक्षण प्रयोग पश्चात परीक्षण मे जो अंतर (D = Tx - Tc) प्राप्त होगा वह प्रयोग का निष्कर्ष होगा। वही प्रायोगिक उपचार का परिणाम होगा।

दोनो समूह परिणामों का अंतर दो समूह प्रयोग पश्चात अभिकल्प मे कभी कभी कुछ बाह्य प्रभावकारी चरों को नियंत्रित नही किया जा सकता; तब उसे विशुद्ध प्रयोग (Pure Experiment) नही कहते। अगर बाह्य प्रभावकारी चरोंको नियंत्रित करना असंभव हो; ऐसी स्थिति मे किए गए प्रयोग के निष्कर्ष पूर्णतः विश्वसनीय नही होते। तब उस पद्धति को प्रायः प्रायोगिक विधि (quasi experimental method) कहते है। इसीलिए किसी भी शोध कार्य के निष्कर्ष अत्यंत विश्वसनीय एवं अचूक होने की अपेक्षा हो; तब प्रयोग पश्चात परीक्षण अभिकल्प का उपयोग नही करना चाहिए; बल्कि दोनो समूह का प्रयोग पूर्व एवं प्रयोग पश्चात परीक्षण का अभिकल्प अपनाना आवश्यक है।

(1.4) दो समूह प्रयोग पूर्व एवं पश्चात परीक्षण अभिकल्प (double group pre & post post test design) :

1) इस अभिकल्प मे दोनो समूहों का प्रयोग पूर्व एवं प्रयोग पश्चात परीक्षण किया जाता है।

2) इस अभिकल्प मे अस्वाभाविक या कृत्रिम परिस्थिति में प्रयोग किया जाता है।

3) दोनो समूहों के प्रतिदर्श का चयन यादृच्छिक (random) पद्धति से किया जाता है। अथवा पूर्व परीक्षण के आधार पर किया जाता है।

4) दोनो समूह मे संबंधित प्रभावकारी चरों (intervening variables) को कुशलतापूर्वक एवं कठोरता से नियंत्रित किया जाता है।

5) परिस्थिति भले ही कृत्रिम हो; लेकिन स्वाभाविकता का आभास निर्माण किया जाता है।

6) प्रतिदर्श का चयन यादृच्छिक पद्धति द्वारा करने के लिए कुल जनसंख्या ज्ञात होना आवश्यक है। अतः कुल जनसंख्या ज्ञात न होने पर प्रतिदर्श का चयन याद्च्छिक पद्धति से नही किया जा सकता।

7) प्रतिदर्श का चयन अगर यादृच्छिक पद्धति से करना संभव ना हो; तब असंभावित प्रतिदर्श चयन विधि का उपयोग कर सकते है। लेकिन दोनो समूहों का समतुल्य होना अनिवार्य है; यह बात ध्यान मे रहनी चाहिए इसके लिए प्रयोगपूर्व परीक्षण का आधार भी लिया जा सकता है।

8) दोनो समूहों के प्रतिदर्श समतुल्य बनाने के लिए पारंपरिक या अपारंपरिक विधि या प्रक्रियाओं का उपयोग किया जा सकता है। उदाहरण के लिए प्रयोगपूर्व परीक्षण के आधार पर वर्गीकृत करना या सह जुडवा वर्गीकरण पद्धति से दोनो समूहों के प्रतिदर्श को समतुल्य किया जा सकता है।

9) सह जुडवा वर्गीकरण पद्धति मे पर्याप्त मात्रा मे जुडवा बच्चे या प्राणी उपलब्ध नही होते। इस लिए इसका शब्दशः अर्थ न लेकर पूर्व परीक्षण के आधार पर समतुल्य प्रतिदर्शोंका दो समूहों मे समान रुप से विभाजन कर सकते है। समतुल्य प्रतिदर्श की जोडियां बनाकर दोनो समूहों मे समान रुपसे बांट सकते है।

इस तरह वर्गीकृत किए गए दोनो समूह सभी दृष्टि से समतुल्य बनते है। प्रतिदर्श चयन की प्रक्रिया पुर्णतः वैज्ञानिक होनी चाहिए तभी यह संभव हो सकता है। प्रतिदर्श चयन की विधि का अधिक स्पष्टीकरण संबंधित अध्याय मे दिया गया है। इस अभिकल्प को अग्रलिखित आकृति द्वारा स्पष्ट किया जाता है।

[Sx] ----> [T1x] ----> [X] ----> [T2 x]

[Sc] ----> [T1c] ----> [--] ----> [T2c]

आ.क्र. 5 : दो समूह प्रयोग अभिकल्प (2)

जिसमे; S_x = प्रायोगिक न्यादर्श समूह (sample group No.1),

S_c = नियंत्रित न्यादर्श समूह (sample group No.2),

X = प्रायोगिक उपचार (experiment),

T_1 = प्रयोग पूर्व परीक्षण (pre test) और

T_2 = प्रयोग पश्चात परीक्षण (post test) है।

D = दो परीक्षण ों मे अंतर (difference)

$D1 = T2x - T1x \quad T2x - T1x \neq 0$ .....(1)

$D2 = T2c - T1c \quad T2c - T1c \neq 0$ .....(2)

$D3 = T2x - T2c \quad T2x - T2x = 0$ .....(1)

उपर्युक्त समीकरणों में तीन परिकल्पनाएं (hypotheses) दर्शायी गयी है। प्रयोग पूर्व परीक्षण प्रयोग पश्चात परीक्षण में जो अंतर (D) प्राप्त होगा तथा दोनों समूहों के प्रयोग पश्चात परीक्षण में जो अंतर (D) प्राप्त होगा; वही प्रयोग का निष्कर्ष होगा और वही प्रायोगिक उपचार के परिणाम होगे। विशुद्ध प्रायोगिक पद्धति का यह एक अत्यंत विश्वसनीय एवं वैज्ञानिक अभिकल्प है। इस अभिकल्प की आकृति में दिए गए संकेताक्षरों का वर्णन गणितीय समीकरण में बताया जा सकता है। जिसे समीकरणात्मक परिकल्पना कह सकते है।

(1) प्रायोगिक समूह एवं नियंत्रित समूह के प्रयोगपूर्व परीक्षण मे भेद जो शून्य बताया है; अर्थात् वह दोनो समूह समतुल्य है। यहा दोनो समूह प्रयोग पूर्व परीक्षण के आधार पर बनायें गए है इसलिए दोनों समतुल्य है उनमें कोई अंतर नही है। इसलिए इसकी परिकल्पना निर्धारित करने की आवश्यकता नही है।

(2) प्रायोगिक समूह एवं नियंत्रित समूह के प्रयोग पश्चात परीक्षण मे शून्य अंतर माना गया है; उनमें कोई भेद नही है, अर्थात दोनों समूहों पर जो भी परिणाम हुआ वह समान है।

(3) प्रायोगिक समूह के प्रयोग पूर्व एवं प्रयोग पश्चात परीक्षण मे अंतर (जो शून्य नही है)

(4) नियंत्रित समूह के प्रयोगपूर्व एवं प्रयोग पश्चात परीक्षण मे अंतर (जो शून्य नही है)

उपर्युक्त D1 से D3 तक सभी परीक्षणों मे समीकरणात्मक रूप मे दर्शाया गया अंतर–विधानों के आधार पर परिकल्पनाओं का निर्धारण किया गया है। इस तरह दो समूहों का प्रयोग पूर्व एवं प्रयोग पश्चात परीक्षण वाला प्रायोगिक शोध अभिकल्प तैयार किया जाता है। इस अभिकल्प के कुछ खास विशेषताएं अथवा गुण जो निम्नलिखित है–

1) यह अभिकल्प त्रुटि रहित अथवा निर्दोष अभिकल्प माना जाता है।

2) इस अभिकल्प द्वारा किए गए शोध कार्य के निष्कर्ष अधिक विश्वसनीय होते है।

3) सामाजिक विज्ञान में शोध कार्य करने के लिए यह अभिकल्प सबसे अधिक उपयुक्त सिद्ध हो सकता है।

4) कभी–कभी इस अभिकल्प में दोनों समूह प्रायोगिक हो सकते है। उदाहरण के लिए मधुमेह की बीमारी का इलाज करने वाली दो भिन्न–भिन्न कंपनियों की दवा का परिणाम दो भिन्न–भिन्न समूहों पर क्या होता है? यह देखने के लिए दोनों समूहों का प्रायोगिक समूह बनाकर दोनों का प्रायोगिक उपचार किया जा सकता है। अतः इस स्थिति में यहाँ नियंत्रित समूह नही होता अथवा तीसरा नियंत्रित समूह का चयन भी किया जा सकता है। इसी तरह के दो से अधिक समूहों का एक साथ अध्ययन किया गया तो उसे घटकात्मक अभिकल्प कहते है।

(1.5) घटकात्मक शोध अभिकल्प (factorial research design) :

शोधकर्ता जब दो या दो से अधिक प्रायोगिक समूहों का चयन करते हुए दो या दो से अधिक स्वाश्रयी चरों के परिणामों की तुलना करता है तब घटकात्मक अभिकल्प का उपयोग करने की आवश्यकता होती है। उदाहरण के लिए दूरस्थ शिक्षा विभाग से अध्ययन करने वाले छात्रों को दो भिन्न–भिन्न प्रकार की अध्ययन सामूग्री दी गयी तो उनका छात्रों के अध्ययन पर क्या प्रभाव पडेगा? यह जानने के लिए प्रायोगिक शोध अभिकल्प तैयार करना है। इसमे दो कारक घटकों का दो भिन्न घटकों पर होने वाले परिणामों का अध्ययन करना है। इस प्रक्रिया में अनेक घटक शामील होते है। इसलिए इसे घटकात्मक शोध अभिकल्प कहते है। इसमे दो प्रायोगिक तथा एक नियंत्रित समूह है। इस अभिकल्प का स्पष्टीकरण निम्न लिखित आकृति द्वारा अधिक सुलभ होगा।

Group	Pre Test	Experiment	Post Test
[Sa] ---->	[Ta] ---->	[X1] ---->	[T1]
[Sb] ---->	[Tb] ---->	[X2] ---->	[T2]

[Sc] ----> [Tc] ----> [---] ----> [T3]

आ.क्र. 6 : घटकात्मक शोध अभिकल्प (1)

विशुद्ध प्रायोगिक पद्धति मे घटकात्मक शोध अभिकल्प एक सखोल एवं व्यापक अध्ययन करने वाला अत्यंत विश्वसनीय एवं वैज्ञानिक अभिकल्प है। इस अभिकल्प की आकृति में दिए गए संकेताक्षरों का वर्णन गणितीय समीकरण में बताया जा सकता है। जिसे समीकरणात्मक परिकल्पना कह सकते है। उससे घटकात्मक शोध अभिकल्प की परिकल्पनाओं का निर्धारण भी किया जा सकता है।

[Sa] = प्रायोगिक समूह क्र. 1

[Sb] = प्रायोगिक समूह क्र. 2

[Sc] = नियंत्रित समूह क्र. 3

[Ta] = प्रायोगिक समूह क्र. 1 का प्रयोगपूर्व परीक्षण

[Tb] = प्रायोगिक समूह क्र. 2 का प्रयोगपूर्व परीक्षण

[Tc] = नियंत्रित समूह क्र. 3 का प्रयोगपूर्व परीक्षण

[X1] = प्रायोगिक समूह क्र. 1 का प्रायोगिक उपचार

[X2] = प्रायोगिक समूह क्र. 2 का प्रायोगिक उपचार

[X3] = नियंत्रित समूह क्र. 3 का पारंपारिक उपचार

[T1] = प्रायोगिक समूह क्र. 1 का प्रयोग पश्चात परीक्षण

[T2] = प्रायोगिक समूह क्र. 2 का प्रयोग पश्चात परीक्षण

[T3] = प्रायोगिक समूह क्र. 3 का प्रयोग पश्चात परीक्षण

उपरोक्त तीनों समूह में सहभागी प्रतिदर्श का चयन याद्च्छिक चयन पद्धति से अथवा पूर्व परीक्षण के आधार पर किया जाता है। चयन किए गए प्रतिदर्शों का तीनों समूह मे समानता के आधार पर वर्गीकरण किया जाता है, ताकि तीनों समूह समतुल्य हो। तीनों समूह के बाह्य प्रभावकारी चरों को नियंत्रित किया जाता है। उनमें से दो समूहों पर संशोधित स्वाश्रयी चरों का पूर्व निर्धारित निश्चित मात्रा में प्रयोगोपचार किए जाते है। यह प्रयोग अत्यंत कृत्रिम स्थिति में परंतु उतने ही स्वाभाविकता से किए जाते है। प्रयोगोपचार के पश्चात तीनों समूह को कसौटी देकर परीक्षण किया जाता है। परीक्षण में प्राप्त परिणामों का तुलनात्मक विश्लेषण करने के लिए निम्नलिखित परिकल्पनाओं के संदर्भ मे वर्गीकरण किया जाता है।

परिकल्पना (hypotheses) : इस अभिकल्प में कम से कम 6 परिकल्पनाओं का निर्धारण करना आवश्यक है; जो निम्न लिखितानुसार होनी चाहिए।

1) D_1 = प्रायोगिक समूह क्र. 1 के प्रयोगपूर्व एवं प्रयोग पश्चात परीक्षण से प्राप्त परिणामों म कोई सार्थक अंतर नही है। (T1 - Ta = 0)

2) D_2 = प्रायोगिक समूह क्र. 2 के प्रयोग पूर्व एवं प्रयोग पश्चात परीक्षण से प्राप्त परिणामों म कोई सार्थक अंतर नही है। (T2 - Tb = 0)

3) D_3 = नियंत्रित समूह क्र. 3 के प्रयोगपूर्व एवं प्रयोग पश्चात परीक्षण से प्राप्त परिणामों मे कोई सार्थक अंतर नही है। (T3 - Tc = 0)

4) D_4 = प्रायोगिक समूह क्र. 1 एवं 2 के प्रयोग पश्चात परीक्षण से प्राप्त परिणामों मे कोई सार्थक अंतर नही है। (T1 - T2 = 0)

5) D_5 = प्रायोगिक समूह क्र. 1 एवं 3 के प्रयोग पश्चात परीक्षण से प्राप्त परिणामों मे कोई सार्थक अंतर नही है। (T1 - T3 = 0)

6) D_6 = नियंत्रित समूह क्र. 2 एवं 3 के प्रयोग पश्चात परीक्षण से प्राप्त परिणामों मे कोई सार्थक अंतर नही है। (T2 - T3 = 0)

तीनों समूहों के प्रयोग पूर्व परीक्षणों से प्राप्त परिणामों के आधार पर वर्गीकृत किया गया तो पूर्व परीक्षणों के आधार पर उनसे संबंधित परिकल्पना निर्धारित करने की कोई आवश्यकता नही होती है। इसलिए यहां केवल 6 परिकल्पनाओं का निर्धारण किया है। परंतु जब यादृच्छिक पद्धति के आधार पर प्रतिदर्श का चयन किया हो तो उनके पूर्व परीक्षणों के आधार पर उनसे संबंधित परिकल्पना निर्धारित करना आवश्यकता होता है। ऐसी स्थिति में परिकल्पनाओं की संख्या बढ जाती है। परिकल्पनाओं की संख्या जितनी ज़्यादा होगी उतना ही घटकात्मक अभिकल्प बड़ा होता है।

तीनों समूहों के प्रयोग के पश्चात परीक्षणों के परिणाम समान है ऐसी परिकल्पना भले ही निर्धारित की हो परंतु प्रयोगोपचार के बाद प्रत्यक्ष रूप मे कुछ न कुछ अंतर होना स्वाभाविक है। इस स्वाभाविक सत्य को मानते हुए शोधकर्ता को तटस्थता से विश्लेषण करना पडता है; इसलिए शून्य परिकल्पना (Null Hypothesis) का निर्धारण किया जाता है। फिर भी शोधकर्ता अगर चाहे तो सभी समूहों के प्रयोग पूर्व एवं प्रयोग पश्चात परिणामों की तुलना करते समय निम्नलिखित परिकल्पनाओं का निर्धारण भी कर सकता है।

1) समूह क्र. 1 के प्रयोग पूर्व एवं प्रयोग पश्चात परीक्षण के परिणामों मे अंतर है।

2) समूह क्र. 2 के प्रयोग पूर्व एवं प्रयोग पश्चात परीक्षण के परिणामों मे अंतर है।

3) समूह क्र. 3 के प्रयोग पूर्व एवं प्रयोग पश्चात परीक्षण के परिणामों मे अंतर है।

4) समूह क्र. 1 एवं 2 के प्रयोग पूर्व एवं प्रयोग पश्चात परीक्षण के परिणामों मे अंतर है।

5) समूह क्र. 1 एवं 3 के प्रयोग पूर्व एवं प्रयोग पश्चात परीक्षण के परिणामों मे अंतर है।

6) समूह क्र. 2 एवं 3 के प्रयोग पूर्व एवं प्रयोग पश्चात परीक्षण के परिणामों मे अंतर है।

दो समूहों के दो परीक्षणों के परिणामों मे अंतर है; ऐसी परिकल्पना निर्धारित करने के बावजूद भी वह शून्य परिकल्पना की तरह पक्षपात रहित है। क्योंकि इस परिकल्पना मे किस समूह का परिणाम अधिक अच्छा है और किस समूह का परिणाम अच्छा नही है यह प्रतीत नही है। इस तरह से उपर्युक्त घटकात्मक अभिकल्प का उपयोग कर प्रायोगिक शोधकार्य संपन्न किया जाता है। अर्थात जितने स्वाश्रयी चर निर्धारित किए जाते है उतने उसके समूह और परिणाम भी पाए जाते है। इससे यह स्पष्ट होता है कि परिणामों की संख्या एवं समूहों की संख्या समान होती है। कभी कभी एक ही प्रायोगिक उपचार का अनेक समूहों पर होने वाले परिणामों का भी अध्ययन किया जाता है। उदाहरण के लिए दूर शिक्षा विभाग के छात्रों को अध्ययन सामग्री तैयार की गयी। अध्ययन सामग्री तीन प्रकार की है। एक मुद्रित पुस्तिका, दूसरी कंप्युटर सी. डी. और तीसरा प्रकार संदर्भ पुस्तकें। तीनों प्रकार के अध्ययन सामग्री का दूर शिक्षा विभाग के अध्ययन पर छात्रों पर क्या असर होता है? इसमें छात्रोंके भी अनेक प्रकार हो सकते हैं। उदाहरण के लिए ग्रामीण, शहरी, आदिवासी, स्त्री, पुरूष, इत्यादि। ऐसी स्थिति में जो घटकात्मक अभिकल्प बनाये जाते है उन्हें 2 X 2, 3 X 3, 2 X 3, 2 X 4 आदि। यह जानने के लिए शोधकर्ता निम्न प्रकार का 3 X 2 अभिकल्प बना सकता है; जिसमे अध्ययन सामग्री तीन प्रकार की है; लेकिन परीक्षण दो प्रकार के है।

प्रायो. समूह Groups	पूर्व परीक्षण Pre Test	प्रयोगोपचार ExperimentPost	प्रयोग परीक्षण Test	परिणाम/अंतर Difference
[Sa]	[Ta]	[X1]	[T1]	T1 - Ta ≠ 0
[Sb]	[Tb]	[X2]	[T2]	T2 - Tb ≠ 0
[Sc]	[Tc]	[X3]	[T3]	T3 - Tc ≠ 0

आ.क्र. 7 : घटकात्मक शोध अभिकल्प

(2)

उपरोक्त आकृति में ;

[Sa] = प्रायोगिक समूह संख्या 1

[Sb] = प्रायोगिक समूह संख्या 2

[Sc] = प्रायोगिक समूह संख्या 3

[Sa] = स्वाश्रयी चर संख्या 1 का प्रयोग (मुद्रित अध्ययन साहित्य)

[Sa] = स्वाश्रयी चर संख्या 2 का प्रयोग (कंप्युटर सी. डी. में अध्ययन साहित्य)

[Sc] = स्वाश्रयी चर संख्या 3 का प्रयोग (संदर्भ पुस्तकों का अध्ययन साहित्य)

[Ta] = प्रायोगिक समूह क्र. 1 के पूर्व परीक्षण का मध्यमान

[Tb] = प्रायोगिक समूह क्र 2 के पूर्व परीक्षण का मध्यमान

[Tc] = प्रायोगिक समूह क्र 3 के पूर्व परीक्षण का मध्यमान

[T1] = प्रायोगिक समूह क्र. 1 के प्रयोग पश्चात परीक्षण का मध्यमान

[T2] = प्रायोगिक समूह क्र. 2 के प्रयोग पश्चात परीक्षण का मध्यमान

[T3] = प्रायोगिक समूह क्र. 3 के प्रयोग पश्चात परीक्षण का मध्यमान

आ. क्र. 7 में तीनों समूह प्रायोगिक है तथा अध्ययन साहित्य के तीनों प्रकार स्वाश्रयी चर है। इसलिए इस अभिकल्प को 2 x 3 का अभिकल्प कह सकते है। इसी अभिकल्प मे अगर चौथा समूह जोडा जाए परंतु स्वाश्रयी चर केवल तीन ही रहे और चौथा समूह नियंत्रित समूह हो तो ऐसी स्थिति में उसे 2 x 4 का अभिकल्प कहा जायेगा उपरोक्त परिणामों कों हम मध्यमान का संकेत अक्षर M द्वारा भी दिखा सकते है। परिणामों कों अगर M द्वारा दिखाया गया तो सभी परीक्षणों के परिणाम M1, M2, M3, ... इस तरह भी दिखाया जा सकता है। जैसे–

परिकल्पना Hypotheses	पूर्व परीक्षण Pre Test	प्रयोगोपचार Experiment	प्रयोग परीक्षण Post Test	परिणाम/अंतर Difference
H1	M1	X1	M4	M4 - M1 ≠ 0
H2	M2	X2	M5	M5 - M2 ≠ 0
H3	M3	X3	M6	M6 - M3 ≠ 0
H4	M1	X1	M4	M1 - M2 = 0
H5	M2	X2	M5	M1 - M3 = 0
H6	M3	X3	M6	M2 - M3 = 0

H7	M4	X1	M4	M4 - M5 = 0
H8	M2	X2	M5	M4 - M6 = 0
H9	M3	X3	M6	M6 - M5 = 0

आ.क्र. 8 : घटकात्मक शोध अभिकल्प

(3)

उपरोक्त 2 x 3 अभिकल्प में तीसरे समूह पर भी किसी अन्य पद्धति का प्रयोगोपचार किया जाता है; इसलिए उसे 3 x 3 का अभिकल्प कहा जायेगा। इस अभिकल्प में पूर्व परीक्षण एवं पश्चात परीक्षण के परिणाम M1 से M6 तक बताये है। इस अभिकल्प में तीनों समूह प्रायोगिक है तथा उन तीनों समूहों पर तीन भिन्न भिन्न प्रकार के प्रयोगोपचार करने के पश्चात उनके परिणामों का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है। उदाहरण के लिए क्र. 2 जैसे– एक मोबाईल फोन कंपनी ने अपने हॅन्डसेट का विज्ञापन करने हेतु तीन अलग–अलग विज्ञापन एजन्सी को विज्ञापन बनाने को कहा। तीनों कंपनी ने अपने–अपने तरीके से तीन प्रकार के विज्ञाापन बनाए। उन तीनों विज्ञापन का तीन अलग अलग प्रदेशों के समूहों पर प्रयोग किया। प्रयोग पश्चात तिनो विज्ञापन पद्धतियों के परिणामों की तुलना करते हुए कौन सा विज्ञापन सबसे अधिक परिणाम कारक एवं कौन सा विज्ञापन सबसे कम प्रभावकारी रहा इसका विश्लेषण किया। इस शोध अभिकल्प को 3 x 3 का घटकात्मक अभिकल्प करते है।

(1.6) बहु घटकात्मक शोध अभिकल्प (factorial research design) :

कभी–कभी अनेक समूहों पर अनेक स्वाश्रयी चरों का प्रयोग किया जाता है अथवा एक ही समूह के अनेक उप–समूहों में विभाजित करते हुए उन सबका अलग–अलग परिणाम देखा जाता है तब उसे बहु घटकात्मक (Multiple factors Design) अभिकल्प भी कह सकते है। इस बहु घटकात्मक अभिकल्प में चार स्वतंत्र चर (Independent variables) है तथा प्रायोगिक समूह संख्या (X1..... X4) चार है; जिसमें ग्रामीण, शहरी आदिवासी तथा विदेशी छात्रों का समावेश है। इसलिए इसे 4 x 4 का बहु घटकात्मक (Multiple factors Design) अभिकल्प कह सकते है। उदाहरण के लिए दूर शिक्षण विभाग द्वारा चार अलग–अलग प्रकार के अध्ययन साहित्य तैयार किए गए। उन्हें स्वतंत्र चर कहते हैं। इस अभिकल्प में अग्रलिखित चार स्वतंत्र चर है।

1) आदिवासी छात्रों को मुद्रित अध्ययन साहित्य (Printed learning material)

2) ग्रामीण छात्रों को कंप्युटर सी. डी. में अध्ययन साहित्य

3) शहरी छात्रों को कंप्युटर का पी.पी.टी. प्रोग्राम का अध्ययन साहित्य

4) विदेशी छात्रों को ऑन लाईन अध्ययन साहित्य

उक्त चारों प्रकार के अध्ययन सामग्री से प्रत्येक समूह के छात्रों को केवल किसी एक अध्ययन सामग्री का उपयोग करने का विकल्प देकर अन्य अध्ययन सामग्री पर निर्बंध लगाकर प्रयोगोपचार किया जाना है। दूर शिक्षा के स्नातकोत्तर स्तर पर अध्ययन करने वाले ग्रामीण, शहरी, आदिवासी तथा विदेशी छात्रों को वह अध्ययन सामग्री उपलब्ध कराई गई। इस तरह के प्रयोग में कुल 8 परीक्षण समूह बनते है। इस प्रकार यह चारों समूहों को प्रायोगिक समूह समझना चाहिए। इस अभिकल्प को बहु घटकात्मक अभिकल्प कहते है;। इस अभिकल्प का चित्र निम्नानुसार होगा।

समूह प्रकार	पूर्व परीक्षण	प्रयोग उपचार	पश्चात परीक्षण
G 1	M1	X1	M5
G 2	M2	X2	M6
G 3	M3	X3	M7
G 4	M4	X4	M8

आ.क्र. 9 : बहू घटकात्मक शोध अभिकल्प (1)

उपर्युक्त अभिकल्प के अलावा घटकात्मक अभिकल्प के कुछ अन्य विद्वानों ने घटकात्मक अभिकल्प के प्रतिमान (models) स्पष्ट किए है। उदाहरण के तौर पर सोलोमन के अभिकल्प का यहाँ पर उल्लेख किया जा सकता है। इन समूहों में पुरूष छात्र एवं स्त्री छात्र के भी समूह बनाये जा सकते है। अगर ऐसा किया तो कुल 16 परीक्षण समूह बनते है। परंतु ऐसा करने से जटिलता (complication) बढ जाती है। अतः शोधकर्ता का अनुभव एवं क्षमतानुसार ही मर्यादित घटकों पर ही अध्ययन करना सुविधा जनक होता है।

यहाँ एक और विशेष प्रकार का घटकात्मक अभिकल्प स्पष्ट कर सकते है। इसमें दो समूह प्रायोगिक होते है एवं दो समूह नियंत्रित होते है। सभी समूहों का चयन यादृच्छिक प्रतिदर्श चयन विधि से किया जाता है। इसलिए इन समूहों को याद्च्छिक समूह (Randomized Group) कहते है। प्रायोगिक विधि के स्वाश्रयी चरों का परिणाम कैसा होता है? यह देखने के लिए नियंत्रित समूहों के परीक्षणों से तुलना की जाती है। उदाहरण के लिए जनसंख्या शिक्षण उपक्रमों का छात्र एवं छात्राओं पर होने वाले प्रभाव

का परीक्षण वास्तव में देखा जाए तो, ये 2 x 2 कारक अभिकल्प का ही एक नमूना है। परंतु यहाँ इन समूहों में पुरूष छात्र एवं स्त्री छात्र के दो भिन्न समूह बना कर उन दोनों समूहों का तुलनात्मक अध्ययन करने के लिए ऐसे दो नियंत्रित समूहों का भी चयन किया जाता है।

समूह प्रकार	पूर्व परीक्षण	प्रयोग उपचार	पश्चात परीक्षण
G 1	M1	X1	M3
G 2	---	---	M4
G 3	M2	X2	M5
G 4	---	---	M6

आ.क्र. 10 : बहु घटकात्मक शोध अभिकल्प (2)

इस प्रकार के अभिकल्प से जनसंख्या शिक्षा का परिणाम देखने के लिए आवश्यक गतिविधियां अग्र लिखित रूप में बतायी जाती है।

1) प्रथम यादृच्छिक पद्धति से चार समान समूहों का चयन करना

2) समूह संख्या 1 एवं 2 का पूर्व परीक्षण (Pre test) करना।

3) समूह सं. 3 एवं 4 को पूर्व परीक्षण देने की आवश्यकता नही है परंतु वे सब समान है यह मान्य किया जाता है।

4) समूह सं. 1 एवं 3 पर जनसंख्या शिक्षा उपक्रम के प्रयोग उपचार करना।

5) सभी समूहों का प्रयोगोपचार के बाद परीक्षण (Post test) करना।

6) प्रयोग पश्चात परीक्षण के परिणामों का तुलनात्मक विश्लेषण करना।

घटकात्मक अभिकल्प में प्राप्त प्रदत्तों (data) का स्वरूप संख्यात्मक (Numerical / statistical) होता है। इसलिए उसका विश्लेषण करने के लिए उच्च कोटि के सांख्यिकीय सूत्रों का उपयोग करना पडता है। जिसम मध्यमान (Mean), मध्यांक (Median), प्रमाणित विचलन (Standrd Devation), के अलावा ANOVA , Test,. Chi square, Multiple Regression आदि का समावेश होता है। संख्याशास्त्र के इन सूत्रों द्वारा विश्लेषण करने से यह शोध अभिकल्प एक अत्यंत विश्वसनीय एवं प्रभावशाली होता है। इस अभिकल्प मे प्रयोगकर्ता अथवा शोध कर्ता को दीर्घानुभव होना आवश्यक होता है। इस प्रयोग में अनेक समूह होने के कारण प्रतिदर्श की संख्या बढ जाती है। जितने समूह और स्वतंत्र चर अधिक होंगे उतनी ही जटिलता अधिक होती है। इसम भरपूर प्रयास, कडी मेहनत,

सतर्कता एवं दक्षता बरतनी अनिवार्य है। शोधकर्ता को अनुसंधान का पर्याप्त अनुभव हो आत्मविश्वास हो तभी इस अभिकल्प का उपयोग करना चाहिए। उपर्युक्त प्रायोगिक शोध अभिकल्प के अलावा और भी भिन्न–भिन्न प्रकार के अभिकल्प बताए जा सकते है। परंतु शोधकर्ता को जिन अभिकल्पों का ज्ञान होना अत्यावश्यक है वे यहाँ पर्याप्त है।

उपर्युक्त सभी प्रायोगिक अथवा अर्ध प्रायोगिक अभिकल्प; के विभिन्न प्रकारों के अलावा प्रायोगिक अभिकल्प के और भी कुछ प्रकार बताये जाते है। प्रायोगिक अथवा अर्ध प्रायोगिक अभिकल्प; के और कुछ प्रकार के उदाहरण निम्नांकित है।

- अप्रयोगात्मक शोध अभिकल्प (Non-Experimental research design)
- लॅटिन स्क्वेअर अभिकल्प (Latin Square research design)
- सहसंबंधात्मक शोध अभिकल्प (Correlational research design)

(2) अर्ध प्रायोगिक पद्धति (quasi experimental method) :

सामाजिक विज्ञान में कई समस्यायें ऐसी होती है; जिसका शोधकार्य प्रायोगिक पद्धति से नही बल्कि प्रायः प्रायोगिक पद्धति से ही काम चलाना पडता है। कई बार किसी प्रयोग में बाह्य चरों को नियंत्रित करना असंभव होता है। ऐसी स्थिति में जैसी भी परिस्थिति उपलब्ध हो प्रयोग करना पडता है तब उसे विशुद्ध प्रायोगिक पद्धति नही बल्कि प्रायः प्रायोगिक पद्धति कहते है। अतः प्रायः प्रायोगिक शोध पद्धति की परिभाषा इस तरह कर सकते है कि, 'बाह्य प्रभावकारी चरों को नियंत्रित न करते हुए जैसी परिस्थिति उपलब्ध हो; उसमें जब प्रयोग किया जाता है; तब उसे प्रायः प्रायोगिक पद्धति कहते है'। इस तरह का शोधकार्य जब अनुसंधान कर्ता को पर्याप्त अनुभव न हो तब कृति युक्त शोध (action research) अधिकांश मात्रा में किया जा सकता है। जब दोनों समूह का प्रयोग पूर्व परीक्षण किया गया हो। पूर्व परीक्षण के परिणामों की तुलना की गयी। परंतु उसके आधार पर प्रतिदर्श का चयन न करते हुए यादृच्छिक (random) पद्धति से किया जाता है। फिर भी उनमें समतुल्य होने की संभावना कम होती है; ऐसी स्थिति मे दोनों समूहों में थोडा बहुत अंतर रह जाता है तथा बाह्य चरों (external variables) को नियंत्रित भी नही किया जा सकता। तब एक समूह को प्रायोगिक समूह मानते हुए उन पर विकसित किया गया, प्रचार कार्यक्रम का प्रयोगोपचार किया गया तब इस अभिकल्प का उपयोग

किया जाना चाहिए। इसके निष्कर्ष अधिक विश्वसनीय नही होते प्रायः प्रायोगिक शोध अभिकल्प के कुछ प्रकार निम्नलिखित है।

2.1 अयादृच्छिक दो समूह प्रयोग पूर्व एवं पश्चात परीक्षण अभिकल्प :

(Non-Randomized Double Group Pre & Post Test Research Design)

इस अभिकल्प में दोनों समूहों के प्रतिदर्श यादृच्छिक पद्धति से चयन किए जाते है। परंतु वे दोनों समूहों में समतुल्य होने की संभावना कम होती है; तब इस अभिकल्प का उपयोग किया जाना चाहिए। इसके निष्कर्ष अधिक विश्वसनीय नही होते. इसलिए इसे विशुद्ध प्रायोगिक अभिकल्प न कहते हुए प्रायः प्रायोगिक अभिकल्प कहा जाता है। उदाहरण के लिए चुनाव कार्यक्रम घोषित होने वाला है अतः किसी राजकीय पार्टी ने चुनाव प्रचार के लिए विज्ञापन प्रचार कार्यक्रम विकसित किया, शोधकर्ता जानना चाहता है कि, विकसित किए गए इस नये कार्यक्रम का मतदाताओं पर क्या प्रभाव पड़ेगा? शोधकर्ता ने दो भिन्न–भिन्न प्रभाग से दो समूह का अयादृच्छिक पद्धति से चयन किया। दोनों समूह समान होने की अपेक्षा नही तथा अन्य पार्टियों के कार्यक्रम या विज्ञापन से उन्हे वंचित नही किया जा सकता। अर्थात बाह्य चरों (external variables) को नियंत्रित नही किया जा सकता। ऐसी स्थिति मे दोनों समूह की पूर्व परीक्षा ली गयी। परंतु उसके आधार पर प्रतिदर्श का चयन नही किया। पूर्व परीक्षण के परिणामों की तुलना की गयी। दोनों मे थोड़ा बहुत अंतर पाया गया। एक समूह को प्रायोगिक समूह मानते हुए उन पर विकसित किया गया प्रचार कार्यक्रम का प्रयोगोपचार किया गया। अंत मे फिर उनका प्रयोग पश्चात परीक्षण लिया गया। प्राप्त परिणामों का तुलनात्मक विश्लेषण किया गया।

2.2 परिवर्तित समूह अभिकल्प (Transformed Group Design) :

इस अभिकल्प को अनेक भिन्न–भिन्न नामों से जाना जाता है। उदाहरण के लिए विरुद्ध संतुलित अभिकल्प (counter balence design), अंतरपरिवर्तनीय समूह अभिकल्प (Inter changeable Group design) विरुद्ध विभागीय वैकल्पिक/अभिकल्प आदि जब यादृच्दिक प्रतिदर्श समूह का चयन करना संभव हो परंतु बाह्य प्रभावकारी चरों को नियंत्रित करना संभव न हो तब इस अभिकल्प का उपयोग करना चाहिए। इसमें दो समूह होते है। प्रतिदर्श का चयन यादृच्छिक पद्धति से किया जाता है। इसमें दोनों समूह प्रायोगिक समूह होते है। पंरतु प्रयोग के उपचार वैकल्पिक रूप से परिवर्तित किए जाते है। इस अभिकल्प को निम्नलिखित आकृति द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है।

समूह	प्रयोग (1)	परीक्षण	प्रयोग (2)	परीक्षण (2)
G1	X1	M1	_	M3
G2	-	M2	X1	M4

आ.क्र. 11 : परिवर्तित समूह शोध अभिकल्प

उपर्युक्त अभिकल्प में प्रथम एक समूह पर (G1) प्रयोगोपचार किया जाता है तथा दूसरे समूह (G2) पर कोई उपचार नही किया जाता. प्रथम प्रयोगोपचार के बाद दोनों समूह की एक कसौटी देकर परीक्षण किया जाता है। उससे दो मध्यमान (Mean) प्राप्त होते है जिसे M1, M2 कहते है। प्रयोग के दूसरे चरण उसी प्रयोग का उपचार किया जाता है परंतु यह उपचार दूसरे समूह (G2) पर किया जाता है; तथा पहिले समूह (G1) पर कोई उपचार नही किया जाता. बाद में फिर उन दोनों समूहों को वही कसौटी देकर परीक्षण किया जाता है उसमें प्राप्त मध्यमानों की (M3) तथा (M4) कहते है। अंत में सभी मध्यमानों की तुलना कर प्रयोगोपचार की परिणामकारकता का अध्ययन किया जाता है। इस अभिकल्प दोनों समूह की प्रतिदर्श (Sample) संख्या समान होती है। दोनों प्रयोगोपचार समान होते है। इस प्रकार यह अभिकल्प द्वारा अनुसंधान कार्य पूर्ण होता है।

इकाई 4 जनसंख्या, प्रतिदर्श, शोध प्रस्ताव एवं रूपरेखा

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य
4.1 प्रस्तावना
4.2 जनसंख्या का अर्थ एवं प्रकार
4.3 प्रतिदर्श का अर्थ एवं स्वरुप
4.4 प्रतिदर्शन विधि के प्रकार
4.5 शोध रूपरेखा का अर्थ एवं स्वरूप
4.6 शोध रूपरेखा का वर्गीकरण/प्रकार
4.7 सारांश
4.8 बोध प्रश्न
4.9 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

4.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप :

- ।
- ।
- ।

4.1 प्रस्तावना

जनसंख्या का अर्थ एवं प्रकार

अनुसन्धान कार्य मे उद्देश्यों के अनुरूप प्रदत्त सामग्री संकलीत करने हेतु जिस समग्र जनसंख्या को निर्धारीत किया जाता है; उस संबंधित जनसंख्या को ही जनसंख्या कहते है। परंतु उसमे न केवल व्यक्ति होता है; बल्कि उसमें लोगों का समूह, पशु, संस्था, आदि किसी भी प्रकार की इकाईयों की कुल संख्या को जनसंख्या कहते है। संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि; अनुसन्धान के अंतिम निष्कर्ष जिसे समग्रता में लागू कर सकते है; वही अनुसन्धान कार्य में जनसंख्या होती है। जिसमे से प्रदत्त सामग्री संकलीत करने लिए कुछ विशिष्ट अनुपात मे इकाईयों का विशिष्ट पद्धति से चयन किया

जाता है। परंतु कभी कभी कुल जनसंख्या कितनी है; यह ज्ञात नही होता। इससे जनसंख्या के दो प्रकार निर्धारित किए जाते है। जिसमें;

(1) परिमित अथवा ज्ञात जनसंख्या (finit / determined population) और

(2) अपरिमित या अनंत जनसंख्या (infinit / undetermined population)

अनुसंधान कार्य में इन दो प्रकार की जनसंख्या का समावेश होता है। जनसंख्या का स्वरूप एवं प्रकार निर्धारित हो और उसकी कूल संख्या ज्ञात हो तो ऐसी जनसंख्या को परिमित अथवा ज्ञात जनसंख्या (finit / determined population) कहते हैं तथा जनसंख्या मे अंतर्भूत इकाईयों की कूल संख्या ज्ञात हो तब उसे अपरिमित, अनंत अथवा अनिर्धारित जनसंख्या (infinit / undetermined population) कहते हैं। जनसंख्या मे अंतर्भूत इकाईयों की कुल संख्या ज्ञात हो या ना हो; जनसंख्या का स्वरूप एवं प्रकार निर्धारित करना अत्यंत आवश्यक होता है। बिना उसके प्रतिदर्श का चयन नही कर सकते और प्रतिदर्श की कुल संख्या ज्ञात न हो तो प्रतिदर्श का चयन यादृच्छिक पद्धति (Random Sampling Method) से नही कर सकते। इस लिए प्रतिदर्श का चयन करने हेतु जनसंख्या का स्वरूप एवं प्रकार का निर्धारण करना जितना आवश्यक है; उतना ही यादृच्छिक पद्धति से प्रतिदर्श का चयन करने के लिए उसकी कुल संख्या ज्ञात होना आवश्यक है। इस तरह जनसंख्या का अर्थ इन शब्दों में भी बताया जा सकता है कि; 'हमारे अनुसंधान के निष्कर्ष जिस घटकों को लागू करने वाले हैं; उनकी कूल संख्या; जिसे हम 'Targate population' भी कह सकते है; वही अनुसंधान की जनसंख्या होती है; जिसमे से हम प्रदत्त सामग्री संकलित करने के लिए कुछ इकाईयों का चयन करते हैं।'

अनुसंधान अध्ययन में शोधकर्ता को प्रतिदर्श का चयन करने से पहले जनसंख्या को स्वरूप और प्रकार का निर्धारित करना पडता है। तत्पश्चात प्रतिदर्श का चयन कर सकता है। यह ध्यातव्य है कि जनसंख्या का स्वरूप एवं प्रकार निर्धारित नहीं कर सके तो प्रतिदर्श का चयन भी नही कर सकते। जनसंख्या की कूल संख्या ज्ञात हो तो यादृच्छिक पद्धति से प्रतिदर्श का चयन (Random Sampling Method) भी नही कर सकते। प्रतिदर्श का चयन करने हेतु जनसंख्या को स्वरूप एवं प्रकार का निर्धारण करना तथा उसकी कूल संख्या ज्ञात होना अत्यंत आवश्यक होता है।

प्रतिदर्श का अर्थ एवं स्वरूप

प्रतिदर्श को न्यादर्श (Sample) और प्रतिदर्शन को न्यादर्शन (Sampling) कहते है। प्रतिदर्शन या न्यादर्शन यह प्रतिदर्श चयन की प्रक्रिया अथवा पद्धति होती है। अनुसंधानकर्ता के पास समय व साधन का अभाव होने के कारण संपूर्ण जनसंख्या से प्रदत्त सामग्री का संकलन नही किया जा सकता। इसिलिए समग्र जनसंख्या से कुछ अंश का चयन करना अनिवार्य होता है। जिसमें समग्र जनसंख्या की संपूर्ण विशेषतायें होती हैं। समग्र जनसंख्या से चुने गए कुछ अंश को ही प्रतिदर्श (sample) कहते हैं। अर्थात शोध अध्ययन हेतू संपूर्ण जनसंख्या से लिए गए उस अंश को ही प्रतिदर्श (sample) कहते हैं। समग्र जनसंख्या से जिस प्रतिदर्श का चयन किया जाता है वह समग्र जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करता हैं। प्राचलिक (paramatric) तथा अप्राचलिक (non-paramatric) सांख्यिकी का प्रयोग समग्र जनसंख्या के आधार पर करने से प्राप्त निष्कर्ष अधिक विश्वसनीय होते हैं। अधिकांश अनुसन्धान कार्य में शोध उद्देश्य की पुर्ति के लिए अनुरूप प्रदत्त सामग्री का संकलन करने की आवश्यकता हाती है। उसके लिए पर्याप्त एवं प्रतिनिधीक प्रतिदर्श (sample) का चयन करना अनिवार्य होता है।

अनुसन्धान कार्य मे समग्र जनसंख्या का एक पर्याप्त अंश प्रतिनिधीक रूप में चुनकर उनसे प्रदत्त सामग्री का संकलन किया जाता है। प्रतिदर्श के आधार पर ही समग्र का परीक्षण किया जाता है। अनुसन्धान प्रक्रिया में प्रतिदर्श चयन के सम्बध में ऐसी मान्यता है कि; समग्र जनसंख्या के कुछ अंश से प्रदत्त संकलन करने से ही समग्र जनसंख्या का अध्ययन हो जाता है। समग्र जनसंख्या का कुछ अंश या भाग उस जनसंख्या का जब प्रतिनिधित्व करता है; तब शोध अध्ययन के निष्कर्ष की वैधता एवं विश्वसनियता बढ़ जाती है। इसमे प्रतिदर्श की एक एक इकाई का परीक्षण किया जाता है।

'शोध अध्ययन उद्देश्य पुर्ति के लिए आवश्यक प्रदत्त सामग्री का संकलन करने हेतु समग्र जनसंख्या (population) से कुछ विशिष्ट अनुपात में जिन इकाइयों का चयन किया जाता है उनकी कूल इकाई संख्या को ही प्रतिदर्श (sample) कहते है। और यह चयन जिस पद्धति से किया जाता है; उस पद्धति को प्रतिदर्शन (sampling) कहते है'। प्रतिदर्श तथा प्रतिदर्शन पद्धति की कुछ परिभाषायें निम्न लिखित है।

- समग्र जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करनेवाले अंश के चयन विधि को "प्रतिदर्शन कहते है। (Sampling is taking from any portion of population or universe as representative of that population or universe)

- गुड तथा हॅट के मतानुसार, "प्रतिदर्श का मतलब एक समग्र समूह का छोटा प्रतिनिधि है।"

  ("A sample as the name implies is a smaller representative of a large whole." : Goode and Hat)

- गे के मतानुसार 'एक समग्र समूह से उस संगठन का प्रतिनिधित्व करनेवाले कुछ व्यक्ति का चयन करने की प्रक्रिया ही प्रतिदर्शन है।' ("Sampling is the process of selections of a number of individuals for a study in such a way that individuals represents the larger group from which they were selected."- Gay, 1997)

- यंग के मतानुसार "एक सम्पूर्ण समूह; जिसमें से प्रतिदर्श का चयन करना है; उसे समग्र जनसंख्या या प्रदाय कहते हैं और इस सम्रग्र जनसंख्या से अध्ययन हेतू ऐसा सूक्ष्म चित्र या परावर्ग जिसमें समग्र की सभी विशेषताएँ होती है उसे प्रतिदर्श चयन कहलाती है।

उपरोक्त परिभाषाओं का अभ्यास करने के पश्चात प्रतिदर्श की कुछ विशेषतायें या गुण बताये जा सकते हैं। प्रतिदर्श का चयन करने हेतु जो बातें ध्यान में रखना अनिवार्य है वह अनेक अभ्यास कों ने अपने मतानुसार बतायी है; जो निम्नलिखित हैं।

प्रतिदर्श की विशेषतायें

1) अनुसन्धानकर्ता को प्रदत्त संकलन में आसानी होती है।
2) अनुसन्धानकर्ता प्रतिदर्श चयन द्वारा सर्वेक्षण कम समय में पूर्ण कर लेता है।
3) इसमें प्रतिदर्श की संख्या कम होने के कारण अनुसंधानकर्ता को परीक्षणों के निष्कर्ष निकालने मे सुविधा होती है।
4) प्रदत्त संकलन में संगठन करने में सुविधा मिलती है।
5) अनुसन्धानकर्ता को निष्कर्ष का विवेचन करने में भरपूर सुविधा होती है।
6) प्रतिदर्श के चयन से अनुसन्धान कार्य करने में गतिशीलता आती है।
7) प्रतिदर्श द्वारा समग्र जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करने के कारण उससे प्राप्त निष्कर्ष समग्र जनसंख्या पर लागू किए जाते हैं।
8) प्रदत्त संकलन कंप्युटरीकृत द्वारा करने में आसानी होती है।

9) मानव शक्ति कम लगने के कारण अनुसन्धानकर्ता प्राप्त निष्कर्ष के विवेचन के लिए अधिक समय दे पाता है जिससे उसका अनुसन्धान कार्य अधिक विश्वसनीय एवं वैध हो जाता है।

10) एकत्रित आकडों का विश्लेषण तथा अर्थनिर्वचन में अधिक परेशानी नही होती है।

उपरोक्त मुद्दों को हम प्रतिदर्श के गुण भी कह सकते है। इसके साथ प्रतिदर्श के दोष भी पाये जाते है; जो निम्नलिखित है।

प्रतिदर्शन की सिमाएं

1) जहाँ समग्र जनसंख्या का अध्ययन करना आवश्यक होता है, वहाँ प्रतिदर्श का कोई उपयोग नही होता।

2) कभी कभी प्रतिदर्श चयन विधि में त्रुटी (Sampling Errors) हो सकती है; जिसका पूर्व कथन प्रतिदर्शन विधि से नही हो पाता है।

3) जनसंख्या समजातीय है तो ठीक है पर जनसंख्या विषमजातीय है, तो प्रतिदर्शन का चयन करना कठीन हो जाता है।

4) अनुसन्धानकर्ता को प्रतिदर्शन प्रविधियों का पर्याप्त ज्ञान होना अनिवार्य है। अगर उसे सम्पूर्ण ज्ञान न हो तो सही प्रतिनिधित्व की समस्या ह म शा बनी रहती है।

5) प्रतिदर्श का चयन करने से समय एवं पैसा खर्च कम हो जाता है; परंतु उससे अच्छे निष्कर्षो की सम्भावना भी कम हो जाती है।

5) अनुसन्धानकर्ता ने प्रतिदर्श चयन करते समय अगर सोच समझकर अथवा अनजाने मे पक्षपात करने की कोशीस कि; या अपने पूर्वग्रहों का उपयोग किया; तो निष्कर्ष प्राढ़ा नही हो सकेगा।

प्रतिदर्शन विधि के प्रकार (Types of Sampling)

प्रतिदर्श का चयन करने की अनेक विधियां बतायी जाती है। प्रतिदर्शन पद्धतियों को दो भागोमे वर्गीकृत किया जाता है। जो निम्नलिखित है।

(क) संभावित प्रतिदर्श चयन विधियां (Probability Sampling methods)

(ख) असंभावित प्रतिदर्श चयन विधियां (Non Probability Sampling methods)

(क) संभावित प्रतिदर्शन विधियां :

जिस प्रक्रिया में जनसंख्या की प्रत्येक इकाई को चुने जाने की समान संभावना होती है; उसे संभावित प्रतिदर्शन कहते हैं। उदाहरण के लिए कूल 40 छात्रों की एक कक्षा का प्रतिनिधित्व करनेके लिए किसी कार्यक्रम में पांच छात्रों को भेजना है। किसी भी प्रकार का पक्षपात रहित चयन करने से सबको चुने जाने का समान अवसर मिलेगा; इस हेतु से 40 छात्रों के नाम अथवा उन्हें दिये गए अनुक्रमांक की चिट्ठियां बनाकर एक डिब्बें में डालकर यदि आंखें बंद करके हुए उसमे से पांच चिट्ठियां निकाली जाय तो 40 छात्रों में से प्रत्येक छात्र की चुने जाने की संभावना या अवसर समान होता है। इसलिए ऐसी कोई भी विधि या प्रक्रिया हो तो उसे संभावित प्रतिदर्शन पद्धति कहते हैं। संभावित प्रतिदर्शन दो मान्यताओं पर आधारित है। पहली मान्यता के अनुसार, यदि प्रतिदर्शन छोटा तथा पुरी तरह याद्च्छीक या दैवीय (Ramdom) है, तो जनसंख्या से प्रत्येक इकाई को चुने जाने की संभावना समान रहती है। दूसरी मान्यता के अनुसार प्रतिदर्शन जितना बडा होगा, उतना ही वह समग्र का अधिक प्रतिनिधित्व करेगा और विश्वसनियता भी जादा होगी। सम्भावित प्रतिदर्शन पद्धति मे प्रमुख पाँच प्रकार की विधियां है; जो निम्नलिखित है।

(क.1) यादृच्छिक प्रतिदर्शन पद्धति (Ramdom Sampling)

(क.2) वर्गीकृत प्रतिदर्शन पद्धति (Stratified Sampling)

(क.3) बहुस्तरीय प्रतिदर्शन पद्धति (Multileveled Sampling)

(क.4) व्यवस्थित प्रतिदर्शन पद्धति (Systematic Sampling)

(क.5) गुच्छित प्रतिदर्शन पद्धति (Cluster Probability Sampling)

(क.6) गुणित/दोहरी प्रतिदर्शन विधि (Multiplying/Double Sampling)

(क.1) यादृच्छिक प्रतिदर्शन पद्धति (Ramdom Sampling Method) **:**

संभावित प्रतिदर्शन पद्धति मे यादृच्छिक एक महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया है। इस पद्धति को दैवीय प्रतिदर्शन पद्धति भी कहते हैं। इस प्रविधि में अनुसन्धानकर्ता को प्रत्येक इकाई को चनने का समान अवसर दिया जाता है। इस लिए यहाँ सभी इकाई को चुने जाने की समान सम्भावना रहती है। इसमे अनुसंधानकर्ता अपने व्यक्तिगत विचार, पूर्वाग्रह या शक्ति का उपयोग नही कर सकता। यह एक वैज्ञानिक विधि मानी जाती है। इस पद्धति द्वारा समग्र जनसख्यां से प्रतिदर्श का प्रतिनिधिक एवं यादृच्छिक चयन किया जाता है। समग्र जनसंख्या के घटक जब एक समान रहते है; तब उस समय प्रतिदर्श का चयन दैवीय अथवा यादृच्छिक हो जाता है। प्रतिदर्श का चयन यादृच्छिक या दैवीय होने के लिए चयन विधी में विज्ञानिक प्रक्रिया का उपयोग किया जाता है। प्रतिदर्श में पर्याप्त मात्रा में प्रतिनिधिकता लाने हेतु अनुसन्धानकर्ता पक्षपात रहित परिश्रम करता है। समग्र जनसंख्या से यादृच्छिक या दैवीय प्रतिदर्श का चयन किया जाता है; तब पक्षपात होने की सम्भावना नही रहती; या उनका चयन हमेशा प्रतिनिधिक या यादृच्छिक रहेगा; ऐसा नही कहा जा सकता इसलिए इस पद्धति की सविस्तार प्रक्रिया समझना आवश्यक है। अतः इसकी उपविधियां निम्नलिखित से दी जा रही है।

(1) लॉटरी प्रतिदर्शन विधि (Lottery Sampling Meghod)

(2) कार्ड प्रतिदर्शन विधि (Card Sampling Meghod)

(3) रंडम नंबर प्रतिदर्शन विधि (Random Number Sampling Meghod)

(4) ग्रीड प्रतिदर्शन विधि (Grid Sampling Meghod)

(5) कोटा प्रतिदर्शन विधि (Quota Sampling Meghod)

(6) नियमित अंतराल प्रतिदर्शन विधि (Regular Interval Sampling Meghod)

(7) अनियमित अंतराल प्रतिदर्शन विधि (Irregular Interval Sampling Meghod)

(1) लॉटरी प्रतिदर्शन विधि (Lottery Sampling Method) :

इस विधि में पासे डालना, चित–पट करना, पत्ते पिसना, कागज की चिट्ठियाँ तैयार करना, इत्यादि प्रक्रिया का उपयोग किया जाता है। यह दैवीय प्रतिदर्शन की सबसे अधिक सरल विधी है। इस विधि को अनुसन्धानकर्ता सरलता से उपयोग कर सकता है। प्रत्येक इकाई को व्यक्ति का क्रमवार नाम या अनुक्रमांक कागज के टुकडों पर लिखे जाते है। इन कागज के टुकडों को जिससे सभी टुकडें पूर्ण रूप में मिल जाय और उनका क्रम विमद जाय समान तरिके से मोड़ कर बंद किए जाते हैं। सभी कागज के टुकडों को एक

खाली डिब्बे में डालकर हिलाया जाता है। उसके बाद ऊन सभी कागज की चिट्ठियों को किसी अन्य व्यक्ति से एक एक करके निकालवाया जाता है। निकाली गई उन कागज की बंद चिठ्ठीयों को खोलकर देखा जाता है। उसमे जो भी नाम या नंबर प्राप्त हुए उन सबको प्रतिदर्श की सूची मे शामिल किया जाता है। यही अनुसन्धान का प्रतिदर्श होता है।

(2) कार्ड प्रतिदर्शन विधि (Card Sampling Meghod) :

लॉटरी प्रतिदर्शन विधि में अनुसंधानकर्ता अन्य किसी अबोध व्यक्ति की आंखों को बंद करता है; मगर कार्ड विधि में अनुसंधानकर्ता को किसी अबोध व्यक्ति की आवश्यकता कम पडती है; या आंखे बंद करने की भी कोई आवश्यकता नही पडती है। यह एक लॉटरी विधि का सुधारीत रूप है। कार्ड पर इकाई के नाम अथवा नंबर लिखे जाते हैं। सभी कार्ड को एक ड्रम में डाला जाता है। उसे पुनः पुनः घुमाकर आपस में पूर्णरूप से मिला दिया जाता है। प्रतिदर्श की जितनी संख्या निर्धारित की गयी हो; उतने कार्ड ड्रम से निकाले जाते है। ड्रम को घुमा घुमाकर निर्धारित संख्या में कार्ड निकाला जाता है। इस तरह जितने प्रतिदर्श का चयन करना हो; उतने बार पुनः पुनः ड्रम को घुमाया जाता है।

(3) रैण्डम नंबर प्रतिदर्शन विधि (Random Number Sampling Method) :

यह एक सर्वमान्य, सरल तथा व्यवहारिक विधि है। इस विधि से कम से कम समय में प्रतिदर्श का चयन किया जा सकता है। इसमे यादृच्छिक अंको वाली एक प्रकार की प्रदीर्घ सारणी होती है। इसलिए इस रैंडम अंक सूची को रैंडम अंक सारणी भी कहते हैं। इसमें अंतर्भूत अंको की रचना यादृच्छिक होती है जिसका कोई विशिष्ट क्रम नही होता। इस प्रकार की अनेक तालिकायें बनायी जाती हैं; जिसमें फिशर एवं येट्स की सारणी, रैन्ड कॉर्पोरेशन की सारणी, स्नेडेकोर एवं कॉक्रेन की सारणी, प्रोफेसर टिप्पेट की सारणी आदि का उल्लेख किया जा सकता है।

प्रोफेसर टिप्पेट ने 1927 में रैण्डम नंबर की विधी का विकास किया है। इसिलिए इस विधि को टिप्पेट विधि भी कहते हैं। उन्होने कुल 10400 संख्याओं की एक सूची तैयार की। यह सूची यादृच्छिक पद्धति द्वारा प्रतिदर्श संख्या के चयन हेतु बनायी गयी। बिना किसी विशिष्ट अनुक्रम से लिखी गयी इन प्रदीर्घ संख्या सारणी के किसी भी पृष्ठ से और किसी भी संख्या से प्रारम्भ करते हुए आगे की संख्या चुनता है। प्रतिदर्श के जितने अंक

आवश्यक हो या निर्धारित किए गए हों उतने नंबर पुरे होने तक अगले अंको का चयन किया जाता है। टिप्पेट की इस अंक विधि के अनुसार पहले आठ संख्याएं अग्रलिखित है।

10480, 20369, 24150, 242167, 37570, 77421, 99562, 09630

एक अनुसन्धानकर्ता अपने शोध–कार्य के लिए 4000 की समग्र जनसंख्या से 400 का प्रतिदर्श निर्धारित करना चाहता है। मान लिजिये की; अनुसन्धानकर्ता उपरोक्त आठ संख्याओं में से पहले नंबर से प्रारंम्भ करेगा। वह पहला नंबर 10480 है; जिससे केवल अंतिम दो अंको से शुरूवात करेगा; तो पहला अंक 80 होगा। उसके बाद दूसरा अंक 69, तिसरा 50, चौथा 67, उसके बाद 70, 21, 62, 30.... होगा। इस प्रकार प्रतिदर्श के कुल 400 अंक पुरे होने तक अंको का चयन किया जायेगा। इस प्रकार जब कूल 400 अंकों का चयन होते ही यह प्रक्रिया पूर्ण होगी। यही 400 अंको की इकाईयों को प्रतिदर्श मानते हुए प्रतिदर्श चयन की प्रक्रिया पूर्ण होती है।

(4) ग्रिड प्रतिदर्शन विधि (Grid Sampling Meghod) :

ग्रिड विधि का क्षेत्रीय प्रतिदर्शन म बहुत उपयोग होता है। विशाल भौगोलिक क्षेत्र से कुछ निश्चित भौगोलिक क्षेत्र का चयन करने के लिए ग्रिड विधि का उपयोग किया जाता है। सबसे पहले एक विशाल क्षेत्र का नक्शा लिया जाता है। उसके बाद जिस प्रकार के प्रतिदर्श का चयन करना होता है; उस इकाई को निश्चित किया जाता है। इसमे एक प्लेट होती है। उसे सेल्युलाईड ग्रीड प्लेट कहते हैं। उस सेल्युलाईड ग्रीड प्लेट के नक्शा पर रखा जाता है। उस पर जितनी इकाई का चयन करना होता हैं; उतने नंबर लिखे रहते हैं। नक्शा के निर्धारित भाग पर नंबर देकर क्षेत्रीय वर्ग बनाये जाते है। उस नंबर पर जो भी चिन्ह रहते है; उसी के आधार पर उस विशिष्ट क्षेत्र के प्रतिदर्श का चयन किया जाता है। इस प्रकार ग्रिड पद्धति से प्रतिदर्श चयन प्रक्रिया पूर्ण होती है।

(5) कोटा प्रतिदर्शन विधि (Quota Sampling Meghod) :

इस विधि में समग्र प्रतिदर्श को विभिन्न विभागों या वर्गो में विभाजित किया जाता है। प्रत्येक विभाग से प्रतिदर्श चयन करने की इकाई संख्या निर्धारित की जाती है फिर समग्र के प्रत्येक विभाग से निर्धारित संख्या की मात्रा में यादृच्छिक पद्धति द्वारा प्रतिदर्श के रूप में चयन किया जाता है। इस प्रक्रिया सें चयन किए गए प्रतिदर्श का प्रत्येक विभाग का एक स्वतंत्र कोटा होता है। सब मिलकर इकाई की जितनी कुल संख्या होगी

उसको प्रतिदर्श कहा जाता है। जैसे लिंग, उम्र, गुणवत्ता, शहरी, ग्रामीण तथा आदिवासी, इत्यादी वर्ग से प्रतिदर्श का चयन करना हो तो; प्रत्येक वर्ग की जनसंख्या निर्धारित कर उसमे से किस वर्ग से प्रतिदर्श का कितना कोटा लेना है; यह अनुसन्धानकर्ता निर्धारित करता है। परंतु इस प्रक्रिया मे अनुसन्धानकर्ता से पक्षपात होने की संभावना हो सकती है। इस लिए प्रतिदर्श का कोटा उस विभाग की समग्र जनसंख्या के अनुपात मे निर्धारित करने से यह पक्षपात टाला जा सकता है परंतु यह निर्णय अनुसंधानकर्ता को स्वयं लेना पडता है।

इस विधि में प्रतिदर्श का चयन करते समय आयु, लिंग, आर्थिक परिस्थिति, गुणवत्ता, श्रेणी, भौगोलिक स्थिति, इत्यादि द्वारा समग्र जनसंख्या के वर्ग निश्चित किए जाते हैं। जनसंख्या के एक वर्ग मे इकाईयों का जो अनुपात होता है; उसके अनुपात में उस वर्ग की इकाईयों का चयन किया जाता है। इस तरह समग्र जनसंख्या के अलग अलग वर्ग बनाये जाते हैं। उसके बाद प्रत्येक वर्ग की इकाईयों की जितनी संख्या होती है; उतनी संख्या को उस जनसंख्या के वर्ग का कोटा या हिस्सा कहते हैं।

उदाहरणार्थ– व्यवसायिक शिक्षण प्रशिक्षण महाविद्यालयों से अध्ययन करने के लिए पुरूष अध्यापक एवं स्त्री अध्यापकों की जानकारी प्राप्त करने के लिए समग्र जनसंख्या से विविध वर्ग तैयार किए जाते हैं। व्यवसायिक शिक्षण प्रशिक्षण महाविद्यालयों मे पढने वाले स्त्री एवं पुरूष का अनुपात 40 : 60 है; तो न्यादर्श/प्रतिदर्श का अनुपात 2 : 3 निर्धारित किया जायेगा।

कोटा प्रतिदर्शन का वर्णन तो असंभावित न्यादर्शन विधियों मे भी किया जाता है। कुछ विद्वानों ने इस विधि को संभावित प्रतिदर्शन का प्रकार माना है तो कुछ विद्वानों ने इस विधि को असंभावित प्रतिदर्शन का प्रकार माना है। इतना ही नही कुछ विद्वानों ने इस विधि को संभावित और असंभावित दोनो प्रकार माना है। परंतु वास्तव में इस पद्धति में वर्ग निर्धारित करते समय असंभवित प्रतिदर्शन विधि का एवं वर्ग निर्धारित करने के बाद उसकी इकाईयों का चयन करने के लिए संभवित प्रतिदर्शन विधि का उपयोग करना चाहिए इस दृष्टि से यह विधि दोनों प्रकार की मानी जा सकती है। यही नही बल्कि; अन्य विधियां भी जैसे– ग्रीड, कोटा, स्तरीय, गुच्छ एवं व्यवस्थाबद्ध प्रतिदर्शन विधियां भी दोनो संभावित और असंभावित प्रकार की मानी जा सकती है। क्योंकि इन सभी विधीयों में समानता ही दिखायी पडती है।

(6) नियमित अंतराल प्रतिदर्शन विधि (Regular Interval Sampling Meghod) :

नियमित अंतराल/वर्गांतर विधि से समय एवं स्थान पर आधारित इकाई का निर्धारण किया जाता है। समग्र इकाई म से क्रमवार सब इकाई की एक सूची तैयार की जाती है और इसी सूची में से जितने इकाई अनुसन्धान में आवश्यक हैं उसी का चयन किया जाता है। एक नियमित वर्गांतर निर्धारित करके उसे नियमित रूप से इकाई का वर्गांतर करना पडता है। यहाँ किसी भी संख्या से प्रारंभ कर सकते हैं। जैसे–अनुसन्धानकर्ता द्वारा निर्धारित समग्र जनसंख्या 800 है और उस समग्र इकाईयों से 200 इकाईयों का प्रतिदर्श के रूप में चयन करना है तो चार का (800 ÷ 200 = 4) वर्गांतर होगा। इस तरह चार चार के नियमित अंतराल से जो अंक मिलते है; वही अंक प्रतिदर्श के रूपमे स्वीकार किए जाते हैं। माना कि पहला अंक 30 का चयन किया गया तो नियमित अंतराल से 34, 38, 42, 46, 50,..... इस क्रम से 200 इकाई पूर्ण होने तक इकाईयों का चयन किया जाएगा। समग्र पुरे 800 अंक समाप्त होने के बाद फिर प्रतिदर्श के 200 अंक पूरे करने के लिए 4, 8, 12, 16.... अंक लेकर कूल 200 अंको की प्रतिदर्श संख्या पूर्ण की जाती है। और निर्धारित ईकाईयों का चयन किया जाता है इस प्रकार नियमित वर्गांतर से किए गए प्रक्रिया को नियमित अंतराल प्रतिदर्शन विधि कहते हैं।

(7) अनियमित अंतराल प्रतिदर्शन विधि (Regular Interval Sampling Meghod) :

नियमित अंतराल विधि मे जिस प्रकार एक विशिष्ट वर्गांतर होता है; वैसा निश्चित वर्गांतर अनियमित अंतराल विधि में नही होता। यहा कोई वर्गांतर निर्धारित नही किया जाता। किसी भी संख्या से प्रारंभ करके अनियमित वर्गांतर से नंबर चुने जाते है। प्रतिदर्श के रूपमे जितने नंबर निर्धारित किए जाते है उतने नंबर का चयन इस अनियमित अंतराल से किया जाता है। इस तरह अनियमित अंतराल से चुने गए अंक प्रतिदर्श के रूप में स्वीकार किए जाते है। माना कि पहला अंक 30 चयन किया तो अगले अंक नियमित अंरालसे 38, 47, 54, 68, 79,..... इस क्रम से प्रतिदर्श की निर्धारित इकाई पूर्ण होने तक इकाईयों का चयन किया जाएगा। इस प्रक्रिया को अनियमित वर्गांतर या अंतराल प्रतिदर्शन विधि कहते हैं।

संभावित/यादृच्छिक प्रतिदर्शन विधि के लाभ :

(1) यादृच्छिक प्रतिदर्शन पद्धति यह प्रतिदर्श/न्यादर्श चयन की वैज्ञानिक विधि है।

(2) इस प्रतिदर्शन पद्धति सें चयन किया गया प्रतिदर्श/न्यादर्श समग्र जनसंख्या का पूर्ण रूपसे प्रतिनिधित्व करता है।

(3) इस प्रतिदर्शन पद्धति में अनुसंधानकर्ता को किसी पूर्वज्ञान की आवश्यकता नही होती है।

(4) न्यादर्शो द्वारा किया गया मापन से निष्कर्षों तक आसानी से पहुच सकते है।

(5) इस प्रतिदर्शन पद्धति सें प्रतिदर्श/न्यादर्श चयन में मानवीय पक्षपात नही होता है।

यादृच्छिक प्रतिदर्शन विधि की त्रृटियाँ :

1) यादृच्छिक प्रतिदर्शन पद्धति में दैव के आधार पर ही प्रतिदर्श का चयन संभव होता है; इसिलिए समग्र की सूची बनाना आवश्यक होता है। पर कभी कभी हर एक जनसंख्या की सूची नही बन सकती। अपरिमितीय जनसंख्या में यह विधि उपयुक्त नही है।

2) प्रतिदर्श की इकाईयां केवल प्रतिदर्श चयन करने तक की सिमित रहती हैं। उस पर अलग से कोई अनुसन्धान नही कर सकते।

3) विशाल क्षेत्र में तथा जनसंख्या में यादृच्छिक प्रतिदर्शन पद्धति से प्रतिदर्शन का चयन करना असंभव या बहुत कठीण हो जाता है।

4) विषम जाति की जनसंख्या मे इस पद्धति का उपयोग नहीं कर सकते।

5) असिमित समष्टी में भी इस पद्धति का उपयोग नही कर सकते हैं।

(क.2) वर्गीकृत प्रतिदर्शन पद्धति (Stratified Probability Sampling) :

सम्भावित प्रतिदर्शन में यादृच्छिक प्रतिदर्शन पद्धति का यह दूसरा महत्पूर्ण प्रकार है। वर्गीकृत सम्भावित प्रतिदर्शन पद्धति को वर्गीकृत संम्भावित प्रतिदर्शन पद्धति (Classified Probability Sampling Method) भी कह सकते है। इसमे समग्र जनसंख्या को समुचित वर्ग में विभाजित किया जाता है। उदाहरण के लिए गरीब वर्ग, धनवान/श्रीमंत वर्ग, मध्यम वर्ग इन तीनों विभागों में जनसंख्या को वर्गीकृत या विभाजन किया जाता है। यह वर्गीकरण एक प्रकार का आर्थिक स्तर का विभाजन होता है। शैक्षिक क्षेत्र के स्तरों का वर्गीकरण भी इसी तरह किया जा सकता है। उदाहरण के लिए प्राथमिक, माध्यमिक, उच्च शिक्षा के स्तर का भी इसी प्रकार चयन किया जा सकता है। इन विभिन्न आर्थिक या शैक्षिक स्तर से इस प्रतिदर्शन पद्धति से आवश्यक इकाईयों का चयन किया जाता है; तब उसे वर्गीकृत प्रतिदर्शन पद्धति कहते हैं। इसमे जनसंख्या के प्रत्येक वर्ग को यथोचित प्रतिनिधित्व दिया जा सकता है।

वर्गीकृत संभावित प्रतिदर्शन की तीन पद्धतियां हैं; जो निम्नानुसार हैं।

(1) प्रमाणबद्ध वर्गीकृत संभावित प्रतिदर्शन पद्धति

(2) अप्रमाणबद्ध वर्गीकृत सम्भाविता प्रतिदर्शन पद्धति

(3) महत्तम विभाजित वर्गीकृत संभावित प्रतिदर्शन पद्धति

(1) प्रमाणबद्ध वर्गीकृत पद्धति :

प्रमाणबद्ध वर्गीकृत संभावित प्रतिदर्शन में प्रत्येक स्तर के वर्ग की जनसंख्या से उसके अनुपात में प्रतिदर्श की संख्या निर्धारित की जाती है। इकाईयों का चयन निर्धारित की गयी संख्या के अनुपात में किया जाता है; तथा जब प्रतिदर्श का चयन किया जाता है; तब भी उसी अनुपात मे उनका चयन किया जाता है। इस पद्धति को प्रमाणबद्ध वर्गीकृत संभावित प्रतिदर्शन पद्धति कहते हैं। इसे समग्र इकाईयों का एक छोटा रूप भी कहा जाता है। उदाहरण के लिए वर्तमान शालेय शिक्षा में कार्यरत अध्यापकों का मत अथवा व्यवसाय संतुष्टि के बारे में जानना है तो पूर्व प्राथमिक स्तर, प्राथमिक स्तर, माध्यमिक स्तर, उच्च माध्यमिक स्तर आदि स्तर के विभाग बनाकर उन प्रत्येक विभाग में कार्यरत शिक्षकों की जनसंख्या से विशिष्ट संख्या में प्रतिदर्श का चयन करना हो तो प्रथमतः उनका अनुपात निर्धारित किया जाता है और प्रत्येक स्तर से उनका चयन किया जाता है। उनका अनुपात का एक विशिष्ट प्रमाण माना जाता है।

(2) अप्रमाणबद्ध वर्गीकृत पद्धति :

यहां प्रत्येक इकाई को सम प्रमाण में प्रतिनिधित्व मिलता है। प्रमाणबद्ध वर्गीकृत प्रतिदर्शन में प्रत्येक स्तर से उनकी जनसंख्या के अनुपात मे प्रतिदर्श की संख्या निर्धारित की जाती है। इकाईयों के अनुपात में जब प्रतिदर्श का चयन किया जाता है; तब उस पद्धति को प्रमाणबद्ध वर्गीकृत संभावित प्रतिदर्शन पद्धति कहते हैं। परंतु किसी भी स्तर से उनकी जनसंख्या का अनुपात न मानते हुए सभी स्तरों से समान मात्रा में जब प्रतिदर्श का चयन किया जाता है; तब उसे अप्रमाणबद्ध वर्गीकृत प्रतिदर्शन विधि कहते हैं। निम्नलिखित तालिका से प्रमाण बद्ध एवं अप्रमाणबद्ध वर्गीकृत प्रक्रिया मे न्यादर्श संख्या का चयन कैसे हो सकता है; इसका स्पष्टीकरण हो सकेगा।

प्रमाणबद्ध/अप्रमाणबद्ध स्तरीय प्रतिदर्शन

स्तर	समग्र अनुपात	न्यादर्श संख्या जनसंख्या	प्रमाणबद्ध (प्रमाणबद्ध)	न्यादर्श संख्या अनुपात	अप्रमाणबद्ध (समान)
1) गरीब वर्ग	6000	300	5%	300	5.00%
2) मध्यम वर्ग	8000	400	5%	300	3.75%
3) अमीर वर्ग	4000	200	5%	300	7.50%
योग	18000	900	——	900	——

आ.क्र. 12 प्रमाणबद्ध/प्रमाणबद्ध स्तरीय प्रतिदर्शन

3) महत्तम विभाजित वर्गीकृत पद्धति :

जनसंख्या के विभिन्न प्रकार के अनुसार उसका वर्गीकरण किया जाता है। उदाहरण के लिए ग्रामीण–शहरी, स्त्री–पुरूष, शिक्षित, सुशिक्षित, अशिक्षित, आदि। समग्र जनसंख्या को इस तरह के विभिन्न वर्ग के आधारपर वर्गीकृत किया जाता है। अनुसंधान के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए किस वर्ग को अधिक महत्व देना है; इसका निर्धारण करते हुए प्रत्येक वर्ग से प्रतिदर्श इकाईयों की संख्या निर्धारित की जाती है तथा उसके अनुसार प्रत्येक वर्ग से प्रतिदर्श का चयन किया जाता है। समग्र जनसंख्या को विभिन्न वर्गो में रूपांतरित करने के बाद प्रत्येक वर्ग से निर्धारित विशिष्ट अनुपात में प्रतिदर्श के इकाईयों का चयन किया जाता है। जिस वर्ग की संख्या अधिक होती है; उस वर्ग की इकाई को अधिक महत्व दिया जाता है; इसलिए समग्र जनसंख्या के इकाईयों की संख्या कम जादा हो सकती है। इसके कारण इस पद्धति में सभी वर्गों का प्रतिदर्श समान नही होता है। प्रत्येक वर्ग की जनसंख्या अलग अलग हो सकती है तथा उनके प्रतिदर्श की संख्या भी अलग अलग हो सकती है। वर्गीकृत विभागों को कितना महत्व देना है; यह अनुसंधान कर्ता को स्वयं निर्धारित करना पडता है। जिस वर्ग के जनसंख्या को विशेष महत्व दिया जाता है; उसके प्रतिदर्श की संख्या अधिक होती है। अर्थात इसमें जनसंख्या के अनुपात में न्यादर्श संख्या नही होती; बल्कि उसके महत्व के अनुसार न्यादर्श का अनुपात या संख्या निर्धारित की जाती है। विभिन्न वर्गो में जनसंख्या को विभाजित करने के बाद विभाजित किए गए वर्ग की न्यादर्श संख्या सबसे अधिक होने के कारण इसे महत्तम विभाजित वर्गीकृत प्रतिदर्शन विधि कहते हैं।

स्तरीय संभावित प्रतिदर्शन पद्धति के गुण :

1) समग्र जनसंख्या से निर्धारित प्रतिदर्श का चयन करने की वर्गीकृत प्रतिदर्शन पद्धति यादृच्छिक या दैवी प्रतिदर्शन पद्धति का सबसे अच्छा प्रकार माना जाता है।
2) यहाँ विविध वर्ग से इकाईयों का चयन किया जाता है अतः सभी वर्ग की जनसंख्या का प्रतिदर्श में प्रतिनिधित्व रहता है।
3) इसमें भौगोलिक क्षेत्र के आधार पर भी वर्गों का विभाजन किया जाता है अतः सभी वर्ग की जनसंख्या का प्रतिदर्श में प्रतिनिधित्व रहता है।
4) इस पद्धति से समय तथा पैसों की बचत होती है।
5) इससे इकाईयों से संपर्क करने में कठिनाईयाँ नही होती है।
6) इस विधि में लचीलापण अधिक है इसलिए सरलता से प्रतिदर्श का चयन कर सकते है।
7) प्रत्येक वर्ग की इकाई से तथ्य संकलन करने में एक विशेष स्थान प्राप्त होता है।
8) समग्र जनसंख्या के सभी इकाई की तरफ विशेष ध्यान दिया जा सकता है।
9) समग्र जनसंख्या का अच्छा प्रतिनिधिक प्रतिदर्श चुना जाता है।

स्तरीय सम्भाविता प्रतिदर्शन पद्धति के दोष :

1) वर्ग का विभाजन योग्य दिशा में नही किया तो तथ्य संकलन प्रतिनिधिक रूप म नही रहने की संभावना होती है।
2) इस पद्धति से समान अनुपात में इकाईयों का चयन नही करने से प्राप्त होने वाले तथ्यों का यथोचित प्रतिनिधित्व होने का दावा नही किया जा सकता।
3) समान अनुपात में इकाईयों का चयन करने की सुविधा इस पद्धति मे नही है।
4) कभी कभी इकाईयों का चयन अप्रमाणबद्ध तत्व के आधार पर किए जाने से पक्षपात होने की सम्भावना होती है।
5) यहा वर्गीकृत वर्गो को दिये जाने वाले महत्व मे अनुसंधानकर्ता के हाथों पक्षपात होने की संभावना होती है।
6) कभी कभी इकाईयों में मिश्रित गुण होते हैं इस कारण उसे विभाजित करना कठिन होता है।

7) विविध वर्ग के आकार में कम–अधिक अंतर होने के कारण इकाईयों का चयन करते समय सप्रमाणता नही आती है।

8) कभी कभी वर्ग की इकाईयों मे विषमतापन होने से उनका सामान्यीकरण करना बहुत कठीन हो जाता है।

(क.3) बहु स्तरीय प्रतिदर्शन विधि (Multiple Probability Sampling) :

बहुस्तरीय संभावित प्रतिदर्शन पद्धति में अनुसंधानकर्ता को किसी विशिष्ट भौगोलिक क्षेत्र के जनसंख्या के छोटे छोटे विभाग करने पडते है। उन छोटे–छोटे विभागों का आकार, विस्तार, एवं अध्ययन की व्यापकता निर्धारित करनी पडती है। उन सब इकाईयों को समाविष्ट करने हेतु अपनी आवश्यकतानुसार प्रथम सभी इकाईयों को निर्धारित कर उनको उपविभागों में विभाजित किया जाता है। जब जनसंख्या के एक विशिष्ट समूह के अंतर्गत दूसरा समूह, दूसरे समूह के अंतर्गत तीसरा समूह, तीसरे समूह के अंतर्गत चौथा समूह,.... इस तरह संपूर्ण जनसंख्या का विभिन्न समूहों मे विभाजन किया जाता है और बाद मे सभी प्रकार के समूहोंसे प्रतिदर्श का चयन किया जाता है। इसलिए इसे बहुस्तरीय संभावित प्रतिदर्शन कहते है।

उदाहरण के लिए किसी शैक्षिक सर्वेक्षण के लिए कितने प्रकार के समूहों से प्रतिदर्श का चयन करने के लिए प्रथम सभी प्रकार के प्रतिदर्श का विभिन्न स्तरों के समूहों मे चयन करना पडेगा। वह स्तर एवं समूह इस प्रकार होंगे–

(1) जिला समूह (2) तहसील समूह

(3) ग्राम या नगर समूह (4) विद्यालय समूह

(5) अध्यापक समूह (6) विद्यार्थी समूह।

बहुस्तरीय प्रतिदर्शन

स्तर समूह	समग्र	प्रतिदर्श जनसंख्या	प्रतिशत संख्या अनुपात
जिला	8	4	50.00%
तहसील	96	24	25.00%
गांव	540	60	11.11%
विद्यालय	600	60	10.00%
अध्यापक	3600	300	08.33%
विद्यार्थी	160000	1600	01.00%

बहु स्तरीय संभावित प्रतिदर्शन पद्धति के लाभ :

1) इस विधि द्वारा चयन किए गए प्रतिदर्श समग्र जनसंख्या का उत्तम एवं पर्याप्त प्रतिनिधित्व करता है।
2) यहाँ विविध वर्ग से एवं विभिन्न स्तर से इकाईयों का चयन किया जाता है अतः सभी स्तर की जनसंख्या का प्रतिदर्श मे प्रतिनिधित्व रहता है।
3) इसमें विभिन्न समूहों के आधार पर भी स्तरों का विभाजन किया जाता है; अतः सभी स्तर की जनसंख्या का प्रतिदर्श मे प्रतिनिधित्व रहता है।
4) प्रत्येक स्तर की इकाई से तथ्य संकलन करने में सहायक सिद्ध होता है।
5) इस विधि से वस्तुनिष्ठता के रूप में प्रतिदर्श चयन किया जा सकता है।
6) इस विधि में लचीलापण है; क्योंकि सभी स्तर की इकाई की तरफ विशेष ध्यान दिया जा सकता है।

बहु स्तरीय सम्भाविता प्रतिदर्शन पद्धति के दोष :

1) समान अनुपात में इकाईयों का चयन करने की सुविधा इस पद्धति मे नही है।
2) विविध स्तर के आकार में कम अधिक अंतर होने के कारण इकाईयों का चयन करते समय सप्रमाणता नही आती है।
3) यह विधि कुछ जटिल होने के कारण प्राथमिक अवस्था में समग्र जनसंख्या के स्तर का विविध विभागों के विभाजन करते समय गलती होने की संभावना होती है।

(क.4) व्यवस्थाबद्ध प्रतिदर्शन पद्धति (Systematic Sampling Method) :

यह भी एक प्रकार की नियमित अंतराल प्रतिदर्शन विधि मानी जा सकती है। व्यवस्थित अथवा नियमबद्ध प्रतिदर्शन विधि संभावित प्रतिदर्शन की एक सरलतम विधि है। इसमे समग्र जनसंख्या की एक सूची तैयार की जाती है। इस सूची में से नियमित अंतर की इकाईयों का चयन किया जाता है। इस विधि का उपयोग करने के लिए सर्वप्रथम प्रतिदर्श का आकार अथवा संख्या एवं जनसंख्या का आकार ध्यान मे लेते हुए एक तरह के सूत्रानुसार प्रतिदर्श का व्यवस्थित चयन किया जाता है। अर्थात पहला अंक 20 माना तो 20 के ही अंतराल से अगली ईकाई संख्याओं का चयन करते हुए आगे बढना होता है। इस प्रकार 20, 40, 60, 80,... अथवा पहला अंक 10 माना और 20 अंको का अंतराल

माना तो 10, 30, 50, 70, 90,.... ऐसा इकाई संख्या का चयन करना पडता है। इस तरह न्यादर्श की जितनी संख्या निर्धारित की उतनी इकाई स्वीकृत की जायेगी। उनको प्रतिदर्श या न्यादर्श चयन मे शामिल किया जायेगा।

व्यवस्थाबद्ध प्रतिदर्शन विधि के गुण :

1) व्यवस्थाबद्ध प्रतिदर्शन विधि बहुत ही सरल विधि है।
2) यह विधि सर्वसमावेशक विधि है।
3) यह विधि समग्र जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करती है।
4) प्रतिदर्श का चयन करते समय समग्र जनसंख्या का अवलोकन किया जाता है।
5) इस विधि से चुने गए प्रतिदर्श से प्राप्त निष्कर्षों का सामान्यीकरण किया जा सकता है।
6) इस विधि का उपयोग अनुमानात्मक सांख्यिकी मे होता है।
7) इस विधिसे क्षेत्रीय कीमत कम कर सकते है।

व्यवस्थाबद्ध/नियमबद्ध प्रतिदर्शन विधि के दोष :

1) व्यवस्थाबद्ध प्रतिदर्शन विधि मे व्यक्ति निष्ठता प्रभाव हो सकता है।
2) व्यक्तिनिष्ठता के कारण इसमें गलतिया होने की संभावना होती है।
3) प्रत्येक इकाई की जानकारी रखना कठिण है।
4) प्रदत्त चयन के अवलोकन से निष्कर्ष निकालना बहुत ही कठिण है।
5) विभिन्न वर्ग, स्तर अथवा क्षेत्र का प्रतिनिधित्व कम या नही होने की संभावना होती है।

(क.5) गुच्छ / पुंज प्रतिदर्शन विधि (Cluster Sampling Method) :

गुच्छ अथवा पुंज वर्ग के जनसंख्या से दैव प्रतिदर्शन विधि द्वारा न्यादर्श का चयन करने की एक विशेष प्रक्रिया होती है। वास्तव मे यह पद्धति स्तरीय प्रतिदर्शन विधि से बहुत ज़्यादा भिन्न नही होती। इसमे केवल इतनी ही भिन्नता है कि; यहा प्रतिदर्श की इकाई एक व्यक्ति नही बल्कि एक समूह या वर्ग होता है जिसे एक गुच्छ या पुंज माना जाता है। इस गुच्छ या पुंज को संपूर्ण जनसंख्या की एक इकाई के रूप में स्वीकार किया जाता है। जब कोई अनुसंधान मे जनसंख्या का आकार विशाल होता है; तब इस विधि का उपयोग किया जाता है। इसमें पाठशाला, वर्ग, परिवार, गाँव इत्यादि को एक

इकाई के रूप में उपयोग किया जाता है। इस तरह इस विधि से समग्र जनसंख्या से गुच्छ या पुंज के रूप में प्रतिदर्श का चयन किया जाता है। इसमें समग्र जनसंख्या का अनेक वर्गो/गुच्छों में रूपांतर किया जाता है और बाद मे उनका चयन किया जाता है। इसलिए इस विधि को गुच्छित इकाई पुँज प्रतिदर्शन विधि कहते है। उदाहरण के लिए दूर शिक्षा के विभिन्न अध्ययन केंद्र के एक गुच्छ को एक इकाई समझकर उन केंद्रो के प्रतिदर्श का चयन कर उनकी समस्या का अध्ययन किया जा सकता है।

गुच्छ/पुँज प्रतिदर्श चयन विधि के गुण :

1) गुच्छ या पुंज प्रतिदर्शन विधि व्यवस्था बद्ध विधि की तरह एक सरल यादृच्छिक चयन विधि होती है।
2) समग्र एवं विशाल जनसंख्या के पर्याप्त प्रतिनिधित्व का चयन करने हेतु इस विधि का उत्तम उपयोग होता है।
3) इस विधि को निर्णायक (judgemental) विधि भी कहते है। इस विधि से प्रतिदर्श की संम्पूर्ण जानकारी प्राप्त होती है।
4) अनुसंधान मे निष्कर्ष निकालने के लिए जब अवलोकन का उपयोग किया जाता है तब न्यादर्श/प्रतिदर्श का चयन करने के लिए इस विधि का उपयोग किया जाना चाहिए।
5) शिक्षण क्षेत्र या तत्सम क्षेत्र के अनुसंधान में इस विधि का उपयोग अधिक होता है।

गुच्छ/पुँज प्रतिदर्श चयन विधि के दोष :

1) इस विधि मे सर्व समावेशकता नही है।
2) इसमें अनेक त्रृटियाँ होती है। स्तरीय न्यादर्शन/प्रतिदर्शन विधि की लगभग सभी त्रृटियां लागू हो सकती है। परंतु उस विधि के सभी लाभ लागू नही होते।
3) इस विधि मे अनुसंधानकर्ता को अनेक मार्गो एवं प्रक्रियाओं से गुजरना पड़ता है।
4) इस विधि द्वारा न्यादर्श/प्रतिदर्श चयन करने से अनुसंधानकर्ता को अनेक मार्ग से मार्गक्रमण करना पडता है। तथा प्रदत्त संकलन में अधिक परिश्रम करने की आवश्यकता होती है।

(क.6) दोहरी प्रतिदर्शन विधि (Multiple /Double Smpling Method) :

दोहरी प्रतिदर्श चयन विधि को संभावित प्रतिदर्शन विधि का नया प्रकार माना जाता है। इस विधि से प्रतिदर्श का चयन करने से वह अधिक विश्वसनीय माना जाता है। उदाहरण के लिए प्रश्नावली द्वारा पोष्ट से प्रदत्त संकलन करने के लिए यह विधि अत्यंत उपयुक्त है। दैव/यादृच्छिक प्रतिदर्शन विधि मे इस पद्धति से चयन किए गए प्रतिदर्श को पोष्ट द्वारा भेजी प्रश्नावली वापस आने की संभावना कम ही रहती है। यदि उत्तरदाताओं ने प्रश्नावली पूर्ण रूप से भर कर वापस नहीं भेजी तो फिर दूसरी बार प्रतिदर्श का चयन करना पड़ता है। कभी–कभी प्रश्नावली भर कर वापस तो आती है; परंतु अपूर्ण भरी गयी होती है। ऐसे स्थिति मे साक्षात्कार द्वारा भी प्रदत्त संकलन किया जाता है और इस हेतु पुनचयन किए जाने वाले प्रतिदर्श चयन प्रक्रिया को दोहरी या गुणित प्रतिदर्श चयन विधि कहते है। इस विधि का दूसरा भी एक हेतु होता है। जिसमे इसका उपयोग प्रथम जितनी जानकारी प्राप्त हुई है; उसकी विश्वसनीयता जानने के लिए भी उपयोग किया जाता है। इस प्रक्रिया मे प्रतिदर्श का चयन दो बार करना पडता है। इसलिए इस प्रक्रिया को दोहरी प्रतिदर्शन पद्धति अथवा पुनरावृत्रि प्रतिदर्शन पद्धति भी कहते है।

दोहरी प्रतिदर्शन विधि के गुण :

1) यह एक विश्वसनीय विधि मानी जाती है।
2) यह विधि अवलोकन पर आधारित है।
3) इस विधि का उपयोग करने से त्रुटिया कम होती है।
4) प्रश्नावली की वैधता जाँचने के लिए भी इस विधि का उपयोग होता है।
5) प्रथम मिली हुई जानकारी को जानने के लिए यह विधि उपयोगी है।

दोहरी प्रतिदर्शन विधि के दोष :

1) इस विधि में बहुत समय लगता है।
2) विशाल जनसंख्या के प्रतिदर्श चयन में इस विधि का उपयोग नही कर सकते।
3) इस विधि में अत्याधिक धन का अपव्यय होता है।
4) इसकी योजना और कार्यान्वयन करना कठीण होता है।
5) जहाँ प्रतिदर्श की संख्या बहुत ज्यादा होती है वहां इस विधि का उपयोग कर सकते है।

(ख) असंभावित प्रतिदर्शन विधियां (Non Probability Sampling Methods)

असंभावित प्रतिदर्शन में समग्र जनसंख्या के प्रत्येक इकाई कों चुने जाने की समान संभावना नही होती है। ऐसे स्थिति में समग्र जनसंख्या के प्रत्येक इकाई कों चुने जाने का समान अवसर नही दिया जा सकता। इसलिए इस पद्धति को गैर यादृच्छिक प्रतिदर्शन पद्धति भी कहते हैं। अनुसंधानकर्ता अपनी सुविधा अथवा उपलब्ध परिस्थिति के अनुसार; अपने अनुसंधान के उद्देश पूर्ण करने के लिए अनुरूप न्यादर्श/प्रतिदर्श का चयन करने की कोशिश करता है। जिस प्रतिदर्शन विधि में समग्र जनसंख्या के प्रत्येक इकाई कों चुने जाने की समान संभावना नही होती उस विधि को असंभावित प्रतिदर्शन विधि कहते हैं। यह विधि उपलब्ध साधन, उपलब्ध समय, कार्यक्षमता, एवं अन्य अनुषंगिक परिस्थिति तथा अनुसंधान के उद्देश्य इत्यादि के अनुसार अनुसंधानकर्ता प्रतिदर्श का चयन करता है। इसलिए इसमे प्रत्येक इकाई कों चुने जाने की संभावना समान नही होती है। अतः हम यह कह सकते है कि; यह विधि सम्भाविता प्रतिदर्शन पद्धति के बिलकुल विपरित है। समग्र जनसंख्या से अनुसन्धानकर्ता को इकाई के बारे में सम्पूर्ण जानकारी न होने के कारण उसे असंभावित विधि का उपयोग करना पडता है।

(ख.1) असंभावित प्रतिदर्शन विधि के प्रकार :

(1) उद्देश्यपूर्ण प्रतिदर्शन (Purposive Sampling)

(2) आकस्मिक प्रतिदर्शन (Incidental Sampling)

(3) अभ्यंश/नियतांश प्रतिदर्शन (Quota Sampling)

(4) सुविधापूर्ण प्रतिदर्शन (Convenience Sampling)

(5) स्वचयनित प्रतिदर्शन (Self Selection Sampling)

(1) उद्देशपूर्ण प्रतिदर्शन (Purposive Sampling Method) :

जब कभी जनसंख्या मे विविधता होती है; तब जनसंख्या के विभागों, वर्गों, स्तरों अथवा क्षेत्रों को उचित एवं पर्याप्त प्रतिनिधित्व देने के लिए संपूर्ण जनसंख्या के सभी प्रकारों से इकाईयों का चयन करने हेतु किसी विशेष निकर्ष मापदण्ड को ध्यान मे रखते हुए न्यादर्श का चयन करना पडता है। अर्थात समग्र जनसंख्या से किसी विशिष्ट उद्देश्य की पूर्ति के लिए जनसंख्या की विभिन्न इकाईयों की विशेषताओं का प्रतिनिधित्व करने के लिए उद्देशपूर्ण प्रतिदर्शन पद्धति का उपयोग करना आवश्यक होता है। कभी कभी किसी

विशेष परिस्थिति में समय के अभाव के कारण तत्काल निर्णय लेने की आवश्यकता होती है। ऐसे स्थिति में प्रतिदर्शन के चयन के लिए इस पद्धति का उपयोग किया जाता है। उद्देशपूर्ण प्रतिदर्शन मे समग्र जनसंख्या के वारंवारिता का वितरण अथवा वर्गीकरण करना पडता है। परंतु इसमे अध्ययन के प्रमुख चरों पर अनुसंधान कर्ता का पर्याप्त और अच्छा नियंत्रण भी होना चाहिए प्रतिदर्श का चयन करते समय प्रतिदर्श की इकाईयों पर अनुसंधानकर्ता का अच्छा नियंत्रण रहता है। परंतु इसमें वस्तुनिष्ठता का अभाव होता है तथा प्रतिदर्श के चयन मे पक्षपात होने की संम्भावना भी रहती है। फिर भी यह एक महत्वपूर्ण प्रतिदर्शन विधि मानी जाती है। यह सुविधाजनक एवं कम खर्चिली भी है। इससे अनुसंधानकर्ता को सुविधा होती है और प्रदत्त संकलन प्रक्रिया आसान भी हो जाती है। उदाहरण के लिए बैकों कर्मचारी के कार्य–संतुष्टी का अध्ययन करना है। इस शोध–कार्य में सभी प्रकार के बैकों के सभी कर्मचारीयों की जनसंख्या हो सकती है। परंतु कार्य संतुष्टी का अध्ययन करने हेतू अनुसंधानकर्ता किसी खास उद्देश्य से केवल अस्थायी कर्मचारी का ही चयन करता है। तब यह उद्देशपूर्ण प्रतिदर्शन का उदाहरण बनता है।

(2) आकस्मिक प्रतिदर्शन विधि (Incidential Sampling Method) :

जब अनुसंधान कर्ता अपनी आवश्यकतानुसार प्रतिदर्श का चयन करता है। प्रतिदर्श का चयन करते समय जितनी इकाईयों की आवश्यकता होती है; उतनी ही इकाईयाँ अनुसंधान कर्ता चयन करता है। इसमे प्रतिदर्श की इकाईयां को प्राप्त करने मे अनुसन्धानकर्ता को विशेष कठिनाईयां नही होती है। कभी कभी संपूर्ण वर्ग कक्षा के छात्रों को प्रतिदर्श में शामिल किया जाता है या कभी कभी किसी कार्यक्रम या उत्सव में उपस्थित सभी सहभागीयों को प्रतिदर्श के रूप में स्वीकार किया जाता है; उन सबको आकस्मिक प्रतिदर्श कहते है। इसमे पक्षपात होने की पुरी संभावना होती है और यह विधि अवैज्ञानिक मानी जाती हैं। इसिलिए जब कभी अन्य विधि का उपयोग करना असंभव हो; तभी इस विधि का आवश्यकतानुसार ही उपयोग करना चाहिए इस प्रकारसे चुने गए प्रतिदर्श से अनुसंधानकर्ता आवश्यक जानकारी अत्यंत सहजता से प्राप्त कर सकता है। इस विधि से चुने गए न्यादर्श अत्यंत कम से कम समय, श्रम और खर्चेमे प्रदत्त सामग्री का संकलन किया जा सकता है।

(3) स्वयं चयनित प्रतिदर्शन विधि (Self Selection Sampling) :

इस विधि का उपयोग करने के लिए अनुसंधानकर्ता के पास अपने विषय या शोध समस्या के बारे में स्वयं अपने आपको प्रतिदर्श की इकाई बनाने के लिए तत्पर होता है। प्रतिदर्श की इकाई के रूपमे स्वयं अपना नाम घोषित करता है। इसिलिए उसे स्वयं चयनित प्रतिदर्श कहते है। उदाहरण के लिए समाचार पत्र में किसी महत्वपूर्ण विषय पर आम लोगों के विचार क्या है? किसी खास विषय के बारे में आम लोगो का विचार जानने लिए जो जनमत सर्वेक्षण किया जाता है; उसमे अनुसंधानकर्ता अपने आप को भी शामिल कर लेता है। इस लिए यह स्वयं चयनित प्रतिदर्शन विधि मानी जाती है।

(4) सुविधापूर्ण प्रतिदर्शन विधि (Conveience Sampling) :

प्रदत्त संकलन करने में आसानी हो इस लिए अनुसंधानकर्ता प्रतिदर्श का चयन अपने सुविधा के अनुसार करता है। इस पद्धति से प्रतिदर्श का चयन करते समय अनुसंधानकर्ता अपनी सुविधा को महत्व देता है। अनुसंधानकर्ता अपनी सुविधानुसार ही प्रतिदर्श का चयन करता है। इस म वह ऐसी इकाईयों का चयन करता है जिसमें उसे प्रदत्त संकलन करने में आसानी और सुविधा हो सके। सुविधा पूर्ण प्रतिदर्शन में अनुसंधानकर्ता अपने सुविधा को महत्व देता है। अनुसन्धानकर्ता अपनी सुविधानुसार प्रतिदर्शन चयन करता है। इस म वह ऐसी इकाई का चयन करता है जिस म उसे विशेष सुविधा होती है।

असंभावित प्रतिदर्शन विधि के गुण (Merits of Non-Probability Sampling) :

1) असंभावित प्रतिदर्शन विधि में अनुसंधानकर्ता प्रतिदर्श को अपनी मर्जी से चुनता है। इसमें किसी अन्य व्यक्ति पर निर्भर रहने की या सहायता लेने की कोई अवश्यकता नही होती है।
2) असंभावित प्रतिदर्शन विधि से प्रतिदर्श का चयन करने के लिए अनुसंधानकर्ता को किसी पूर्वज्ञान की कोई आवश्यकता नही होती है।
3) असंभावित प्रतिदर्शन विधि से प्रतिदर्श का चयन करने से अनुसंधानकर्ता का श्रम, पैसा तथा समय की बचत होती है।
4) अनुसंघानकर्ता अपनी सुविधा के अनुसार प्रतिदर्श का चयन कर सकता है।
5) अनुसंधानकर्ता को जिस परिकल्पना का परीक्षण करना होता है उसे उसका आधार लेकर निष्कर्ष तक पहुचना होता है इस विधि से प्रतिदर्श का चयन करने से आसानी होती है।
6) यह प्रतिदर्श चयन की एक सरल एवं उपयुक्त पद्धति है।

7) समग्र जनसंख्या ज्ञात करने की आवश्यकता नही होती। किसी भी इकाई का चयन किया जा सकता है।

8) अनुसंधानकर्ता पुरी इमानदारी सावधानी तथा सद्विवेक से अगर प्रतिदर्श का चयन करता है तो असंभावित प्रतिदर्शन विधि सबसे अधिक अच्छी साबित हो सकती है।

असंभावित प्रतिदर्शन विधि के दोष (Demerits of Non-Probability Sampling) :

1) इस विधि में अनुसन्धानकर्ता अपने मर्जी से प्रतिदर्श के चयन करता है; इस लिए समग्र जनसंख्या की इकाई में से किसी भी प्रतिदर्श के चयन होने की संभावना नही रहती है।

2) इस विधि से प्रतिदर्श के प्रत्येक इकाई का चयन होने की कोई संभावना नही होती है। इस लिए अनुसंधान के निष्कर्ष में विश्वसनियता कम होती है।

3) इस विधि में वस्तुनिष्ठता नहीं होने के कारण यह अवैज्ञानिक पद्धति मानी जाती है।

4) जनसंख्या में विभिन्नता होने की स्थिति में इस विधि का उपयोग नही कर सकते; केवल एक जैसी जनसंख्या में ही इस विधि का उपयोग कर सकते हैं।

5) इस विधि में अनुसंधानकर्ता अपनी सुविधा के अनुसार प्रतिदर्श का चयन करता है। इसिलिए यहां समग्र जनसंख्या का प्रतिनिधित्व होने की संभावना कम होती है।

6) इस प्रकार की विधि में पक्षपात होने की सम्भावना अधिक होती है।

7) इसके आधार पर भविष्य कथन नहीं कर सकते।

8) इस विधि के आधार पर प्रत्येक इकाई तक अनुसंधानकर्ता नहीं पहुँच पाता है।

9) इसी विधि में प्रतिदर्शन त्रुटी (sampling error) की गणना का आधार नहीं ले सकते हैं।

उपर्युक्त वर्णन से ऐसा प्रतित होता है कि; प्रतिदर्शन की अधिकतम विधियों मे बहुत जादा अंतर नही है। अधिकांश प्रतिदर्शन विधियां एक दूसरे से मिलती जुलती है। उदाहरण के लिए लॉटरी एवं कार्ड प्रतिदर्शन विधियां अथवा ग्रीड, कोटा, स्तरीय, गुच्छ एवं व्यवस्थाबद्ध प्रतिदर्शन विधीयां। उद्देशपूर्ण, सुविधापूर्ण एवं आकस्मिक प्रतिदर्शन विधीयों मे भी समानता है। संभावित एवं असंभावित प्रतिदर्शन विधियों कई बार उनका

उपयोग पुरकता ही होता है। दोनों प्रकार की विधीयों का एक साथ उपयोग करने से प्रतिदर्श चयन की प्रक्रिया में अधिक वस्तुनिष्ठता और वैज्ञानिकता लायी जा सकती है। इसका वर्णन अभ्यंश या नियतांश प्रतिदर्शन विधि में पहले ही किया जा चुका है। प्रतिदर्शन विधि के संबंध मे कुछ महत्वपूर्ण बातें याद रखनी चाहिए। क्योंकि ऐसा प्रतित होता है की इसमें भी अनेक गलत अवधारणाएं प्रचलित हो चुकी हैं। उदाहरण के लिए प्रतिदर्श और प्रतिदर्शन अथवा न्यादर्श और न्यादर्शन इन शब्दों के प्रयोग में उलझाव गडबड करना। यहाँ उल्लेखनीय है कि प्रतिदर्श अथवा न्यादर्श एक नमुना (sample) होता है और प्रतिदर्शन अथवा न्यादर्शन (sampling) शब्द उस नमुना या न्यादर्श के इकाइयों के चयन करने की एक प्रक्रिया होती है।

प्रतिदर्श का आकार (Size of sample) :

प्रायोगिक शोध अध्ययन में प्रतिदर्श का आकार दो प्रकार का होता है। एक लघु आकार (Small size) और दूसरा बडा आकार (Large size)। प्रतिदर्श की संख्या जब 30 या उससे कम हो तो उसे प्रतिदर्श का लघु आकार कहते हैं; और जब प्रतिदर्श की संख्या 30 से अधिक हो तो उसे प्रतिदर्श का बडा आकार कहते हैं। बडे आकार के प्रतिदर्श से प्राप्त निष्कर्ष छोटे आकार के प्रतिदर्श से अधिक विश्वसनीय माने जाते हैं। वास्तव मे सामाजिक क्षेत्र के अध्ययन मे 30 से अधिक प्रतिदर्श की संख्या बहुत बडी नहीं होती परंतु प्रायोगिक शोध अध्ययन के लिए यह संख्या पर्याप्त मानी जाती है। इसलिए सामाजिक क्षेत्र के अनुसंधान में बडे आकार के प्रतिदर्श का ही सुझाव दिया जाता है। सामाजिक क्षेत्र के प्रायोगिक अनुसंधान में भी प्रतिदर्श का आकार अथवा संख्या जहां तक संभव हो बडी ही निर्धारीत की जानी चाहिए

शोध अध्ययन में प्रतिदर्श का आकार या संख्या छोटी हो या बडी; उनके परिणामों का सांख्यिकीय विश्लेषण करते समय लघु आकार (Small size) के प्रतिदर्श के लिए अलग और बडे आकार (Large size) प्रतिदर्श के लिए अलग विधि से विश्लेषण किया जाता है। अर्थात सांख्यिकीय सूत्रों मे थोडा परिवर्तन किया जाता है। प्रतिदर्श का आकार छोटा होने से जो त्रुटि पायी जाती है; उसको प्रभावहीन करनेके लिए यह 30 की सीमा के आधार पर प्रतिदर्श का आकार लघु और बडा निर्धारित किया गया है।

प्रतिदर्श का चयन करना उतना सरल कार्य नही है जितना हमे लगता है। बडे आकार के प्रतिदर्श से प्रदत्त संकलन में अनेक बाधाएँ आती हैं। जैसे; लागत, समय, मेहनत आदि। दूसरी बात यह है कि; बडे आकार के प्रतिदर्श का चयन करने के बावजुद भी प्राप्त होने वाले निष्कर्ष के अधिक विश्वसनीय एवं सार्थक होने की गारंटी नही होती। पूर्ण विश्वसनियता एवं सार्थकता तब पायी जाती है; जब प्रतिदर्श का मध्यमान (Mean) और समष्टि का मध्यमान में अंतर ना हो। इस अंतर का मापन प्रमाणित त्रुटि (Standard Error) के आधार पर किया जाता है। प्रमाणित त्रृटि का सूत्र संख्याशास्त्र के विश्लेषण में दिया जाता है। यहां भी उसका उल्लेख करना उचित होगा।

इस सूत्र मे SEm = मध्यमान की प्रमाणित त्रुटि,
S. D. = प्रमाण विचलन; और
N = प्रतिदर्श संख्या है।

इस सूत्र मे बताये गए मूल्य प्रतिदर्श और समष्टि दोनों के परिणामों से संबंधित हैं। दोनो के परिणामों की तुलना करने के बाद उसमे अगर समानता हो तो कि ऐसा माना जाता है। प्रतिदर्श की संख्या पर्याप्त है; ऐसा माना जाता है। परंतु इस सूत्र मे बताये गए मूल्य प्रदत्त संकलन के बाद प्राप्त होते है; और कि यह नही बताया जा सकता है। प्रतिदर्श की संख्या प्रदत्त संकलन के पूर्व ही निर्धारित करनी पडती है। इसलिए प्रतिदर्श की संख्या निर्धारित करने के लिए यह सूत्र कैसे उपयुक्त सिद्ध हो सकता है; परंतु पथदर्शी अध्ययन (Pilot Study) के आधार पर यह निर्णय लिया जा सकता है।

न्यादर्श/प्रतिदर्श का आकार अथवा उसकी संख्या कितनी होनी चाहिऐ? यह प्रश्न अक्सर पुछा जाता है। परंतु इसका कोई निश्चित नियम नही है। अनेक भिन्न भिन्न लेखकों ने अपनी पुस्तकों मे भिन्न भिन्न मत प्रदर्शित किए हैं। न्यादर्श की संख्या कम से कम 500 होनी चाहिऐ, 200 होनी चाहिऐ, 100 होनी चाहिए, अथवा कुल जनसंख्या से 10% होनी चाहिए, 5% होनी चाहिए, 2% होनी चाहिए, 1% होनी चाहिए; आदि तरह तरह के विचार प्रकट किये जाते हैं। अतः इसमे मत–भिन्नता पाई जाती है। न्यादर्श के आकार अथवा उसकी संख्या के बारे में कोई निश्चित नियम या मत हो या न हो; यहाँ एक बात निश्चित रूप से हम कह सकते हैं कि; कुल जनसंख्या यदि ज्ञात हो तो यादृच्छिक विधि से प्रतिदर्श का चयन कर सकते हैं ऐसी स्थिति में जनसंख्या और प्रतिदर्श के अनुपात संबंधी एक निश्चित मत यह है कि; जनसंख्या जितनी अधिक हो प्रतिदर्श का प्रतिशत उतना कम हो; तथा जनसंख्या जितनी कम ही उतना ही प्रतिदर्श का

प्रतिशत अधिक होना चाहिए उदाहरण के लिए ज्ञात जनसंख्या 1,000 है; तो उसका 10% भी प्रतिदर्श लिया तो केवल 100 होता है। ज्ञात जनसंख्या यदि 10,000 है तो उसका 5% भी प्रतिदर्श लिया तो केवल 500 होता है। यहां शोध कर्ता को स्वयं ही निर्णय लेना चाहिए कि; अपने शोध अध्ययन के लिए प्रतिदर्श की कितनी संख्या पर्याप्त है? कि यह निश्चित रूप से कह सकते है। प्रायोगिक शोध अध्ययन मे प्रतिदर्श की संख्या अत्यंत सीमित होती है।

शोध रूपरेखा का अर्थ एवं स्वरूप

प्रत्यक्ष रूप में शोध प्रस्ताव (research proposal), अभिकल्प (research design) और कार्य की रूपरेखा (Out Line / Action Plan) सम्बधी अवधारणाएं समान मानी जाती हैं। परंतु वास्तव में शोध अभिकल्प, शोध रूपरेखा और शोध प्रस्ताव, यह तीनो अवधारणायें भिन्न भिन्न हैं। शोध कार्य के प्रस्ताव में आवेदन पत्र, शैक्षिक योग्यता, शोधकार्य की रूपरेखा एवं शोधअभिकल्प, संकल्पित आयव्यय का विवरण; तथा अन्य संबधित सूचना के साथ संपूर्ण वर्णन सहित जो सविस्तार विवरण होता है; उसे शोध कार्य का प्रस्ताव कहते हैं। शोध कार्य की रूपरेखा (research design) में केवल शोधकार्य संबंधी सभी गतिविधियों का विवरण होता है। तथा शोध अभिकल्प मे केवल प्रायोगिक शोधकार्य की रूपरेखा होती है। इससे हम यह कह सकते है कि; प्रायोगिक अभिकल्प शोध कार्य की रूपरेखा का एक भाग है; तथा अभिकल्प और रूपरेखा दोना शोध प्रस्ताव के भाग हैं। इससे यह प्रतित होता है की; शोध प्रस्ताव एक व्यापक अवधारणा है।

प्रस्तावित शोध कार्य किसी विशिष्ट संस्था के लिए (उदाहरण के लिए शासकीय, अर्द्धशासकीय अथवा व्यक्तिगत संस्था, विश्वविद्यालय या कोई भी अन्य अनुसंधान संस्था) किया जाता है। इसलिए शोध प्रस्ताव और रूपरेखा संबंधित संस्था से सम्बन्धित करते समय उनके अपने स्वतंत्र नियम लागू किए जाते है। अतः उस संस्था की कार्य प्रणाली और नियम के अनुसार शोध प्रस्ताव तैयार किया जाना चाहिए शोध अध्ययन करने का शोध कर्ता का भी अपना एक उद्देश्य होता है। उदाहरण के लिए किसी विश्वविद्यालय की उपाधि; पीएच.डी., डी.लिट्. एम.फिल. या स्नातकोत्तर उपाधि के लिए शोध करना। कभी कभी किसी अनुसंधान संस्था के लिए भी शोध कार्य किया जाता हैं। उसे शोध प्रकल्प कहते हैं। ऐसी संस्था उस शोधप्रकल्प को पूर्ण करने के लिए अनुदान भी देती है। ऐसे शोध प्रस्ताव के साथ संभावित व्यय का विवरण प्रस्तुत करने की आवश्यकता होती है।

सामाजिक क्षेत्र के शोधकार्य मे मुख्यतः तीन बातें आवयक मानी जाती है; पैसा, मेहनत और समय। इस क्षेत्र के शोध कार्य मे प्रामाणिक एवं विश्वसनिय निष्कर्ष प्राप्त करने हेतु सीमित धन और सीमित समय मे अत्यंत कुशलता से शोध कार्य पूर्ण करना पडता है। इसलिए शोध प्रस्ताव एवं शोध रूपरेखा का अर्थ एवं स्वरूप अच्छी तरह से समझना जरूरी है। शोधकार्य की रूपरेखा को शोध प्ररचना, कृति योजना, synopsis, research design, out line, action plan आदि नामों से जाना जाता है। कुछ विद्वानों ने शोध कार्य के रूपरेखा की परिभाषा निम्नलिखित प्रकार से की है–

ॲकॉफ के मतानुसार; 'निर्माण होने वाली परिथिति में जो निर्णय लिए जाने वाले हैं; उसके बारेमे पहले ही निर्णय लेनेकी प्रक्रिया को रूपरेखा कहते है। ("design is the process of making decisions before the situation arises in which the decisions to be carried out."- Ackoff, 'Design of Social Research)

कर्लिंगर के मतानुसार; 'शोध प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करने के लिए अनुसंधान कार्य की विविधताओं को नियंत्रित किए जाने वाली जो योजना, संरचना एवं रणनीति; बनायी जाती है उसे शोध कार्य की रूपरेखा कहते है। यह शोध कार्य की संपूर्ण गतिविधियों की एक योजना होती है; जिसमे शोध परिकल्पनाओं का निर्धारण तथा उनके संबंध मे अभिप्राय से लेकर अंतिम तत्थ्यों के विश्लेषण तक की संपूर्ण प्रक्रिया होती है।' (Kerlinger - Foundations of Behaviourial Research)

अनुसंधान रूपरेखा की अत्यंत सरल परिभाषा इस प्रकार से की जा सकती है कि; 'अनुसंधान के उद्देश्य पुर्ति के लिए जो प्रक्रिया एवं गतिविधियां करने की आवश्यकता होती है; उन सबकी सुसंगत एवं क्रमबद्ध योजना पुर्वक बनायी गयी सूची जो संपूर्ण कृतियोजना होती है; उसे शोध कार्य की रूपरेखा कहते हैं। शोधकर्ता को अपने शोधकार्य की निश्चित दिशा सुस्पष्ट हो; तथा उसकी समय, क्षमता, मेहनत, संसाधन आदि महत्वपूर्ण बातों का उचित ज्ञान एवं नियोजन हो इसलिए अनुसंधान रूपरेखा की अत्यंत आवश्यकता होती है।

शोध रूपरेखा के पहलू (aspects of research design)

अनुसंधान रूपरेखा के मुख्यतः तीन पहलू होते है; जो निम्नलिखित है।

(1) शोध समस्या, शोध कार्य के उद्देश्य, परिकल्पना तथा चरों का वर्णन और स्पष्टीकरण।

(2) अनुसंधान कार्य की एक सुस्पष्ट एवं सरल रूपरेखा या कृतियोजना की तैयारी।

(3) अनुसंधान की संपूर्ण परीक्षणात्मक योजना का चार विभागों मे वर्गीकरण।

(3.1) प्रतिदर्श शोध रूपरेखा (sampling design)

(3.2) सांख्यिकीय शोध रूपरेखा (statistical design)

(3.3) अवलोकनात्मक शोध रूपरेखा (observational design)

(3.4) गतिशील शोध रूपरेखा (operational design)

उपर्युक्त सभी पहलू का स्पष्टीकरण संबधित अध्याय से प्राप्त हो सकता है। इस अध्याय मे शोध रूपरेखा के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त करनी है। इसलिए उपर्युक्त वर्गीकरण के अलावा शोध रूपरेखा का और एक अलग प्रकार का वर्गीकरण समझना होगा। यह वर्गीकरण शोध रूपरेखा के प्रकार से संबंधित है। शोध रूपरेखा के प्रकार जानने के लिए यह वर्गीकरण भी समझना आवश्यक है। शोध कार्य की रूपरेखा के प्रकार का वर्णन निम्नलिखित रूप में किया जाता है।

शोध रूपरेखा का वर्गीकरण एवं प्रकार

अनुसंधान रूपरेखा के प्रकार जानने से पहले उसका वर्गीकरण ध्यान मे लाना आवश्यक है। यह वर्गीकरण विभिन्न दृष्टिकोण से किया जाता है। शोध कार्य की रूपरेखा का वर्गीकरण सामान्यतः दो बातों के आधार पर किया गया है; जो निम्नलिखित है।

(क) शोध उद्देश्य के आधार पर (objectives based research design)

(ख) शोध उपागम के आधार पर (opproach based research design)

(क.1) अन्वेषणात्मक/निरूपणात्मक शोध रूपरेखा (exploratory research design)

(क.2) विवरणात्मक/निदानात्मक शोध रूपरेखा (descriptive / diagnostic research design)

(क.3) प्रयोगात्मक शोध रूपरेखा (experimental research design)

(क.4) मूल्यांकनात्मक शोध रूपरेखा (evaluative research design)

(ख) शोध उपागम के आधार पर (opproach based research design)

(ख.1) सर्वेक्षणात्मक शोध रूपरेखा

(ख.2) क्षेत्र अध्ययन शोध रूपरेखा

(ख.3) प्रयोगात्मक शोध रूपरेखा

(ख.4) ऐतिहासिक शोध रूपरेखा

(ख.5) व्यष्टि अध्ययन शोध रूपरेखा

शोध रूपरेखा के उपर्युक्त वर्गीकरण के अलावा कुछ अन्य विद्वानों ने (उदाहरण के लिए लुबोबिज एवं हॅगडॉर्न, सेलटिज एवं अन्य आदि) भी भिन्न–भिन्न प्रकार से वर्गीकरण किया है। उससे कुछ शोध रूपरेखा के प्रकारों का उल्लेख प्राप्त होता है जो निम्नलिखित है।

(ग) सहसंबंधात्मक शोध रूपरेखा

(घ) वर्णनात्मक शोध रूपरेखा

(ङ) तुलनात्मक शोध रूपरेखा

शोध रूपरेखा के उपर्युक्त वर्गीकरण एवं प्रकार के अवलोकन से यह प्रतीत होता है कि; शोध रूपरेखा का स्वरूप शोध समस्या और उसके प्रकार पर ही निर्धारित किया जाता है। यहां शोध रूपरेखा का एक सर्वसमावेशक एवं परिपूर्ण प्रारूप दिया जाता है; जिसमे शोध कर्ता अपने शोध स्मस्या के स्वरूप एवं प्रकार को ध्यान में रखते हुए आवश्यकतानुसार परिवर्तन कर सकता है।

शोध रूपरेखा का प्रारूप :

Format of Research Synopsis
अनुक्रमणिका (contents)

अ.क्र.	प्रकरण	पृ.क्र.
1.	प्रस्तावना Introduction………………………………………………… (संकल्पना / अर्थ / व्याख्या, आदि)	1
2.	शोध समस्या की पृष्ठभूमि) (Background of research problem)……………… (उद्‌गम, विकास / सुधारणा / सद्यस्थिति / समस्या की तिव्रता)	2
3.	शोध कार्य की आवश्यकता एवं महत्व/Need/importance/rational of……………	4
4.	शोध समस्या का विदान/Statement of research problem……………………	7

5. कार्यात्मक व्याख्या/Operational Definitions of imp. terms…..…...................… 7

6. शोध कार्य के उद्देश (Objectives of the Research) …………..........…........… 10

7. शोध परिकल्पना/Research Hypotheses (if any...) ………...……...............… 11

8. शोध अध्ययन के चर /Variables (if any...) ………..…….…...........….......… 11

9. मान्यताएँ/Assumptions (if any...)…………...…………..……..........…...........… 12

10. अध्ययन की सम्भावनाए एवं सीमाएं

(Scope & Delimitations of the Study)………...............… 12

11. संबंधित साहित्य एवं पूर्व शोध का अवलोकन (Review of related Studies)….. 15

12. प्रस्तुत शोध समस्या की भिन्नता (uniqueness of the present study)…...........… 19

13. शोध पद्धति (Research Method)...….............…..... 20

14. जनसंख्या व न्यादर्श (जनसंख्या प्रकार, न्यादर्श संख्या एवं चयन पद्धति) (Population, Sample & selection method (if any)………………. 21

15. संशोधन उपकरण (प्रकार, चयन पद्धति) (Data Collection Tools (if any)…....... 22

16. प्रायोगिक संशोधन अभिकल्प (Experimental Design if any...)………………… 23

17. विश्लेषण पद्धति, अर्थनिर्वचन एवं निष्कर्ष.. 24
(Data analysis, interpretation and conclusions)

18. समय सारणी (Time Table of research activities).. 25

19. संदर्भ सूची (List of References)…..……………………………….……… 26

20. संभावित व्यय विवरण (Budget / Estimate)…..…………………………….....30

इकाई 5 शोध प्रलेख एवं प्रदत्त सामग्री संकलन के उपकरण

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य
5.1 प्रस्तावना
5.2 शोध कार्य एवं प्रलेखन के पदक्रम
5.3 शोध प्रलेखन का तकनीक एवं स्वरूप
5.4 प्रदत्त सामग्री के उपकरण: स्वनिर्मित उपकरण एवं पूर्वनिर्मित उपकरण
5.5 सारांश
5.6 बोध प्रश्न
5.7 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

5.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप :

- ।
- ।
- ।

5.1 प्रस्तावना

शोध कार्य एवं प्रलेखन के पदक्रम

शोध प्रस्ताव संबंधित संस्था को प्रस्तुत करने के उपरांत उसे मान्यता मिलने तक शोधकर्ता को वैसे कोई काम नही होता। शोध प्रस्ताव को मान्यता मिलने तक कितना समयावधि लगेगा ये उस संस्था के कार्य प्रणाली पर निर्भर होता है। परंतु यहां शोध प्रस्ताव स्वीकृत होते ही शोध कर्ता अपना शोध कार्य का अध्ययन यथाशिघ्र पूर्ण करना चाहता है। परंतु यह अध्ययन कहां से शुरू करे? यह प्रश्न नवोदित शोधकर्ता के सामने खडा होता है। वास्तव मे अपना शोध प्रस्ताव स्वीकृत होगा इस आत्मविश्वास के साथ यह अध्ययन शुरू कर देना चाहिए। वास्तव मे ऐसा प्रतित होता है कि; शोधकर्ता अपने शोध कार्य का प्रारंभ प्रथम अध्याय के लेखन से ही करता है। परंतु यहाँ एक सुझाव देना अनुचित नही होगा चाहिए कि; दूसरा अध्याय की तैयारी पहले और प्रथम अध्याय की तैयारी बादमे करनी चाहिए। यह इस लिए कि; दूसरा अध्याय तैयार करने से संपूर्ण शोध

कार्य की अवधारणाए तथा दिशा सुस्पष्ट हो जाती है। इस सुझाव के साथ यहां इसका वर्णन करते हुए शोध प्रलेख लेखन के पदक्रम निम्नानुसार दिए जाते है।

1) पूर्व शोध कार्य तथा संबंधित साहित्य का अवलोकन कर दूसरे अध्याय का लेखन करना।
2) प्रथम अध्याय का लेखन करना।
3) प्रदत्त सामग्री संकलित करने के उपकरण तैयार करना।
4) शोध कार्य अगर प्रयोगात्मक हो, तो प्रयोगिक समूहपर प्रयोगोपचार करना।
5) तैयार किए गए उपकरण अथवा प्रमाणित उपकरण की सहायता से प्रदत्त सामग्री संकलित करना।
6) संकलित की गई प्रदत्त सामग्री का बारंबारता वितरण (frequency distribution) अथवा उसके स्वरूपानुसार वर्गीकरण करना।
7) वर्गीकृत प्रदत्त सामग्री का सांख्यिकिय सूत्रों से अथवा अन्य तर्काधिष्ठित विधि से विश्लेषण, एवं अर्थनिर्वचन करना।
8) विश्लेषण एवं अर्थनिर्वचन किए गए प्रदत्त से निष्कर्ष निकालना।
9) प्रदत्त सामगी विश्लेषण, अर्थनिर्वचन एवं निष्कर्ष संबंधी अध्याय लेखन करना।
10) शोध पद्धति एवं कार्यवाही संबंधी अध्याय लेखन करना।
11) शोध सारांश लेखन संबंधी अंतिम अध्याय लेखन करना।
12) शोध प्रलेख टंकन, मुद्रण, मुद्रीत शोधन एवं दुरूस्ती करना।
13) शोध प्रतिवेदन का अंतिम प्रलेख प्रारूप बाईंडिंग करना।

शोध प्रलेखन की तकनिक

शोध कार्य पूर्ण होने के बाद उसके प्रतिवेदन टंकन के समय कुछ तकनिकी बातें ध्यान मे लेनी पडती हैः

1) कागज की साईज A4 (210 x 297 m.m.) होनी चाहिए।
2) बॉर्डर : कागज की बायी तरफ 4 सें.मी. तथा बाकी तिनों बाजू में प्रत्येकी 2 सें.मी. का अंतर छोडना चाहिए। परंतु कागज के दूसरे बाजू के पृष्ठ क्रमांक सम संख्या में होते हैं; उसपर दायी तरफ 4 सें.मी. तथा बाकी तिनों बाजू में प्रत्येकी 2 सें.मी. का अंतर छोडना चाहिए।

3) पुराने किस्म की टाईपिग मशिन से कागज के एक ही बाजू पर टाईप किया जाता था परंतु अब कंप्युटर का टाईपिग दोनों बाजू पर करने मे कोई आपत्ती नही होनी चहिए। तथापि संबंधित संस्था के निर्देश या नियमानुसार टाईपिग किया जाना चाहिए।

4) मुखपृष्ठ : मुखपृष्ठ का टायपिंग करते समय सबसे उपर शीर्ष स्थान पर केवल अपने शोध समस्या का शीर्षक ही होना चाहिए उसका आकार अनुरूप होना चाहिए शीर्षक यदि अंग्रेजी में हो तो 'टाईम्स का फॉन्ट' 20 या 22 का बोल्ड साईज होना चहिए तथा हिंदी या मराठी के नागरी लिपी का फॉन्ट' 24 से 28 का बोल्ड साईज होना चहिए। उसके निचे शोधकर्ता का नाम, मार्गदर्शक का नाम, संस्था का नाम एवं सादर करने का वर्ष होना चाहिए। अर्थात उन सबका 'फॉन्ट शीर्षक से छोटा' ही होना चाहिए।

5) शीर्षक : सभी अध्याय के शीर्षक अपने शोध समस्या के शीर्षक से दो पॉईंट से छोटे तथा उसके उपशीर्षक उनसे भी दो पॉईंट छोटे होने चाहिए।

6) प्रतिज्ञा पत्र : शोध प्रलेख के प्रारंभिक विभाग मे शोधकर्ता को एक प्रतिज्ञा पत्र भी देना पडता है; जिसमें "प्रस्तुत शोध प्रलेख का कार्य मेरा अपना है तथा इसमें जो कुछ भी लिखा है वह मेरा मौलिक कार्य है।" यह लिखा होता है। यह एक प्रकार का घोषणा पत्र होता है। इस घोषणा पत्र का एक अहं मूल्य होता है। क्योंकि शोध कार्य की मौलिकता इसी पर निर्भर होती है।

7) आज टाईपिग करने के लिए कंप्युटर का उपयोग किया जाता है, जिसमें हर प्रकार की सुविधा उपलब्ध होती है। हर तरह की आकृतियां, आलेख, सारणीयां मन चाहे रंगो में बना सकते है। अधिकांश शोधकर्ता इस सुविधा का भरपूर लाभ उठाते हुए शोध प्रलेख को विभिन्न रंगो से भर देते है। परंतु शोध अध्ययन का दर्जा (quality) बनाए रखे बिना इस प्रकार के सजावट का कोई अर्थ नहीं होता।

8) सॉफ्टवेअर : कंप्युटर पर टाईपिग करने के लिए अनेक प्रकार के सॉफ्टवेअर उपलब्ध है। उसमे एम एस ऑफिस (एमएस वर्ड/एमएस एक्सेल) का उपयोग सबसे अधिक होता है। अधिक यथार्थ एवं अचूक काम ॲडॉब पेज मेकर का होता है। परंतु इस सॉफ्टवेअर का अभ्यास बहुत कम लोगों को होता है। इसलिए एमएस वर्ड अधिक प्रचलित है। अन्य सॉफ्टवेअर ज्ञात हो, तो उनका भी आवश्यकतानुसार उपयोग किया जा सकता है।

शोध प्रलेखन का स्वरूप

संपूर्ण शोध कार्य पूर्ण होने के बाद उसका प्रतिवेदन तैयार किया जाता है। उसे शोध प्रलेख (research report / thesis) कहते है। इससे शोध प्रलेख का लेखन एक महत्व पूर्ण कार्य है। शोध प्रलेख का लेखन करना शोध कार्य का अंतिम चरण होता है। शोध कार्य में शोधकर्ता ने जो अध्ययन किया, जो निष्कर्ष प्राप्त किए उसका अन्य लोगों को ज्ञान तभी हो सकता है, जब उसका निवेदन किया गया हो। अनुसंधान का मुख्य उद्देश तभी सफल होता है। इससे अन्य शोधकर्ताओं को आगे शोध कार्य करने मे दिशा मिलती है। शोध कार्य का प्रतिवेदन लिखते समय उसमें कौन से मुद्दें समाविष्ट करने चाहिए तथा उसका लेखन कैसे करना चाहिए यह दो प्रश्न सामने आते है। इसलिए इसका स्पष्टीकरण इस अध्याय में दिया जा रहा है।

वास्तव मे शोध प्रलेख का स्वरूप उसकी समस्या तथा शोध प्रकार के अनुसार शोध प्रलेख का स्वरूप निर्भर होता है। संपूर्ण शोध प्रतिवेदन मे कितने और कौनसे अध्याय होने चाहिए, इसमें अनेक प्रकार की मत भिन्नता है। यह ध्यान में लेते हुए इस अध्याय में शोध प्रलेख का वर्णन किया जाता है। शोध प्रतिवेदन मे शोध प्रलेख के तीन भाग किए जाते हैं। जो निम्न लिखित रूप में स्पष्ट किया जाता है।

1) प्रारंभिक विभाग (preliminary section)

2) प्रमुख विभाग (main text section)

3) अंतिम/परिशिष्ट विभाग (preliminary section)

शोध प्रलेख के विभाग

प्रारंभिक विभाग	प्रमुख विभाग	अंतिम विभाग
मुखपृष्ठ	अध्याय	संदर्भ ग्रंथ सूची
प्रमाण पत्र	पृष्ठभूमी	परिशिष्ट
प्रतिज्ञा पत्र	अवलोकन	...
ऋणनिर्देश	कार्यपद्धति	...
अनुक्रमणिका	प्रयोग अभिकल्प	...

सारणी सूची	प्रदत्त विश्लेषण,	...
आलेख सूची	अन्वयार्थ,	...
...	निष्कर्ष,	...
...	सारांश, शिफारिशें	...

(आ.क्र. 14 शोध प्रलेख के विभाग)

शोध प्रतिवेदन के प्रारंभिक विभाग मे शोध समस्या के शिर्षक का मुख पृष्ठ, मार्गदर्शक का प्रमाण पत्र, शोधकर्ता का घोषणा पत्र/प्रतिज्ञा पत्र, ऋणनिर्देश, अनुक्रमणिका, सारणी तथा आलेख सूची आदि का समावेश होता है।

शोध प्रतिवेदन के दूसरे विभाग मे शोध प्रलेख का मुख्य भाग होता है जिसमें कम से कम पांच अथवा छह अध्याय होते हैं। कुछ शोधकर्ता अपने शोध प्रतिवेदन मे इससे भी अधिक अध्याय बनाते है। ऐसे शोध प्रलेख मे अध्याय संख्या के बारे मे कोई तार्किक आधार नहीं होता। परंतु एक तर्क यहां ऐसा दिया जा सकता है कि; शोध अध्ययन के एक एक उद्देश को लेकर एक एक स्वतंत्र अध्याय बनाया जा सकता है। उसके अलावा अन्य अनुषंगिक जानकारी से संबंधित आवश्यकतानुसार अध्याय संख्या निर्धारित की जाती है। यह निर्णय शोधकर्ता को स्वयं लेना है। इसका संपूर्ण विवरण शोध प्रलेख के निम्न लिखित प्रारूप मे दिया गया है।

शोध प्रतिवेदन के तिसरे एवं अंतिम विभाग मे परिशिष्ट (appendices), संदर्भ सूची (list of references), तथा अन्य साहित्य आदि जो शोध कार्य से संबंधित होने के बावजूद भी उनका कही उल्लेख नहीं आ पाया, उस संपूर्ण साहित्य को इस विभाग मे दे सकते है।

शोध प्रलेख का सर्वसमावेशक प्रारूप

शोध समस्या और उसके प्रकार पर ही निर्धारित किया जाता है। यहां शोध रूपरेखा का एक सर्व समावेशक एवं परिपूर्ण प्रारूप दिया जाता है जिसमें पृष्ठ क्रमांक काल्पनिक है। अंतिम अध्याय, जिसका शीर्षक सारांश होता है, उसे अलग से भी प्रस्तुत किया जा सकता है। परंतु यह उस संस्था पर निर्भर करता जिसे वह प्रस्तुत करना होता है। यदी अपना शोध प्रलेख अपनी मातृभाषा मे अथवा प्रादेशिक भाषा में हो और संबंधित संस्था चाहे तो इस सारांश का अंग्रज़ी अनुवाद भी अलग से प्रस्तुत करना पडता है। अतः

शोधकर्ता अपने शोध समस्या का स्वरूप एवं प्रकार को ध्याने लेते हुए तथा संबंधित संस्था के नियमों के अनुरूप या आवश्यकतानुसार इस प्रारूप में परिवर्तन कर सकता है।

Format of Research Report

अनुक्रमणिका (Contents)

प्रारंभिक विभाग

मुखपृष्ठ (Cover page)…………………………………………………………… ...

मार्गदर्शक प्रमाण पत्र…………………………………………………………… **एक**

(Certificate from guide)……………………………………………………………(i)

प्रतिज्ञा पत्र…………………………………………………………… **दोन**

(Student's declearation)…………………………………………………………… (ii)

ऋणनिर्देश…………………………………………………………… **तीन**

(Acknowledgement)…………………………………………………………… (iii)

मुख्य विभाग

प्र.क्र. प्रकरण पृ.क्र.

1.0 शोध समस्या की पृष्ठभूमी Background of research problem…………………… 1

1.1 प्रस्तावना (संकल्पना/अर्थ/व्याख्या, उद्गम, विकास/बदल/ सुधारणा, सद्यस्थिती/समस्या की तिव्रता) Introduction…………………… 2

1.2 शोध कार्य की आवश्यकता एवं महत्व/Need & importance/rational of………… 4

1.3 शोध समस्या का विधान/Statement of research problem…………………… 9

1.4 कार्यात्मक व्याख्या/Operational Definitions of imp. terms…………………… 9

1.5 शोध कार्य के उद्देश (Objectives of the Research) …………………… 11

1.6 शोधन परिकल्पना / Research Hypotheses (if any...) …………………… 12

1.7 शोध अध्ययन के चर /Variables (if any...) ……………………13

1.9 पूर्वमान्यताएँ /Assumptions (if any...)……………………

1.10 व्याप्ती एवं परिसीमाएं (Scope & Delimitations of the Study)…………………… 15

2.0 संबंधित साहित्य एवं पूर्व शोध का अवलोकन (Review of related Studies)….. 17

2.1 प्रास्ताविक (अर्थ, आवश्यकता, संदर्भ स्रोत)(Introductory)…………………… 18

2.2 पी एच डी स्तर का अवलोकन (Review of the researches at Ph.D. level)……...19

2.3 एम फिल स्तर का अवलोकन (Review of the researches at M.Phil. level).........26

2.4 स्नातकोत्तर स्तर का अवलोकन (Review of the researches at P.G. level)…..…37
2.5 विदेश के शोध का अवलोकन (Review in abroad)…………….........…..... 45
2.6 शोध प्रकल्पों का अवलोकन (Review of the research projects)…...............… 49
2.7 अन्य साहित्य का अवलोकन (Review of the related Literature)……........... 56
2.8 प्रस्तुत शोध समस्या की भिन्नता (Uniqueness of the present study)….............…59

3.0 शोध पद्धति एवं कार्यवाही (Methodology & Procedure of...)…..............….... 62
3.1 प्रास्ताविक (संशोधन प्रकार, अर्थ) / Research Type (Introductory)…........…....63
3.2 संशोधन पद्धति (अर्थ, प्रकार, वर्णन) / Research Method)..…......................….. 64
3.3 जनसंख्या व न्यादर्श (जनसंख्या प्रकार, न्यादर्श संख्या एवं चयन पद्धति) (Population, Sample & sampling methods (if any)…....……….. 65
3.4 संशोधन उपकरण (प्रकार, चयन पद्धति) (Data Collection Tools (if any)…......67
3.5 प्रदत्त सामग्री संकलन (प्रत्यक्ष कार्यवाही व समस्याएं) (Data collection, difficulties and analysis)….. 69
3.6 विश्लेषण पद्धति /सांख्यिकीय तंत्र) (Techniques of Data analysis)…............70

4.0 प्रायोगिक संशोधन अभिकल्प (Experimental Research Design)……………..... 72
4.1 प्रायोगिक अभिकल्प (अर्थ, आवश्यकता, प्रकार, घटक एवं रचना)…..……….. 72
4.2 प्रयोग की पूर्व तैयारी/सहभागी घटक (Preperation of experiment)..................74
4.3 प्रयोग की प्रत्यक्ष कार्यवाही (execution of experiment)……...............................75

5.0 प्रदत्त वर्गीकरण, विश्लेषण एवं अर्थनिर्वचन (Data analysis, interpretation)........79
5.1 परिचय (प्रस्तुतिकरण/व्यवस्थापन/रचना/अनुक्रम)(Introductory)…..…....... 80
5.2 प्रथम शोध उद्देश के प्रदत्त का स्पष्टीकरण (Title of 1st object)…..…........... 81
5.3 द्वितीय शोध उद्देश के प्रदत्त का स्पष्टीकरण (Title of 1st object)..……........ 95
5.4 तृतीय शोध उद्देश के प्रदत्त का स्पष्टीकरण (Title of 1st object)..……........ 95
5.5 अन्य प्रदत्त विश्लेषण (if any...)…………………...……………….……........ 115
5.6 परीकल्पनाओं का परीक्षण (Testing of hypotheses, if any...)………….……….....117
5.7 अन्य

6.0 सारांश, निष्कर्ष एवं सुझाव (Summary, conclusions & suggestions) 136
6.1 प्रस्तावना (शोध समस्या का चयन, महत्व) (Introduction) ……….…...…..... 137
6.2 शोध के उद्देश (objectives of the research)……………….………................ 138
6.3 शोध परिकल्पनाएं (Research hypotheses, if any ...)…....…..………….......... 139
6.4 पूर्वमान्यताएं (Assumptions, if any...) …..………………………………........... 140

6.5 **शोध कार्य की परिसीमा** (Delimitations of the study)…..……..……..............141
6.6 **शोध पद्धति** (Research Method)…..…………........………………….…....... 142
6.7 **न्यादर्शन पद्धति** (sample selection method)………………………………......... 142
6.8 **शोध उपकरण** (Tools of Data collection)…..…..……………...........………..143
6.9 **विश्लेषण पद्धति** (Technique of Data analysis)……….................………… 144
6.10 **शोध के प्रमुख निष्कर्ष** (Major conclusions of the study)………..................... 144
6.11 **उपाय/सुधार हेतु सुझाव** (Remedies/Suggestions to improvement)........ 156
6.12 **आगामी शोध के लिए सूझाव** (Suggestions for further research study).......... 159

अंतिम विभाग

परिशिष्ट (Appendices)…………………..…………………………………….163
अ. प्रश्नावली (Questionnire)…..…..…………………………………………164
ब. साक्षात्कार प्रश्न (Interview Schedule)…..…..………………...……………....167
क. पड़ताल सूची (Check List)…..…..…………...……………….............…… 167
ड. अन्य उपकरण (other tools, if any)…...………………...............................167
संदर्भ सूची (List of References)…..…..……………………………………..…….170
सारणीयां (Tables), **आकृतियां, आलेख सूची** (List of Graphs, figures, illustrations etc.) …………………………….…….……………….….175

प्रदत्त सामग्री संकलन के उपकरण

शोधकर्ता को अपने शोध के उद्देशपुर्ति के लिए जिस प्रकार की सामग्री आवश्यक होती है उसके दो प्रकार होते है:

(1) **वर्णनात्मक सामग्री** (discription data)

(2) **संख्यात्मक सामग्री** (statistical data)

वर्णनात्मक सामग्री का संकलन तो विभिन्न संदर्भ पुस्तके, संग्रहालय आदि स्रोतों से किया जा सकता हैं, परंतु संख्यात्मक सामग्री का संकलन विभिन्न उपकरणों से करना पडता है। इन उपकरणों को सामग्री का संकलन की विधियां भी कहते है। सामग्री संकलन के उपकरणों का वर्गीकरण भिन्न–भिन्न उद्देशों से किया जाता है। प्रदत्त सामग्री के स्वनिर्मित/अप्रमाणित/व्यक्तिनिष्ठ उपकरणों और पूर्वनिर्मित/वस्तुनिष्ठ/प्रमाणित उपकरणों के विभिन्न प्रकारों का वर्णन निम्न लिखित है:

(क) उपकरण निर्मिती प्रक्रिया के अनुसार किया गया वर्गीकरण

(ख) प्रदत्त सामग्री के स्वरूपानुसार किया गया वर्गीकरण

(ग) शोध विधियों के अनुसार किया गया वर्गीकरण

उपकरण निर्मिती की प्रक्रिया के अनुसार किया जाने वाला वर्गीकरण निम्न दो भागों मे किया जाता है।

(1) स्वनिर्मित उपकरण (self made tool) और

(2) पूर्वनिर्मित उपकरण (ready made tool)

स्वनिर्मित उपकरण (self made tools)

स्वनिर्मित उपकरण शोधकर्ता का स्वयं ही तैयार करना पडता है। इसलिए उसे स्वनिर्मित उपकरण कहते हैं। इस उपकरण का प्रमाणीकरण (stsndardization) नहीं किया जाता इसलिए इसको अप्रमाणित (non stsndardized) उपकरण भी कहा जाता है। यह उपकरण अप्रमाणित होने के कारण इस की वैधता एवं विश्वसनियता का परीक्षण किया जाना चाहिए इस प्रकार के उपकरणों मे व्यक्तिनिष्ठता का प्रभाव होने के कारण इन उपकरणों को व्यक्तिनिष्ठ (subjective Tools) उपकरण भी कहते हैं। स्वनिर्मित उपकरण का वर्गीकृत वर्णन निम्न लिखित है।

(1) स्वनिर्मित उपकरण (self made tool)
(1.1) प्रश्नावली (questionaire) (1.2) साक्षात्कार अनुसूची (Interview Schedule)
(1.3) पदक्रम निर्धारण (Rating Scale) (1.4) अवलोकन सारणी (Observation Chart)
(1.5) समाजमिती तकनिक (sociometirc technique)

प्रश्नावली (questionnaire)

शोध कार्य में प्रश्नावली प्रदत्त सामग्री संकलीत करने का एक बहुप्रचलित एवं अत्यंत लोकप्रिय साधन है। सामाजिक क्षेत्र का अध्ययन करने हेतू प्रश्नावली एक महत्वपूर्ण साधन है। शोध कार्य के जितने उद्देशों की पुर्ति प्रश्नावली की सहायता से की जा सकती है उतने उद्देशों से संबंधित प्रश्नों की संख्या होती है तथा उन सभी प्रश्नों की एक सूसंगत एवं क्रमबध्द सूची तैयार की जाती है। शोध कार्य के सभी अथवा कुछ उद्देशों को ध्यान मे लेते हुए बनाए गए प्रश्नों से आवश्यक जानकारी प्राप्त की जाती है। यह एक प्रकार की प्रश्न माला होती है। प्रतिदर्श मे चुने गए उत्तरदाता को यह प्रश्नावली देकर उनसे उत्तर लिखवाए जाते है कभी–कभी डाक के माध्यम से भी प्रश्नावली द्वारा सामग्री का संकलन किया जाता है। शोधकर्ता लगाकर प्रश्नावली के साथ अपना पता लिखा हुआ

और डाक टिकट लगा हुआ एक लिफाफा भी उत्तरदाता को भेज देता है। परंतु इसमें प्रश्नावली की वापसी की संभावना बहुत ही कम होती है। शोध कार्य का महत्व ज्ञात न होने के कारण उत्तरदाता इसे गंभिरता से नहीं लेते। मुश्किल से 40 या 50 प्रतिशत प्रश्नावली की कॉपियां वापस आ सकती है। अतः शोधकर्ता को यह बात ध्यान में रखते हुए प्रश्नावली का प्रिंटिग करते समय पर्याप्त मात्रा मे उसकी प्रतियां छपवानी चाहिए आज–कल कंप्युटर के माध्यम से इंटरनेट/ई मेल द्वारा ही प्रदत्त संकलन करना अत्यंत सरल एवं आसान हो गया है। घर बैठे ही देश विदेश से प्रदत्त संकलन किया जा सकता है। प्रश्नावली का अर्थ स्पष्ट करने के लिए कुछ विद्वानों ने इसे परिभाषित किया है। प्रश्नावली की कुछ परिभाषाएं निम्नलिखित हैं:

गुडे एवं हॅट ने प्रश्नावली को परिभाषित करते हुए कहते हैं कि *("In general the word questionnaire refferes to a device for securing answere to questions by using a form which the respondant fills in himself." Goode & Hatt, 'Methods in Socil Research').*

बोगार्डस एवं लुंडबर्ग के समाजशास्त्र मे अनुसंधान के मतानुसार प्रश्नावली अनेक व्यक्तियों द्वारा उत्तर प्राप्त करने के लिए प्रश्नों की एक सूची होती है। *("A questionaire is a list of questions to a number of persons for them to answer." -Bogardus & Lundberg)*

जे. डी. पोप के मतानुसार 'एक प्रश्नावली को प्रश्नों के एक समूह के रूप मे परिभाषित किया जा सकता है, जिसके द्वारा उत्तरदाता व्यक्तिगत रूप से शोधकर्ता या प्रगणक की सहायता लिए बिना ही जानकारी देता है। *("A questionnaire may be defined as a set of questions to be answered by the informants without the personal aid of an investigator or enumerator." J. D. Pope 'Research Method & Procedure in Agriculture Economics')*

'शोध उद्देश साध्य करने हेतु आवश्यक प्रदत्त संकलित करने के लिए बनाई गई प्रश्नों की एवं विधानों की अथवा दोनों से मिश्रित एक क्रमबद्ध सूची को प्रश्नावली कहते है।'

इस परिभाषा से यह प्रतित होता है कि; प्रश्नावली में केवल प्रश्न ही नहीं, बल्कि विधान भी हो सकते है तथा सर्वेक्षण विधि में प्रश्नावली का उपयोग अत्यंत महत्त्वपूर्ण होता है। प्रश्नावली का उपयोग साक्षात्कार में भी होता है। परंतु साक्षात्कार के प्रश्नावली का स्वरूप कुछ भिन्न होता है इन दोनों प्रकारों का उपयोग विकल्प में भी हो सकता है

या पुरक भी हो सकता है। इससे यह प्रतित होता है कि प्रश्नावली के कुछ प्रकार भी होने चाहिए जो निम्नानुसार होते है।

प्रश्नावली के प्रकार :

सामाजिक क्षेत्र की समस्याओं के अध्ययन मे पाई जाने वाली जटिलताओं को ध्यान में लेते हुए प्रश्नावली की भिन्न–भिन्न प्रकार से रचना करनी पडती है। उसके अनुसार प्रश्नावली के प्रकार बताए जाते हैं।

(1) तथ्य संबंधी प्रश्नावली (Fact based questionnaire) : लुंडबर्ग के मतानुसार सामाजिक क्षेत्र की समस्याओं के तत्थ्य संबंधी जानकारी प्राप्त करने के लिए जिस प्रश्नावली का उपयोग किया जाता है उसे तथ्य संबंधी प्रश्नावली कहते हैं।

(2) मत संबंधी प्रश्नावली (Opinion based questionnaire) : सामाजिक शास्त्र में व्यक्तिगत अथवा समूहों के मनोवृत्ती का अध्ययन करने के लिए अथवा लोगों की राय जानने के लिए जिस प्रश्नावली का उपयोग किया जाता है, उसे तथ्य संबंधी प्रश्नावली कहते है।

(3) संरचित प्रश्नावली (Stuctured questionnaire) : पी. वी. यंग के मतानुसार जिस प्रश्नावली की संरचना प्रदत्त संकलन करने से पहले ही तैयार की जाती है, उसे संरचित प्रश्नावली कहते हैं। इस मे पूर्वरचित प्रश्नों द्वारा ही जानकारी प्राप्त की जाती है। बाद में को इसमें कोई परिवर्तन नहीं किया जाता। इस प्रश्नावली मे पूर्व निर्धारित, निश्चित एवं ठोस प्रश्न होते है। सर्वेक्षण के दौरान उनमें कोई परिवर्तन करने की अनुमती नहीं होती। फिर भी कभी–कभी अस्पष्ट या अपर्याप्त उत्तर मिला तो ऐसे समय पूर्व निर्धारित प्रश्नों के अलावा कुछ सीमित प्रश्न भी पुछने की सुविधा हो सकती है। ऐसे प्रश्नों को बाद में प्रश्नावली मे सम्मिलित किया जाता है।

(4) असंरचित प्रश्नावली (Non-stuctured questionnaire) : इस प्रश्नावली में प्रश्नों का निर्धारण पहले से नहीं किया जाता है। इसमे शोधकर्ता को प्रश्न पुछने की काफ़ी स्वतंत्रता होती है। असंरचित प्रश्नावली मे निश्चित विषय और निश्चित प्रतिदर्श होने के बावजूद भी प्रश्नों का स्वरूप और उनका निश्चित अनुक्रम नहीं होता है। इस तरह की प्रश्नावली का प्रयोग सीमित अध्ययन के लिए किया जा सकता है। इस लिए इस प्रकार की प्रश्नावली का उपयोग साक्षात्कार में ही किया जाना चाहिए इस प्रकार के संरचित एवं असंरचित प्रश्नावली का उल्लेख पी. वी. यंग ने बंद एवं खुले या मुक्त प्रश्नों के आधार

पर किया है। संरचित प्रश्नावली मे अधिकतर बंदिस्त प्रश्न तथा असंरचित प्रश्नावली मे खुले या मुक्त का प्रश्नों का अंतर्भाव होता है।

(5) बंदिस्त प्रश्नावली (Closed questionnaire) : जिसमें प्रश्नों का उत्तर निश्चित होता है तथा इसम संभावित उत्तर भी दिए जाते हैं, उसे बंदिस्त प्रश्नावली कहते हैं। पहले से दिए गए संभावित मौजूद प्रश्नों के अलावा उत्तरदाता को अपने मन से उत्तर देने की सुविधा या स्वतंत्रता इस प्रश्नावली मे नहीं होती है। दिए गए उत्तरों से ही विकल्प का चयन करना पडता है। शोधकर्ता को संकलित सामगी का वर्गीकरण, सारणीयन तथा विश्लेषण करने मे काफ़ी सुविधा होती है। क्योंकि इसमें बहु–विकल्प वाले प्रश्न (Multiple Choice Questions) होते है। इसमें हां/नही अथवा सहमत/असहमत जैसे विकल्पों के प्रश्न होते हैं। ऐसे प्रश्न अधिकतर संरचित प्रश्नावली में पूछे जाते हैं। वास्तविक यह प्रश्नावली का प्रकार मानने के बजाय यह प्रश्न का प्रकार है; इसलिए इस प्रकार के प्रश्नों की प्रश्नावली को बंदिस्त प्रश्नावली कहते हैं। इस प्रश्नावली से कम–से–कम समय, परिश्रम तथा खर्चे में अधिकतम प्रदत्त सामग्री का संकलन किया जा सकता है। ऐसे प्रश्न अधिकतर असंरचित प्रश्नावली में पूछे जाते हैं।

(6) खुली प्रश्नावली (Open questionnaire) : इस प्रश्नावली को भी प्रश्न प्रकार से ही पहचाना जा सकता है। इस प्रश्नावली के प्रश्नों का स्वरूप मुक्त होता है। इस प्रश्नावली मे प्रश्नों के उत्तर पूर्व निर्धारित नहीं होते हैं। इसमें प्रश्नों का स्वरूप और उनका निश्चित अनुक्रम होने की आवश्यकता नहीं होती है। इसलिए इस प्रकार के प्रश्नों के प्रश्नावली को खुली या मुक्त प्रश्नावली कहते हैं। इसमें शोधकर्ता को प्रश्न पूछने की स्वतंत्रता होती है तथा उत्तरदाता खुले मन से उत्तर देता है। इसलिए इस प्रकार की प्रश्नावली का उपयोग अधिकतर साक्षात्कार मे किया जाना चाहिए इस प्रकार खुले या मुक्त प्रश्नों के आधार पर असंरचित प्रश्नावली की रचना की जा सकती है। इससे यह कह सकते है की खुली या मुक्त प्रश्नावली असंरचित प्रश्नावली के समान होती है।

(7) चित्ररूप प्रश्नावली (Pictorial questionnaire) : इस प्रश्नावली मे प्रश्नों के संभावित उत्तर चित्र रूप होते है। जब किसी प्रतिदर्श मे उत्तरदाता बच्चे, अल्प शिक्षित या अत्यल्प शिक्षित होते है, तब उनके लिए ऐसी प्रश्नावली का अच्छा उपयोग होता है। सुशिक्षित उत्तरदाताओं के लिए भी यह प्रश्नावली उपयुक्त होती है। वैसे भी आज कल उत्तरदाता के पास समय नहीं होता कि; लंबी–चौडी प्रश्नावली पढकर प्रश्नों के उत्तर दें। परंतु वह चित्रों को देख कर तुरंत उसके उत्तर दे सकता है। इस प्रश्नावली मे प्रश्नों को बहुत सरलता से चित्रित रूप में प्रस्तुत किया जाता है। उदाहरण के लिए आपकी दैनिक

आमदानी कितनी है? इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए रूपयों के नोट के चित्रों का विकल्प दिया जाता है। उन चित्रों को देख कर उत्तरदाता अपना उत्तर चुन सकता है। हर किसी को इस तरह चित्र की भाषा कम–से–कम समय में समझने मे आसानी होती है। इससे प्रश्नावली में नवीनता तथा आकर्षकता निर्माण कर उत्तरदाता से आसानी से जानकारी प्राप्त कर सकता है।

(8) मिश्र प्रश्नावली (Mixed questionnaire) : उपर्युक्त सभी प्रकार प्रश्नों से दो या कुछ प्रकार के प्रश्नों का एकत्रित उपयोग जिस प्रश्नावली मे किया जाता है, उस प्रश्नावली को मिश्र प्रश्नावली कहते है। जब किसी सामाजिक क्षेत्र की समस्या का विभिन्न पहलूओं का अध्ययन करना हो और विभिन्न प्रकार के तथ्यों को जानना हो तब किसी एक प्रकार के प्रश्नों से यह संभव नही होता। ऐसी स्थिती मे मिश्र प्रश्नावली का उपयोग होता है। कुछ सामाजिक समस्या के तथ्य का स्वरूप जटिल होता है। ऐसी समस्या का व्यापक एवं गहन अध्ययन करने के लिए मिश्र प्रश्नावली एक उपयुक्त साधन है।

प्रश्नावली निर्माण की आवश्यक प्रक्रिया :

किसी भी प्रकार की प्रश्नावली तैयार करने मे अत्यंत सावधानी बरतनी चाहिए तथा उसकी विधि एवं प्रक्रिया उचित होनी चाहिए, ताकि शोध अध्ययन के उद्देश सफल होने मे वह उपयोगी सिद्ध हो सके। उत्तरदाता विभिन्न प्रकार के एवं विभिन्न स्तर के होते है। उन सब को प्रश्नावली के प्रश्न समझने में और बिना किसी की सहायता से उत्तर देने में आसानी हो सके, यह बात प्रश्नावली तैयार करते समय ध्यान रखनी चाहिए अतः प्रश्नावली तैयार करते समय निम्न बातों को समक्ष रखते हुए उसकी रचना की जाती है।

(1) शोध अध्ययन के उद्देश : प्रश्नावली का निर्माण करते समय अपने शोध अध्ययन के उद्देश हमेशा याद रखने चाहिए प्रत्येक उद्देश को लेकर आवश्यक सामग्री कैसे प्राप्त की जा सकती है? इसका सूक्ष्म विचार करना चाहिए अर्थात प्रत्येक प्रश्न शोध अध्ययन के उद्देश से ही संबंधित होना चाहिए।

(2) प्रश्नों का स्वरूप एवं उपयुक्तता : प्रश्नावली का निर्माण करते समय प्रश्नों का स्वरूप एवं उपयुक्तता ध्यान मे रखनी चहिए।

(3) प्रश्नावली का आकार : वास्तव में प्रश्नावली में प्रश्नों की संख्या कितनी होनी चाहिए, इसका कोई विशेष नियम नहीं होना चाहिए परंतु प्रत्येक शोध अध्ययन के प्रत्येक उद्देश को लेकर आवश्यक प्रदत्त सामग्री पर्याप्त मात्रा मे प्राप्त हो सके इतनी संख्या अवश्य होनी चाहिए इस पर ही प्रश्नावली का आकार निर्भर होता है।

(4) पूर्व शोध प्रलेख का अवलोकन : कोई भी शोध कार्य के प्रारंभ मे अपने शोध क्षेत्र से संबंधित पूर्व शोध प्रलेख का अवलोकन किया जाता है। संबंधित पूर्व शोध प्रलेख का अवलोकन करते समय उसमें जिस प्रश्नावली का उपयोग किया हो उसका सूक्ष्म अध्ययन कर उसमें से अपने शोध अध्ययन के प्रत्येक उद्देश से संबंधित प्रश्नों का सूक्ष्म अवलोकन करते हुए प्रश्नों का चयन करना चाहिए परंतु याद रहे कि उस प्रश्नावली की नकल करने का प्रयास न करें। ध्यान रहे कि यहां केवल पूर्व प्रश्नावली का आधार लेने का सुझाव दिया जा रहा है; नकल करने का नहीं।

(5) प्रश्नावली की भाषा : प्रश्नावली के प्रत्येक प्रश्न की भाषा सुस्पष्ट एवं सुलभ होना चाहिए, जिससे उत्तरदाताओं को इसे समझने में आसानी हो।

(6) अनुसंधान के सभी उद्देशों से संबंधित संपूर्ण आवश्यक जानकारी है, प्राप्त हो।

(7) पूर्व अनुसंधान के उद्देश और अपने शोध अध्ययन के उद्देश की तुलना करते हुए प्रश्नों का चयन या निर्माण करना चाहिए।

(8) प्रश्नों का अनुक्रम : प्रश्नावली के प्रश्नों का अनुक्रम उचित और सुसंगत हो।

(9) प्रश्नों का स्वरूप : प्रश्नावली से संकलीत किए गए प्रदत्त का सारणीकरण एवं विश्लेषण करने में आसानी हो।

(10) पथदर्शी परीक्षण : अपने शोध कार्य के उद्देशों के अनुरूप प्रश्नावली का प्रथम प्रारूप तैयार होने के बाद उसका पथदर्शी परीक्षण (Pilot Test) करना चाहिए अर्थात जिसके लिए प्रश्नावली बनाई गई हो उनमें से कुछ 30–50 प्रतिदर्श से भरवाकर प्रश्नावली की अचूकता का परीक्षण करना चाहिए पथदर्शी परीक्षण का यहां अच्छा उपयोग हो सकता है।

(11) उत्तरदाता की जिज्ञासा : प्रश्नावली के प्रश्नों के उत्तर देते समय उत्तरदाता में जिज्ञासा निर्माण हो तथा सभी प्रश्नों के उत्तर पूर्ण होने तक जिज्ञासा कायम रहे।

(12) प्रश्नावली मे आवश्यक सभी सूचनाएं दी जानी चाहिए।

प्रश्नावली की वैधता एवं विश्वसनियता :

प्रश्नावली की तथा उसके प्रत्येक प्रश्न की वैधता तीन प्रकार की होती है।

(1) दर्शनी वैधता (Face Validity)

(2) अंतर्गत/विषय वस्तु वैधता (Internal / Content Validity)

(3) पूर्वकथित वैधता (Predictive Validity)

वैधता (Validity) :

वैधता के परीक्षण में पहले दोनों प्रकार की वैधता ज्ञात करना आवश्यक होता है। अपने शोध उद्देश से संबंधित सभी पहलुओं पर उचित एवं पर्याप्त संख्या में प्रश्न पूछे गए है अथवा नही तथा उनका अनुक्रम सुसंगत है अथवा नही यह जानने के लिए संबंधित क्षेत्र के विशेषज्ञों की सहायता लेनी चाहिए लेकिन ध्यान रहे कि विशेषज्ञों का चयन भी सही होना चाहिए और जहां तक संभव हो प्रश्नावली की पूर्वकथित वैधता (Predictive Validity) भी ज्ञात करानी चाहिए यह जनमत (opinion Poll) परीक्षण तथा प्रत्यक्ष परीक्षण के परिणामों का सहसंबंध (Co-rrelation) से ज्ञात कराया जा सकता है। अगर शोध विश्लेषण अभिव्यक्त उत्तरों (Expressed answers) तक सीमित हो तो अंतर्गत/विषयवस्तु की वैधता उचित है यह निर्णय लिया जा सकता है।

विश्वसनियता (Reliability) :

प्रश्नावली की विश्वसनियता का परीक्षण करने की दो विधियां बतायी जाती है।

(1) परीक्षण एवं पुनःपरीक्षण विधि (Test & Re-test method) : पथदर्शी परीक्षण में जिस प्रकार कुछ प्रतिदर्श से प्रश्नावली भरवाकर परीक्षण किया जाता है; उसी प्रकार इस विधि में भी परीक्षण किया जाता है। कुछ समयावधी के बाद फिर उन्हीं लोगों से पुनः प्रश्नावली भरवाई जाती है। बाद में दोनों समय के परिणामों की तुलना की जाती है। इस प्रकार से किए गए परीक्षण एवं पुनःपरीक्षण से प्रश्नावली की विश्वसनियता ज्ञात की जाती है। इसे परीक्षण एवं पुनःपरीक्षण विधि कहते हैं।

(2) समानांतर विधि : इस विधि में दो अलग–अलग छोटे समूहों से प्रश्नावली भरवाकर उन दोनों समूहों के परिणामों की तुलना की जाती है। दोनों के परिणाम यदि समान पाए जाते है तो प्रश्नावली की विश्वसनियता पर्याप्त है ऐसा माना जाता है।

(ख) साक्षात्कार (Interview) :

प्रश्नावली के जैसे अनुसूची का भी एक स्वतंत्र प्रकार माना जाता है। परंतु प्रश्नावली और अनुसूची मे एक मूलभूत एवं महत्व पूर्ण अंतर यह होता है कि प्रश्नावली से कोई भी व्यक्ति प्रदत्त संग्रहण कर सकता है अनुसूची से केवल शोधकर्ता स्वयं प्रदत्त संग्रहण कर सकता है। इन दोनों के अलावा साक्षात्कार अनुसूची भी प्रदत्त संकलित करने का एक उपकरण है। सामाजिक क्षेत्र के शोध अध्ययन मे प्रश्नावली के ही समान दूसरा प्रचलित

साधन साक्षात्कार होता है। यह साधन भी प्रश्नावली या अनुसूची से मिलता–जुलता साधन होता है। इस प्रकार के मिलते–जुलते अनेक साधन उपलब्ध है। साक्षात्कार एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें अध्ययनकर्ता एवं उत्तरदाता दोनों एक दूसरें के समक्ष चर्चा करते हैं। इसलिए इस शब्द को अंग्रज़ी में Interview कहते हैं। क्योंकि Inter का अर्थ होता है भीतर और view का अर्थ होता है देखना। अर्थात भीतर या अंदर देखना। साक्षात्कार मे साक्षात्कारकर्ता जब उत्तरदाता से वार्तालाप करता तब वो उसका निरीक्षण करते हुए उसके भीतर देखने की कोशिश करता है। उत्तरदाता के अनुभव, सोच, विचार, भावना आदि के बारे मे जानने की कोशिश करता है। कुछ परिभाषा निम्नलिखित हैः

ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी के अनुसार, *"A meeting of persons face to face for the purpose of formal conference on some points"*

पी. वी. यंग के मतानुसार, 'साक्षात्कार एक ऐसी क्रमबद्ध पद्धति है कि जिसके द्वारा एक अपरिचित व्यक्ति कल्पनात्मक रूप से दूसरे व्यक्ति के आंतरिक जीवन मे कुछ समय के लिए प्रवेश करता है। *("The interview may be regarded as a systematic method by which one person enters more or less imaginatively in to the inner life of another who is generally stranger to him."- P. V. Young, Scientific Social Survey & Research)*

वी. एम. पाल्मर के मतानुसार, 'साक्षात्कार दो व्यक्ति के बीच एक सामाजिक स्थिती है जिसमें आंतरिक मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया के अंतर्गत दोनों व्यक्ति शोध उद्देश से आपस मे सहमती से वार्ता–प्रतिवार्ता करते हैं।' *(The interview constitutes a social situation between two persons involved requiring both individuals mutually respond though the social research purpose of interview calls for a very different response from the two parties concerned." - Psin Pao Yang)*

सिन पाव यंग के मतानुसा, 'साक्षात्कार एक ऐसी क्षेत्रिय तकनिक है, जो किसी व्यक्ति या समूह का निरीक्षण करने, कथनों को अंकित करने तथा सामाजिक या सामूहिक अंतःक्रिया का वास्तविक अवलोकन करने के लिए उपयुक्त होता है।' *("The interview is a technique of field work which is used to watch the behaviour of an individual /s, to record state ments, to observe the concrete results of social / group interaction." - Psin Pao Yang)*

उपर्युक्त परिभाषाओं से यह प्रतित होता है कि

- यह एक सामाजिक प्रक्रिया है तथा मनोवैज्ञानिक विधि है।
- साक्षात्कार में दो कम–से–कम दो व्यक्तियों का होना आवश्यक है।
- दोनों व्यक्ति आमने सामने उपस्थित होकर संवाद या वार्तालाप करते हैं।
- साक्षात्कार में दो से अधिक व्यक्ति भी आपस मे वार्तालाप कर सकते हैं।

साक्षात्कार के प्रकार :

साक्षात्कार के प्रकारों का वर्गीकरण विभिन्न आधार पर किया जा सकता है, जो निम्नानुसार हैः

(1) उद्देश के आधार पर साक्षात्कार के प्रकार :

निदानात्मक साक्षात्कार, उपचारात्मक साक्षात्कार, अनुसंधानात्मक साक्षात्कार

(2) प्रतिदर्शक की संख्या के आधार पर साक्षात्कार के प्रकार :

व्यक्तिगत साक्षात्कार, सामुहिक साक्षात्कार

(3) औपचारिकता के आधार पर साक्षात्कार के प्रकार :

औपचारिक साक्षात्कार, अनौपचारिक साक्षात्कार

(4) समयावधी के आधार पर साक्षात्कार के प्रकार :

दीर्घकालीन साक्षात्कार, अल्पकालीन साक्षात्कार

(5) शोध पद्धति के आधार पर साक्षात्कार के प्रकार :

निर्देशित साक्षात्कार, अनिर्देशित साक्षात्कार, मिश्रित साक्षात्कार, पुनरावृत्ती साक्षात्कार,

(6) संरचना के आधार पर साक्षात्कार के प्रकार :

संरचित साक्षात्कार, असंरचित साक्षात्कार, अर्ध संरचित साक्षात्कार

(7) आयोजन पद्धति के आधार पर साक्षात्कार के प्रकार :

पूर्व नियोजित साक्षात्कार, आकस्मिक साक्षात्कार, अर्ध संरचित साक्षात्कार

सफल साक्षात्कार के लिए आवश्यक परिस्थिती :

अपने शोध अध्ययन के उद्देश्यानुरूप उपर्युक्त किसी भी प्रकार के साक्षात्कार का चयन आवश्यकता के अनुसार किया जा सकता है। चयन किए गए किसी भी प्रकार के साक्षात्कार का हेतु सफल बनाने के लिए कुछ विशेष बातों को ध्यान मे रखना आवश्यक है। लिंडजे और ॲरोंसन्स (Lindzey & Aronson-1968) ने बताया हैं कि साक्षात्कार की सफलता निम्न तीन बातों पर निर्भर होती हैः

(1) अभिगम्यता (Accessibility) : साक्षात्कार मे पूछे गए प्रश्न ऐसे होने चाहिए की उसका उत्तर देने मे उत्तरदाता को आसानी हो। उसमे कोई झिझक या हिचकीचाहट महसूस ना हो। तथा संबंधित सूचना उपलब्ध हो सके।

(2) अभिप्रेरणा (Motivation) : साक्षात्कार को सफल बनाने के हेतु उत्तरदाता अपेक्षित सूचना देने के लिए स्वयं प्रेरित हो सके ऐसी स्थिति साक्षात्कारकर्ता द्वारा निर्माण की जानी चाहिए कभी–कभी उत्तरदाता प्रारंभ मे उत्तर देने के लिए उत्सुक होता है, परंतु धिरे–धिरे उत्सुकता कम होती जाती है। अतः उत्तरदाता और साक्षात्कारकर्ता दोनों का लक्ष्य समान है; ऐसी परिस्थिती निर्माण कर उसकी अभिप्रेरणा बनाए रखने की कोशिश करनी चाहिए।

(3) संबोध (Cognition) : उत्तरदाता से जिस सूचना की अपेक्षा की जाती है उसका उसे संज्ञान होना चहिए। साक्षात्कारकर्ता द्वारा उसे क्या पूछा जा रहा है; इसका उसे संपूर्ण एवं स्पष्ट ज्ञान होना आवश्यक है। जो सूचना आवश्यक होती है; वही उत्तरदाता को देनी है और उत्तरदाता को यदि इसका ज्ञान हो तो गलत या असत्य सूचना प्राप्त हो सकती है। कभी–कभी साक्षात्कारकर्ता को अपेक्षित सूचना के बोधात्मक ज्ञान (cognitive knowledge) का संदर्भ देकर उसे अवगत कराना पडता है।

साक्षात्कार को प्रभावित करने वाले घटक :

साक्षात्कार को प्रभावित करने वाले कारक घटक निम्न प्रकार के होते है:

(1) साक्षात्कारकर्ता के गुण :

साक्षात्कार मे सबसे अधिक महत्वपूर्ण भूमिका साक्षात्कारकर्ता की होती है। साक्षात्कारकर्ता के दो गुण बताए जाते है। व्यक्तिनिष्ठ गुण (subjective quality) और वस्तुनिष्ठ गुण (objective quality)। व्यक्तिनिष्ठ गुणों में, मनोजिज्ञासा और सांत्वना स्थापित करने की क्षमता और सामाजिक कौशल यह गुण प्रमुख है। इससे शोधकर्ता अपनी अध्ययन समस्या को उत्तरदाता के समक्ष प्रभावी ढंग से प्रस्तुत कर सकता है और उत्तरदाता भी उसको सही ढंग से सोच समझकर उत्तर दे सकता है। वस्तुनिष्ठ गुणों मे लिंग भिन्नता, जाति भिन्नता, वर्ग भिन्नता, संवाद कौशल, पोशाख आदि का समावेश होता है, जिससे साक्षात्कारकर्ता एवं उत्तरदाता में एक विशेष प्रकार का प्रासंगिक रिश्ता निर्माण होता है और इससे शाब्दिक अंतःक्रिया के लिए अनुकूल वातावरण निर्माण होता है। कभी–कभी इस प्रासंगिक रिश्ते का प्रभाव दूरगामी भी हो सकता है। इससे प्रदत्त

संकलन मे सुविधा तो मिलती है, साथ में उत्तरदाता अपने मन की बातें खुलकर सामने रखता है और अधिक विश्वसनिय एवं पर्याप्त सूचना प्राप्त होने में सहायक सिद्ध होता है।

(2) उत्तरदाता के गुण :

उत्तरदाता की श्रवणशिलता, सहनशिलता, सहयोगशिलता तथा संवादक्षमता आदि गुण उत्तरदाता में हो तो साक्षात्कार निःसंदेह सफल बनता है। प्रतिदर्शक उत्तरदाता में बच्चे, बुढ़े, जवान, स्त्री, पुरूष, ग्रामीण, शहरी आदि में से किन्ही का चयन किया जाता है। कुछ उत्तरदाता खुशी से जानकारी देते हैं तो कुछ उत्तरदाताओं को किसी तरह की जानकारी देणे में कोई रुचि नहीं होती। इससे प्रदत्त संकलन का कार्य कितना कठिण हो सकता है, इसकी कल्पना की जा सकती है।

(3) अध्ययन समस्या का स्वरूप :

उत्तरदाता से पूछे जाने वाले प्रश्न तथा समस्या का स्वरूप अपेक्षित सूचना के तथा अनुसंधान के उद्देशों से अनुरूप होना चाहिए। जब कोई जानकारीऐसी भी होती है कि उसे खुली नही की जा सकती। उसे गोपनीय रखना साक्षात्कारकर्ता की नैतिक ज़िम्मेदारी होती है। परंतु इस तरह की जानकारी उत्तरदाता भी देना नहीं चाहते। ऐसी स्थिति में आवश्यक जानकारी प्राप्त करने का कौशल साक्षात्कारकर्ता को आत्मसात कर लेना चाहिए।

(4) उपलब्ध वातावरण :

साक्षात्कार के समय उपलब्ध वातावरण अनुकूल होना चाहिए। आज–कल दूरदर्शन पर अथवा टेलिकॉन्फरंस के माध्यम से भी और साक्षात्कार लिया जाता है। अर्थात यहां साक्षात्कार को उद्देश्य के भी ध्यान में लेना जरूरी होता है। परंतु शोध अध्ययन के लिए साक्षात्कार लेना और अन्य किसी दूसरे उद्देश्य के लिए साक्षात्कार लेना भिन्न है। किसी का चयन, व्यक्ति परिचय, चिकित्सा, उपचार, प्रसिद्धि आदि साक्षात्कार के भिन्न–भिन्न उद्देश्य होते हैं। अर्थात ऐसे भिन्न भिन्न उद्देश्य से लिए जाने वाले साक्षात्कार का स्थान, समय एवं वातावरण भी भिन्न–भिन्न होता है। इसका साक्षात्कार पर प्रभाव हो सकता है। साक्षात्कार के समय किसी भी प्रकार का तणावपूर्ण आशंका पूर्ण वातावरण नहीं होना चाहिए।

साक्षात्कार अनुसूची :

साक्षात्कार के लिए भी एक प्रश्नावली तैयार की जा सकती है, जिसे साक्षात्कार अनुसूची कहते है। इस प्रश्नावली का स्वरूप भी संरचित या असंरचित होता है। प्रश्नावली और साक्षात्कार में एक मूलभूत अंतर यह है कि साक्षात्कार में निरीक्षण या अवलोकन भी किया जाता है। साक्षात्कार मे शोधकर्ता का निरीक्षण एक अच्छा कौशल साबित हो सकता है। इसी लिए साक्षात्कार लेना एक कला है ऐसा माना जाता है। परंतु साक्षात्कार में निरीक्षण का गतिरोध और निरीक्षण मे साक्षात्कार का गतिरोध आ सकता है। प्रदत्त संकलन का निरीक्षण भी एक स्वतंत्र उपकरण होता है। परंतु साक्षात्कार में प्रश्नावली और निरीक्षण दोनों का उपयोग किया जाता है। गुणात्मक साक्षात्कार के लिए अध्ययनकर्ता को नियोजनपूर्वक संपूर्ण तैयारी करनी पड़ती है। इसके लिए साक्षात्कार की प्रक्रिया समझनी होगी।

साक्षात्कार की प्रक्रिया :

अनुसंधान मे साक्षात्कार एक महत्वपूर्ण साधन माना जाता है। इससे वस्तुनिष्ठ एवं पर्याप्तजानकारी प्राप्त करने के लिए साक्षात्कार प्रक्रिया को गंभिरता से समझना आवश्यक है। साक्षात्कार प्रक्रिया मे निम्न लिखित सोपान होते हैं:

(1) साक्षात्कार की पूर्व तैयारी : साक्षात्कार को सफल बनाने के लिए उसका अच्छा नियोजन एवं पूर्व तैयारी होनी चाहिए। अनुसंधान के उद्देश तथा उसके अनुरूप प्रश्नावली का प्रकार, प्रश्नों का प्रकार, उनका अनुक्रम, आदि बातों को तथा गोपनीय और संवेदनशील सूचना का संकलन कैसे किया जा सकता है? यह ध्यान में लेते हुए प्रश्नावली का निर्माण होना चाहिए। इसे साक्षात्कार अनुसूची कहते हैं। साक्षात्कार स्वयं शोधकर्ता को या अन्य किसी व्यक्ति को लेना है, यह निर्धारित करना चाहिए। कभी–कभी उत्तरदाता यदि अनुमति दें तो साक्षात्कार का रिकॉर्डिंग भी किया जा सकता है। प्रत्यक्ष साक्षात्कार के समय आने वाली संभावित समस्याओं का भी विचार करना चाहिए तथा उसे दूर करने की योजना भी बनानी चाहिए।

(2) साक्षात्कार की कार्यवाही : उत्तरदाता के अनुमति से समय निर्धारित कर ठीक उसी समय पर पहुँचना साक्षात्कारकर्ता की ज़िम्मेदारी होती है। इससे साक्षात्कारकर्ता एवं उत्तरदाता दोनों के समय की बचत होती है। उत्तरदाता से मिलते ही उसे अभिवादन करते हुए अपना परिचय देकर और उनसे भी परिचय कर साक्षात्कार का उद्देश भी स्पष्ट कर देना चाहिए। इससे साक्षात्कार के लिए अनुकूल वातावरण निर्माण किया जा सकता है।

(3) साक्षात्कार के पश्चात कार्यवाही : सभी प्रतिदर्श के साक्षात्कार की कार्यवाही पूर्ण होने के पश्चात प्राप्त जानकारी का उपयोग शोध कार्य में किस तरह किया जाना चाहिए इसका निर्णय शोधकर्ता को साक्षात्कार के पश्चात लेना पडता है। प्राप्त जानकारी शोध अध्ययन के किस उद्देश के लिए उपयुक्त हैं, यह समझते हुए उसका वर्गीकरण और विश्लेषण करना पडता है। प्राप्त जानकारी का वर्गीकरण और विश्लेषण करने के पश्चात उसका अर्थ निर्वचन करते हुए उसके आधार पर निष्कर्ष निकाले जाते हैं। यह जानकारी सामान्यतः वर्णनात्मक होती है। अतः इसका विश्लेषण करने के लिए किसी संख्याशास्त्र के सूत्रों की आवश्यकता नहीं होती। एक बार सांख्यिकिय विश्लेषण करना आसान होता है; परंतु वर्णनात्मक जानकारी का विश्लेषण करना बहुत कठिण होता है। यहा पर शोधकर्ता का अनुभव, क्षमता एवं कौशल ही उपयुक्त सिद्ध हो सकता है। क्योंकि शाब्दिक वर्णन का स्पष्टीकरण लिखना आसान हो भी जायेगा परंतु निरीक्षण द्वारा प्राप्त की गई अशाब्दिक जानकारी का विश्लेषण और अर्थनिर्वचन किस प्रकार करना चाहिए इसका मार्गदर्शन किसी पुस्तकों मे नहीं मिलता है। इसलिए यहा पर शोधकर्ता का अनुभव, क्षमता एवं कौशल ही काम आ सकता सकता है। यह कार्य नवोदित शोधकर्ता के लिए बहुत कठिन होता है। अतः इस कार्य में दीर्घ अनुभव की और सूक्ष्म निरीक्षण क्षमता की आवश्यकता होती है।

(ग) अवलोकन (observation) : जब शोध का दूसरा कोई साधन उपलब्ध नहीं था, तब इस दूनिया मे लोग केवल निरीक्षण से ही जानकारी प्राप्त करते थे। अर्थात प्राचीन काल से ही निरीक्षण या अवलोकन को एक महत्वपूर्ण उपकरण माना जाता है। आज भी इस उपकरण का महत्व वैसे ही बरकरार है। विज्ञान के कई शोध ऐसे ही अवलोकन विधि से हुए है। उदाहरण के लिए न्युटन का गुरूत्वाकर्षण शक्ति का शोध। प्रारंभ से भौतिक विज्ञान के शोध अध्ययन मे इसी उपकरण का अधिकतम उपयोग किया जाता है।

जहोदा एवं कूक ने इस उपकरण के बारे मे कहा हैं कि 'अवलोकन केवल दैनंदिन जीवन की ही अत्यधिक व्यापक गतिविधियां नहीं, बल्कि यह वैज्ञानिक जांच का भी एक प्राथमिक आधार है। *("Observation is not only one of the most pervisive activities of the daily life; it is also a primary foot of scientific enquiry." - Jahoda & Cook, 'Research Methods in Social Relations')* इसी तरह गुडे एवं हॅट ने भी कहा है कि 'विज्ञान का प्रारंभ अवलोकन से ही होता है; और उसके सत्यापन के लिए आखिर मे उसे अवलोकन के पास ही वापस लौटना पडता है। *("Science begins with*

observation and must ultimately returns to observation for its final validation." - Goode & Hatt, 'Methods in Social Research').

समाज शास्त्र के प्रसिद्ध वैज्ञानिक ऑगस्ट कॉम्टे का भी विचार है कि 'समाजशास्त्र को विज्ञान तभी कह सकते है, जब सामाजिक घटनाओं का अवलोकन एवं उनका वर्गीकरण किया जाए; तथा भौतिक विज्ञानों में सत्यापन का परीक्षण के लिए अवलोकन को महत्व दिया जाए। किसी वैज्ञानिक के लिए तथ्य की विश्वसनियता उसकी अपनी दृष्टि से ही सिद्ध होती है। इससे यह प्रतित होता है कि निरीक्षण द्वारा प्राप्त तथ्यों को अधिक विश्वसनिय माना जाता है। परंतु यह संपूर्णतः शोधकर्ता पर निर्भर होता है, और सामाजिक क्षेत्र के शोध कार्य में व्यक्तिनिष्ठता का प्रभाव को देखते हुए यह कहां तक सिद्ध हो सकता है; यह कहना कठिन है। परंतु यह दोष अवलोकन का नही; उस शोधकर्ता का और उसकी सोच एवं दृष्टी का होता है।

अवलोकन के प्रकार :

अनेक विद्वानों ने अवलोकन के अनेक भिन्न–भिन्न प्रकार बताए हैं; जो निम्नलिखित है:

(1) व्यक्तिगत अवलोकन एवं सामुहिक अवलोकन

(2) नियंत्रित अवलोकन एवं अनियंत्रित अवलोकन

(3) सहभागी अवलोकन एवं असहभागी अवलोकन

(4) संरचित अवलोकन एवं असंरचित अवलोकन

(5) प्रत्यक्ष अवलोकन एवं अप्रत्यक्ष अवलोकन

(6) स्वाभाविक अवलोकन एवं अस्वाभाविक अवलोकन

(7) सामान्य अवलोकन एवं असामान्य अवलोकन

उपर्युक्त प्रकारों का दो भागों में वर्गीकरण भी किया जाता है। उन सभी प्रकारों के नाम भले ही अलग–अलग हो, परंतु अधिकतर प्रकार मिलते–जुलते ही हैं। कुछ प्रकार ऐसे भी है, जिनमें नाम भिन्नता के अलावा कोई अंतर नहीं। इसलिए उन सबका वर्णन करने की आवश्यकता नहीं है। अवलोकन के कुछ महत्वपूर्ण प्रकारों का वर्णन अग्रलिखित है:

(1) व्यक्तिगत अवलोकन और सामुहिक अवलोकन :

जिसमें अवलोकनकर्ता स्वयं अपने वैयक्तिक स्तर पर जाकर किसी घटना का या स्थल का अवलोकन करते हुए सामग्री संकलित करता है, तब उसे व्यक्तिगत अवलोकन कहते है। व्यक्तिगत अवलोकन भी दो प्रकार का होता है। नियंत्रित अवलोकन और

अनियंत्रित अवलोकन। परंतु सामुहिक अवलोकन को नियंत्रित एवं अनियंत्रित अवलोकन का मिश्रण भी कहते है। जब अनेक विषयों के विशेषज्ञ एक ही घटना का एक साथ अवलोकन करते है, तब उसे सामुहिक अवलोकन कहते है। इसे सहकार्यात्मक (Co operative Observation) तथा इसका अंतर्विद्याशाखीय (Interdisciplinary Research) शोध अध्ययन में अधिक उपयोग होता है।

(2) नियंत्रित अवलोकन और अनियंत्रित अवलोकन :

अवलोकनकर्ता स्वयं अपने वैयक्तिक स्तर पर जाकर किसी घटना का या स्थल का अवलोकन करते हुए सामग्री संकलित करता है; तब उसे नियंत्रित अवलोकन कहते है। इसमें जब अवलोकन की संपूर्ण प्रक्रिया पूर्व निर्धारित योजना के अनुसार की जाती है। घटना का स्वरूप क्या है, कैसा है तथा कौनसे मुद्दों को लेकर अवलोकन करना है यह सब पूर्व नियोजित या पूर्व निर्धारित होता है। तब इसे नियंत्रित अवलोकन कहते है। नियंत्रित अवलोकन में पूर्व नियोजित या पूर्व निर्धारित मुद्दों के अनुसार अवलोकन करते समय उसमें अन्य मुद्दों का विचार नही किया जाता। लेकीन यह सब बाते पूर्व निधारीत न हो और समय पर या स्थल पर जो मिले, जैसा मिले उसका अवलोकन जब किया जाता है तब वह अनियंत्रित अवलोकन होता है। नियंत्रित अवलोकन में दो प्रकार का नियंत्रण होता है:

(1) अवलोकनकर्ता पर नियंत्रण

(2) सामाजिक घटना पर नियंत्रण।

अवलोकनकर्ता अगर चाहता है कि उसके अध्ययन पर किसी बाहरी घटक, निजी या व्यक्तिगत प्रभाव न पडे तब अध्यनन के लिए अनिवार्य होता है कि अवलोकनकर्ता स्वयं अपने ऊपर नियंत्रण को स्विकार करता है। इसलिए वह पूर्व नियोजित एवं पूर्व निर्धारित योजना बनाकर उसके अनुसार ही अवलोकन करता है। पूर्व निर्धारित योजना के बाहर जाकर वह कुछ भी नहीं करता। तब वह अवलोकनकर्ता पर नियंत्रण होता है। परंतु जब सामाजिक घटनाओं को सामाजिक परिस्थिती के अंतर्गत नियंत्रित करने का प्रयास किया जाता है तब वह सामाजिक घटना का नियंत्रण होता है। अधिकतर सामाजिक घटनाओं की वास्तविकता परखने के लिए घटना स्थल पर ही उसका निरीक्षण किया जाता है। इसलिए अधिकतर सामाजिक समस्याओं का अध्ययन अनियंत्रित अवलोकन से ही किया जाता है। अनियंत्रित अवलोकन से घटना का सूक्ष्म अध्ययन किया जा सकता है। इसके द्वारा किया गया अवलोकन स्वाभाविक रूप में होता है। इसलिए सामाजिक क्षेत्र की

समस्याओं का अध्ययन करने के लिए अनियंत्रित अवलोकन का महत्व अधिक माना जाता है।

(3) सहभागी अवलोकन एवं असहभागी अवलोकन : सहभागी एवं असहभागी अवलोकन को अनियंत्रित अवलोकन का ही प्रकार माना जाता है। जिस सामाजिक समूह का अध्ययन करना हो उस समूह के सदस्यों के साथ अवलोकनकर्ता एक सदस्य बनकर सहभागी होता है और अपने अध्ययन के उद्देश्य को गुप्त रख कर स्वयं निरीक्षण करता है तब उसे सहभागी अवलोकन (participant observation) कहते है। ऐसा माना जाता है कि इस प्रकार का प्रारंभ मानव विज्ञान मे आदिवासीयों के अध्ययन से हुआ है। किसी सामाजिक समूह की दैनिक गतिविधियों का सूक्ष्म अध्ययन करने के लिए अवलोकनकर्ता स्वयं भी सदस्य के रूप में भाग लेता है। उनके सुख–दुख में भी सहभागी होता है। उस सामाजिक समूह के अन्य सदस्य भी उसको अपना एक सदस्य मानते है। इसमें अवलोकनकर्ता की भूमिका अहं होती है। किसी विशिष्ट समूह के रहन–सहन, रिती–रिवाज, सण त्यौहार आदि का अंतर्बाह्य गहराई से सूक्ष्म अवलोकन करने के लिए सहभागी अवलोकन एक अत्यंत उपयुक्त एवं महत्वपूर्ण साधन है।

सहभागी अवलोकन की मर्यादा या दोष दूर करने के लिए असहभागी अवलोकन का उपयोग किया जाता है। इसमें अवलोकनकर्ता सामाजिक समूह का सदस्य नहीं बनता नही उनकी गतिविधियों में सहभागी नहीं होता। उनसे अलिप्त रहकर ही निरीक्षण करता है। इसमें जिस सामाजिक समूह का अध्ययन करना है उस समूह से दूर रहकर ही तटस्थता से एक दर्शक के रूप में उपस्थित रहकर निरीक्षण किया जाता है; तब उसे असहभागी अवलोकन (non-participant observation) कहते है। कभी–कभी सामाजिक जीवन में ऐसी परिस्थिती आती है कि किसी सामाजिक समूह में उनका सदस्य बनना या उनकी गतिविधियों मे सहभागी होना असंभव होता है। ऐसी स्थिती में असहभागी अवलोकन उपयुक्त होता है। परंतु इसमें केवल बाह्य लक्षणोंकही अवलोकन कर सकते है। आंतरिक संबंधों की गहराई से जानकारी उपलब्ध नहीं हो सकती। परंतु इसमें स्वतंत्र, वस्तुनिष्ठ एवं निष्पक्ष अध्ययन हो सकता है।

कभी–कभी अवलोकनकर्ता न चाहते हुए भी अपने आप को सहभागी होने से रोक नही पाता अथवा कुछ जानकारी सहभागी न होते हुए प्राप्त की; अब कुछ जानकारी सहभागी होकर ही प्राप्त की जा सकती है; तब अवलोकनकर्ता पूर्ण रूप से सहभागी नही; और पूर्ण रूप से अलिप्त भी नही रहता। ऐसी अवस्था को अर्ध–सहभागी अवलोकन (quasi-

participant observation) कहते है। सहभागी एवं असहभागी अवलोकन का ही एक उपप्रकार अर्ध सहभागी अवलोकन होता है। इसे अवलोकन का यह एक मध्यम मार्ग भी कह सकते है। जब पूर्ण सहभागिता और पूर्ण अलिप्तता दोनो ही असंभव या अव्यवहारिक हो तब इस मध्यम मार्ग का अनुसरण करना चाहिए।

(4) संरचित अवलोकन एवं असंरचित अवलोकन : जिस घटना का अवलोकन करना हो, उसका निरीक्षण कब, कहां, कैसे, क्यों, किसने करना है? इन प्रश्नों का स्पष्टीकरण अवलोकन करने से पहले ही निर्धारित करना संरचित अवलोकन होता है। इसमें जिस विशिष्ट हेतु से अवलोकन करना है; उसी के लिए ही अवलोकन किया जाता है। इसका स्वरूप भी नियंत्रित अवलोकन के समान ही होता है। असंरचित अवलोकन मे लचिलापन होता है और संरचित अवलोकन के विपरीत प्रक्रिया होती है। ऐन वक्त पर इसमे कोई भी परिवर्तन किया जाता है। इसमे पूर्व निर्धारित या निश्चित कुछ भी नही होता। पूर्व तैयारी भी करनेकी आवश्यकता नही होती। जिस तरह की परिस्थिती उपलब्ध होगी उसके अनुसार निर्णय बदले जा सकते है। इसमे पूर्व तैयारी करने की कोई आवश्यकता नहीं होती। जिस तरह की परिस्थिति उपलब्ध होगी उसके अनुसार निर्णश्घटनानुक्रम के अनुसार ही घटनाओं का अवलाकन करते हुए उनका वर्णनात्मक आलेख बनाकर उनका रिकॉर्ड बनाया जाता है। इस लिए इसे अनियंत्रित अवलोकन भी कहा जा सकता है।

(5) प्रत्यक्ष अवलोकन एवं अप्रत्यक्ष अवलोकन : सामाजिक अनुसंधान मे शोधकर्ता स्वयं जब घटना स्थल भेंट देकर प्रत्यक्ष निरीक्षण करता है; तब उसे प्रत्यक्ष अवलोकन कहते है। परंतु शोधकर्ता के लिए हमेशा हर जगह हर समय स्वयं जाकर प्रत्यक्ष अवलोकन करना संभव नही होता। कभी–कभी निरीक्षण के मुद्दों की एक सूची, जिसे निरीक्षण सारणी (observation chart) कहते है बनाकर उसके अनुसार ही निरीक्षण करने के लिए किसी अन्य व्यक्ति से भी अवलोकन करवाया जा सकता है। एक पदनिर्धारण मापनी (rating scale) अथवा पड़ताल सूची (check list) जैसे किसी अन्य साधन द्वारा किसी व्यक्ति को भी अवलोकन करने भेज सकते है, तब उसे अप्रत्यक्ष अवलोकन कहते है।

अवलोकन के अन्य और भी अनेक प्रकार बताए जाते है। परंतु जैसा की पहले ही बताया गया है कि उन सब में समानता होने के कारण सबका स्वतंत्र वर्णन करने की आवश्यकता नहीं है। उपर्युक्त प्रकार शोधकर्ता के लिए समझना अनिवार्य है।

अवलोकन की विशेषताएं :

(1) ज्ञानेंद्रियों का उपयोग करना : अवलोकन या निरीक्षण में व्यक्ति की पांचो ज्ञानेंद्रियों के अलावा अंतःचक्षु का भी उपयोग हो सकता है। सबसे अधिक आँखो का और वाणी (जिव्हा) का उपयोग होता है। परंतु अंतःचक्षु का उपयोग शोध कर्ता की अभियोग्यता, अंतःप्रेरणा, सोच, एवं निर्णय क्षमता पर निर्भर होता है।

(2) आनुभविक अध्ययन (Empirical Study) : शोधकर्ता अपने अनुभव के आधार पर प्राप्त सूचना का अर्थ निर्वचन करता है। यहां कल्पना का कोई स्थान नहीं होता। प्रत्येक व्यक्ति के अनुभव भिन्न–भिन्न होने के कारण उनकी सोच भी भिन्न–भिन्न होती है तथा किसी घटना या प्रसंग को देखने का उनका अपना विशिष्ट नज़रिया होता है। अतः जिनके अनुभव अधिक उतनी ही सोच व्यापक होती है और उतनी ही निर्णय क्षमता मज़बुत होती है। इससे अनुमान लगाने मे मदद मिलती है। अवलोकन मे इसका काफ़ी अच्छा उपयोग होता है।

(3) अवलोकन में सूक्ष्मता (Minuteness in observation) : इसमें घटनाओं का केवल निरीक्षण ही नहीं किया जाता, बल्कि उनका सूक्ष्म एवं गहन अवलोकन भी किया जाता है। इससे यह लाभ होता है कि अपने शोध अध्ययन के लिए जिस सामग्री की आवश्यकता होती है, उसका ही संकलन किया जाता है। अपने शोध अध्ययन के उद्देश एवं घटना का संबंध सोच समझकर अनावश्यक जानकारी को टाला जा सकता है, और अपने शोध उद्देश सफल बना सकता है।

(4) कारण एवं परिणाम संबंध ज्ञात करना (Cause & Effects Relationship) : कुछ शोध अध्ययन में केवल देखने से या निरीक्षण करने से अवलोकन का उद्देश सफल नहीं होता, बल्कि उसके कारणों का भी पता लगाना पडता है। उदाहरण के लिए उत्खनन मे मिली चिजों का अथवा ऐतिहासिक स्थल पर देखी गई चिजों का अवलोकन करते हुए उनके कारणों का भी अनुमान लगाया जाता है। इसका अर्थ यह हुआ है कि कारण एवं परिणाम का संबंध स्थापित करते हुए वास्तविकता का अनुमान लगाना भी निरीक्षण की एक विषेषता होती है।

(5) प्राथमिक प्रदत्त का संकलन करना : निरीक्षण को एक उत्तम साधन मानते हुए इसके समर्थन में यह कह सकते हैं कि इसके माध्यम से जो प्रदत्त का संकलन संकलन किया जाता है, वह प्राथमिक प्रदत्त (primary data) होता है। क्योंकि इसमें निरीक्षक स्वयं घटना स्थल पर जाकर स्वयं अवलोकन करता है। इस प्रकार प्राप्त किए जाने वाले प्रदत्त का स्वरूप प्राथमिक माना जाता है।

(6) यह एक प्रत्यक्ष विधि हैं : इसमें अवलोकनकर्ता स्वयं घटना स्थल पर जाकर प्रत्यक्ष रूप से अध्ययन करता है। प्रत्यक्ष प्राप्त होने वाली जानकारी को अधिक महत्व होता है। इसलिए इसे प्रदत्त संकलन की प्रत्यक्ष विधि (direct method) कहते है।

(7) सोच–समझकर अध्ययन करना : अवलोकनकर्ता घटना का प्रत्यक्ष रूपसे स्वयं निरीक्षण करता है, स्वयं अवलोकन करता है, कारण एवं परिणाम संबंध जोडता है और इन सबके आधार पर वह स्वयं निर्णय लेता है। यह सब अत्यंत सावधानी से और सोच समझकर अध्ययन किया जाता है।

(8) मानवी संबंधों का अध्ययन करना : समाज में लोग दैनिक जीवन में परस्पर व्यवहार करते है। उन मानवी संबंधों का अध्ययन करने के लिए सामुहिक व्यवहारों का अवलोकन करने की आवश्यकता होती है। इससे मनुष्य के परस्पर संबंधों का एवं उनके व्यवहारों का अध्ययन किया जाता है।

(9) पक्षपातरहित अध्ययन करना : निरीक्षण को निष्पक्ष अवलोकन कहा जा सकता है। क्योंकि अन्य लोंगो द्वारा प्रसारित होने वाली जानकारी जोड़–तोड़ कर प्रसृत होती है। परंतु शोधकर्ता जब स्वयं प्रत्यक्ष रूप से जानकारी हासिल करता है और स्वयं उसकी जांच करता है, तब उसके निष्कर्ष को शोधकर्ता स्वयं ज़िम्मेदार होता है। शोध कार्य में जोड़–तोड़ या पक्षपात करने को कोई स्थान नहीं होता है।

(10) वैज्ञानिक आधार (direct method) : स्वयं अपनी आँखो से देखी गई घटना का अवलोकन करते हुए शोधकर्ता उसकी भली–भाँति जांच पडताल करता है। दूसरों के कथन पर निर्भर न रहते हुए घटना का स्वयं तटस्थता से एवं वास्तविक दृष्टि से वैज्ञानिक आधार पर अवलोकन करता है और उसकी वैज्ञानिक पड़ताल करता है। इसे वैज्ञानिक सुनिश्चितता कहते है।

(घ) पदक्रम निर्धारण मापनी (Rating Scale) :

जिसका मापन करना है; उसके विद्यमान अंशो का अनुक्रम (rating) लगाकर उसके अंतर्निहित गुणों का स्थन निश्चित करने की प्रक्रिया का पदक्रम निर्धारण मापनी कहते है। पदक्रम निर्धारण मापनी एक ऐसा साधन है, जिससे यह ज्ञात किया जा सकता है कि किस व्यक्ति में किसी विशेष गुण का कितना अंश या अनुपात मौजुद है। इससे न केवल किसी व्यक्ति के गुण विशेष का मापन किया जाता है, बल्कि प्रलेख, घटना, कार्यक्रम, वस्तु या मूल्यों का भी पदक्रम निर्धारण कर सकते है। जिसका मूल्यांकन करना होता है,

उसके गुण मूल्यों का क्रम निर्धारित करते हुए उसके आधार पर उसका निरीक्षण अथवा विश्लेषण किया जाता है। पदक्रम निर्धारण मापनी के भिन्न–भिन्न आधार होते हैं, जो निम्न प्रकार के है:

पदक्रम निर्धारण मापनी के प्रकार :

(1) संख्यात्मक क्रम निर्धारण

(2) वर्णात्मक क्रम निर्धारण

(3) शब्दात्मक क्रम निर्धारण

(4) वर्णनात्मक क्रम निर्धारण

पदक्रम निर्धारण की प्रक्रिया अत्यंत सरल होती है। इसमें अंतर्निहित गुणों को उनके महत्व के अनुसार भारांक (weightage) दिए जाते है और उसके आधार पर उनका एक अनुक्रम निश्चित किया जाता है। और उस अनुक्रम से उनका स्थान निश्चित किया जाता है। यह स्थान निर्धारित करते समय वह भिन्न–भिन्न बिंदू की मापनी बनाई जाती है। यह बिंदु सामान्यतः विषम संख्या में होते है। उदाहरण के लिए हिंदी भाषा के प्रचार–प्रसार मे फ़िल्मों का योगदान कितना है? यह जानने के लिए पांच बिंदु वाली मापनी तैयार करते समय उसका भारांक इस तरह निर्धारित किया जाएगा–

पूर्णतः = 4, अच्छा = 3, साधारण = 2, अल्प = 1, कुछ भी नही = 0

इसमें शून्य से चार तक पांच बिंदू है। जब फ़िल्मों के योगदान का भारांक जब अंकों में दर्शाया जाता है, तब उसे संख्यात्मक क्रम निर्धारण मापनी कहते है। यही भारांक यदि वर्ण या अक्षरों मे दर्शाया जाए उदाहरण के लिए पूर्णतः = अ, अच्छा = ब, साधारण = क, अल्प = ड, कुछ भी नही = इ; तब उसे वर्णात्मक क्रम निर्धारण मापनी कहते है। वर्णो द्वारा दर्शाया गया पदक्रम निर्धारण श्रेणी बद्ध क्रम निर्धारण होता है। यही भारांक यदि शब्दों मे दर्शाया जाए; उदाहरण के लिए पूर्णतः, अच्छा, साधारण, अल्प, कुछ भी नही; तब उसे शब्दात्मक अथवा लेखा चित्रीय क्रम निर्धारण मापनी कहते है। यह शब्द दूसरे भी हो सकते है। वाक्यांशों द्वारा दर्शाया गया पदक्रम निर्धारण वर्णणात्मक क्रम निर्धारण होता है और अंको द्वारा दर्शाया गया पदक्रम निर्धारण संख्यात्मक क्रम निर्धारण होता है। क्रम निर्धारण में पांच बिंदु के बजाय सात बिंदु की भी श्रेणी बनायी जा सकती है। संख्यात्मक क्रम निर्धारण मे प्रदत्त विश्लेषण सांख्यिकिय सूत्रों से किया जा सकता है। इस प्रकार के प्रदत्त से अत्यंत वस्तुनिष्ठ विश्लेषण किया जाता है। इसमें व्यक्तिनिष्ठता को कोई अवसर नहीं मिलता।

(ङ) समाजमिती तकनिक (sociometirc technique) :

इस विधि से सांख्यिकीय आंकडों में भी जानकारी प्राप्त की जा सकती है। किस व्यक्ति का कितने अंश तक स्वीकार किया जाता है? समूह के सदस्यों की आपसी संबंधों की स्थिति कैसी है? समूह की अंतर्गत संरचना कैसी है? समूह के कितने सदस्य लोकप्रिय है और कितने अप्रिय है? समूह मे कितने उपसमूह है? आदि प्रश्नों के उत्तर जानने के लिए यह साधन उपयुक्त होता है। उदाहरण के लिए इस विधि से एक समूह की 11 छात्रों को वे किसके साथ खेलना चाहते है? और किसके साथ नही खेलना चाहते? यह प्रश्न पूछकर कोई भी पांच छात्रों का चयन करने के लिए बताया गया। जिसके साथ खेलना चाहते है, उसे 1 अंक और जिसके साथ खेलना नही चाहते, उसे 0 अंक देने को कहा। प्राप्त आंकडों का वितरण निम्न सारणी मे वर्गीकृत किया गया।

	A	B	C	D	E	F	G	H	I	J	K
A	--	1	1	--	--	1	1	--	--	--	--
B	--	--	1	1	1	--	--	--	1	--	--
C	--	--	--	1	--	1	--	1	--	--	--
D	1	--	1	--	1	--	--	1	1	--	--
E	1	--	1	1		--	1	--	--	--	--
F	--	--	--	--	1	--	--	--	1	--	--
G	--	1	--	1	--	--	--	--	--	--	1
H	--	--	1	--	1	--	1	--	--	1	--
I	1	--	--	--	--	1	--	--	1	--	1
J	--	--	--	1	--	1	--	--	1	1	--
K	--	--	--	--	1	--	1	--	1	--	--
TTL	3	2	5	5	5	4	4	2	6	2	2

आ.क्र. 15 समाजमितिय तकनिक

उपर्युक्त सारणी मे समूह के सभी 11 सदस्यों मे सबसे अधिक I को 6 अंक मिले। इसका अर्थ समूह के सभी सदस्यों से I का संबंध सबसे अधिक अच्छा है। इस प्रकार के चयन को समाजमितीय मेट्रिक्स (sociometric matrix) कहते है। इस सारणी को 11 x 11 की तालिका भी कह सकते है। इस प्रकार का चयन समाज आलेख (sociogram) से भी किया जाता है। समाज आलेख मे समूह के सभी सदस्यों द्वारा एक

दूसरें के प्रति किए गए पसंद का एक आलेख बनाया जाता है। यह आलेख मे प्रत्येक सदस्य अपनी पसंद को एक तीर द्वारा दर्शाता है। जो सदस्य जिसे पसंद करता है; वह उसके तरफ दिए गए रेखा पर तीर का निशाण लगाता है।

आकृति क्रमांक 16 मे A ने E को और E ने A को, C ने D को पसंद किया; परंतु D ने C को पसंद नहीं किया। C ने B को और B ने C को पसंद नहीं किया। D ने B को पसंद किया परंतु B ने D को पसंद नहीं किया। इस तरह का चित्र दिखाई देता है। इस तरह से समाज आलेख द्वारा किसी निष्कर्ष तक पहुंच सकते है। उपर्युक्त आकृति से किसने किस–किस को पसंद किया है तथा किसने किस–किस को नापसंद या अस्विकृत किया इसका विवरण बारंबारता वितरण से सांख्यिकीय आंकडों में परिवर्तित किया जाता है। बाद में उसका उनका सांख्यिकीय सूत्रों से विश्लेषण किया जाता है। इससे समूह के सभी सदस्यों के अंतर्वैयक्तिक संबंध (interpersonal relationship) को ज्ञात किया जा सकता है। परंतु इससे सदस्यों की अत्यंत सीमित संख्या का ही अध्ययन कर सकते है। अर्थात जिस समूह में अधिकतम 20 सदस्यों का अध्ययन किया जा सकता है। अधिक संख्या के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता। तथापि यह विधि समाजमितीय मेट्रिक्स की तुलना मे अधिक लाभदायक होती है, ऐसा माना जाता है।

(ग) समाजमितीय सूचकांक (sociomatric index) :

समाजमिती की इस पद्धति में भी समूह के सभी सदस्यों के अंतर्वैयक्तिक संबंध (inter- personal relationship) को ज्ञात किया जा सकता है। इसके लिए इसमे कुछ सूचकांक ज्ञात किए जाते है। ऐसे सूचकांक अनेक प्रकार के होते है; परंतु उसमें सबसे अधिक प्रचलित, सरल एवं लाभदायक जो सूचकांक माना जाता है, यह अंक जितना अधिक, उतना उन सदस्यों में आपसी संबंध अथवा पसंद क्रम अधिक होता है और यह अंक अगर कम होगा तो सदस्यों में आपसी संबंध अथवा पसंद क्रम भी कम होता है। इस तरह समाजमितीय विधि से शोध अध्ययन किया जाता है। इस तरह से इसमे निसरे एक प्रकार से भी समूह के सभी सदस्यों के अंतर्वैयक्तिक संबंध का अध्ययन किया जा सकता है, जिसे समाजमितीय सूचकांक (Sociometric index) कहते हैं। समाजमितीय सूचकांक से अध्ययन करने के लिए एक विशिष्ट प्रकार का गणितीय फॉर्म्युले का उपयोग किया जाता है।

इस तरह के स्वनिर्मित उपकरणों (Self made tools) द्वारा प्रदत्त संकलन कर शोध अध्ययन पूर्ण किया जाता है। आगे पूर्व निर्मित उपकरणों (Readymade tools) का वर्णन है।

2. पूर्वनिर्मित उपकरण (readymade tools)

इस प्रकार के उपकरण किसी अनुसंधान संस्था द्वारा, विशेषज्ञों द्वारा, वैधता एवं विश्वसनियता का परीक्षण करते हुए बनाए जाते है। इस प्रकार के उपकरणों को वस्तुनिष्ठ (objective Tools) उपकरण भी कहते है। इसलिए इनको प्रमाणित कसौटीयां (Stsndardized Tests) उपकरण कहा जाता है। ऐसे प्रमाणित उपकरण सामान्यतः मनोविज्ञान के क्षेत्र में तैयार उपलब्ध मिलते हैं। इसलिए इन उपकरणों को मनोवैज्ञानिक परीक्षण (Stsndardized Tests) कहते है। इन परीक्षणों का अधिक तर उपयोग मनोविज्ञान एवं शिक्षाशास्त्र मे किया जाता है। ऐसे उपकरणों का वर्गीकरण विभिन्न आधार पर किया जाता है। इन उपकरणों की वर्गीकरण सूची निम्न लिखित है।

2.1 क्रियान्वयन कसौटी के आधार पर 2.2 प्राप्तांक कसौटी के आधार पर

2.3 समय सीमा कसौटी के आधार पर 2.4 एकांश स्वरूप कसौटी के आधार पर

2.5 उद्देश कसौटी के आधार पर 2.6 प्रमाणीकरण कसौटी के आधार पर

उपकरणों की इस वर्गीकृत सूची के अलावा अन्य प्रकार से भी वर्गीकरण किया जाता है जिनका उल्लेख प्रदत्त सामग्री संकलन की विधियों की रूप में किया जाता है। यहां उन्हें प्रदत्त सामग्री संकलन के उपकरण कहा जाता है वे सभी वर्गीकृत प्रकार निम्नलिखित हैः

2.1 क्रियान्वयन कसौटी के आधार पर :

(1) वैयक्तिक परीक्षण (Individual Test)

(2) समूह परीक्षण (Group Test)

जब एक समय पर एक ही व्यक्ति का परीक्षण किया जाता है, तब उसे वैयक्तिक परीक्षण कहते है। उदाहरण के लिए परामर्शदाता व्दारा किया गया परीक्षण और जब एक समय पर एक साथ अनेक व्यक्तियों का परीक्षण किया जाता है, तब उसे समूह परीक्षण कहते है। उदाहरण के लिए कक्षा मे छात्रों का किया गया परीक्षण।

2.2 प्राप्तांक कसौटी के आधार पर :

(1) वस्तुनिष्ठ परीक्षण (Objective Test)

(2) आत्मनिष्ठ परीक्षण (Subjective Test)

किसी परीक्षण मे दिए गए उत्तरों को अंक देने का प्रावधान होता है। उदाहरण के लिए सही/गलत बताईए, बहुविकल्प एकांश (Multiple Choice items), ऐसे परीक्षण को वस्तुनिष्ठ परीक्षण कहते है तथा किसी परीक्षण मे लघु उत्तर या लंबे उत्तर वाले प्रश्न होते है, जिसे निबंधात्मक परीक्षा कहते है, उसके प्राप्तांको पर मूल्यांकनकर्ता के अपने विचारों का प्रभाव पडता है। इसलिए उसे आत्मनिष्ठ परीक्षण कहते है।

2.3 समय सीमा कसौटी के आधार पर

(1) क्षमता परीक्षण (Ability Test)

(2) गति परीक्षण (Speed Test)

जिसमें एकांशों का कठिनता स्तर (Difficulty Level) भिन्न भिन्न होता है। इससे व्यक्ति के किसी घटना, स्थान, तथ्य, वस्तू आदि के बारे मे ज्ञान का मापन किया जाता है। उसे क्षमता परीक्षण कहते है। और जिसमें सभी एकांश (Items) का उत्तर देना सरल होता है, परंतु उत्तर देने के लिए विशिष्ट समय की सीमा निर्धारित की जाती है, और उसी निर्धारित समय मे उत्तरदाता को अपने उत्तर पूर्ण करना पड़ता है। ऐसे परीक्षण को गति परीक्षण कहते है। इसमे एकांशों का कठिनता स्तर (Difficulty Level) निम्न, समान एवं आसान होता है। कोई व्यक्ति किसी कार्य को कितने समय मे पूर्ण कर सकता है; यह जानने के लिए यह परीक्षण का उपयोग किया जाता है। परंतु यहां एक बात स्पष्ट करना अनिवार्य है; कि क्षमता या गति का परीक्षण करने की कोई भी कसौटी को परिपूर्ण मानना कठिन है।

2.4 एकांश स्वरूप कसौटी के आधार पर

(1) शाब्दिक परीक्षण (Verbal Test) : जब पढ़ने–लिखने की क्षमता का मापन करना हो, तब उत्तरदाता के स्वयं निर्देश पढ़कर एवं समझकर एकांशो का उत्तर देना पडता है। इसे शाब्दिक परीक्षण कहते है। उदाहरण के लिए जलोटा सामूहिक सामान्य बुद्धि परीक्षण (Jalota General Intelligence Test) अथवा मेहता सामान्य बुद्धि परीक्षण (Mehta General Intelligence Test)

(2) अशाब्दिक परीक्षण (Non-Verbal Test) : जब निर्देश में भाषा का प्रयोग होता है, परंतु एकांशों मे भाषा का प्रयोग नहीं होता, बल्कि चित्रों की मदद से कोई समस्या दिखाकर उसके उत्तर भी चित्रों द्वारा ही देने पडते है, तब उसे अशाब्दिक परीक्षण कहते है। उदाहरण के लिए रैवन्स प्रोग्रेसिव मॅट्रिसेस (Raven's Progressive Matrices)

(3) गुण दर्शन परीक्षण (Performance Test) : जब निर्देश में भाषा का प्रयोग होता भी है या नही, अथवा चित्राभिनय (Pantomime), एवं हाव–भाव (Gestures) का प्रयोग होता है। परंतु एकांशों मे भाषा का प्रयोग नहीं होता, बल्कि प्रत्यक्ष वस्तू (Objects) रखकर उसमे जोड तोड (Manipulation) करके उसके उत्तर देने पडते है। तब उसे गुणदर्शन परीक्षण (Performance Test) कहते है। उदाहरण के लिए रैवन्स प्रोग्रेसिव मॅट्रिसेस (Raven's Progressive Matrices) या पास ॲलॉग परीक्षण (pass along test) अथवा घन रचना परीक्षण (cube construction test)

(4) अभाषिक परीक्षण (Non-language Test) : निर्देश हो या एकांश हो कही भी भाषा का प्रयोग बिलकुल ही नहीं होता मात्र संकेत के ही उत्तर प्राप्त किए जाते है। तब उसे अभाषिक परीक्षण कहते है। उदाहरण के लिए कॅटल्स कल्चर फ्री (Cattell's Culture Free Test) या फेअर बुद्धि परीक्षण (Fair Intelligence Test)

2.5 उद्देश कसौटी के आधार पर :

(1) बुध्दिमत्ता परीक्षण (Intelligence Test) : बुध्दीमत्ता परीक्षण के उपर्युक्त उदाहरण तो बताए जा चुके है, परंतु उनमे सभी प्रकार का अंतर्भाव नही है। इसमे शाब्दिक, अशाब्दिक, भाषिक, अभाषिक इन सभी प्रकार के परीक्षणों का बुध्दिमत्ता परीक्षण में अंतर्भाव होता है।

(2) अभियोग्यता परीक्षण (Aptitude Test) : जब किसी के भितर छुपी हुई अंतःक्षमता (Potential) का मापन करना हो, तब अभियोग्यता परीक्षण का उपयोग होता है। उदाहरण के लिए Differetial Aptitude Test इस परीक्षण की सहायता से विभिन्न प्रकार की सात क्षमताओं का परीक्षण किया जाता है।

(3) व्यक्तित्व परीक्षण (Personality Test) : व्यक्तित्व के अनेक आयाम होते हैं। वैसे तो उन सब आयामों के स्वतंत्र परीक्षण भी किए जाते हैं। शीलगुण (Trait), अभिरूचि (interest), अभिवृत्ती (attitude), मूल्य (values), समायोजन (adjustment), आदि गुणों को मिलकर संपूर्ण व्यक्तित्व होता है। इन उन सब गुणों का अर्थात संपूर्ण व्यक्तित्व का एकत्रित मापन करने के लिए स्वतंत्र व्यक्तित्व परीक्षण (Personality Test) भी उपलब्ध हैं। परंतु इन स्वतंत्र आयामों का स्वतंत्र मापन करने के लिए स्वतंत्र परीक्षण या मापनियां भी होती है। उदाहरण के लिए बोगार्डस की और लिकर्ट की अभिवृत्ती मापनियां (attitude scales).

(4) उपलब्धि परीक्षण (Achievement Test) : किसी व्यक्ति की किसी विशेष क्षेत्र मे अर्जित नैपुण्यता (Proficiency) का मापन करने के लिए उपलब्धि परीक्षण का उपयोग किया जाता है। भिन्न–भिन्न विषयों के लिए बनाए गए भिन्न–भिन्न परीक्षण उपलब्ध मिलते है।

2.6 प्रमाणीकरण कसौटी के आधार पर

(1) स्वनिर्मित परीक्षण (Sejf made Test) : अनुसंधानकर्ता अपने शोध कार्य के प्रदत्त संकलन के लिए जब स्वयं कोई उपकरण तैयार करता है, तब उसे स्वनिर्मित परीक्षण कहते है। स्थानिक स्तर पर सीमित हेतु से सीमित कार्य के लिए ऐसे परीक्षण बनाए जाते है। ऐसे परीक्षण किसी मापदंड (Norms) के अनुसार किए जाने की संभावना होने की निश्चिती नहीं होती। यद्यपि कभी कभी काम चलाऊ मानक (Norms) बनाकर ऐसे परीक्षण तैयार किए जाते है।

(2) प्रमाणित परीक्षण (Standardized Test) : जब कोई कसौटी किसी एक या अनेक विशेषज्ञों द्वारा बनाए जाते हैं, तब वह वैज्ञानिक विधि को अपनाकर विशिष्ट मापदंड (Norms) का अनुसरण करते हुए तैयार किए जाते है। इस तरह बनाए गये परीक्षण वस्तूनिष्ठ (objective) होते है। इनका मानकीकरण (Standardization) किया जाता है। इसलिए यह विश्वसनिय (objective) तथा वैध (valid) माने जाते है। अधिकांश मनोवैज्ञानिक परीक्षण एवं मापनियां प्रमाणित होती है।

उपकरणों की इस वर्गीकृत सूची के अलावा अन्य प्रकार से भी वर्गीकरण किया जाता है, जिनका उल्लेख निम्न लिखित हैः

व्यक्तित्व परीक्षण (Personality Test)

अभिरूचि परीक्षण (interest scale)

अभिवृत्ति मापनी (attitude scale)

मूल्य (values), समायोजन (adjustment)

आदि गुणों का मापन करने के लिए स्वतंत्र परीक्षण या मापनियां होती है। इसमे निम्न कुछ मनोवैज्ञानिक परीक्षण एवं मापनियों का उल्लेख किया जाता है।

बोगार्डस की अभिवृत्ती मापनी (Borgadus Attitude Scale),

लिकर्ट की अभिवृत्ती मापनियां (Likert's Attitude Scales),

थर्स्टन की अभिवृत्ती मापनियां (Thurstone's Equi-Appering Interval Scale),

विभिन्नता अभिवृत्ती परीक्षण Differetial Aptitude Test,

गुटमॅन की संचयी मापनियां (Guttman Type Cummulative Scales)

फेअर बुद्धि परीक्षण (Fair Intelligence Test)

कॅटल्स कल्चर फ्री (Cattell's Culture Free Test)

रैवन्स प्रोग्रेसिव मॅट्रिसेस (Raven's Progressive Matrices)

पास ॲलॉग परीक्षण (pass along test)

घन रचना परीक्षण (cube construction test)

जलोटा सामूहिक सामान्य बुद्धि परीक्षण (Jalota General Intelligence Test)

मेहता सामान्य बुद्धी परीक्षण (Mehta General Intelligence Test)